Durga Sah Municipal Library

NAINI TAL

दुर्गासाह म्युनिसिपल पुस्तकालय

नैनीताल

Class No. 891.3

Book No. V78S

Recd No. 5528

सोने का मृग

भिक्खु

न्यू एज पब्लिशर्स प्राईवेट लिमिटेड

प्रथम प्रकाशन—पौष, १८८१ शकाब्द
जनवरी, १९६०

Durga Sah Municipal Library,
NAINITAL.
दुर्गासाह म्युनि... ...ईब्रेरी
नैनी...

Class No. 891·3
Book No. V78S
Received on Oct 62

प्रकाशक :
जे. एन. सिंह राय,
न्यू एज पब्लिशर्स प्राइवेट लि०,
२२, कैनिंग स्ट्रीट,
कलकत्ता-१

गोल मार्केट,
नयी दिल्ली—१

प्रच्छदपट :
अजित गुप्त

मुद्रक :
रनजीतकुमार दत्त,
नवशक्ति प्रेस,
१२३, लोअर सर्कुलर रोड,
कलकत्ता—१४

5528
123, Lower Circular Road
Calcutta - 14

छ रुपये

पूज्य बाबू जी
श्री शिवशंकर जी शर्मा के श्री चरणों में
सादर समर्पित

—भिक्खु

SONE KA MRIG

A Novel

by

BHIKKHU

Price Rs. 6·00 only.

प्रथम शिला

सूरज उगे

गाज की रात

जीवन रोते-रोते सो गया था। सुषमा अलग खाट पर बैठी हारी हुई दृष्टि से कभी उसे देख लेती तो कभी अपने पति देवराज को, जो आँगन में झुँझलाहट से भरा टहल रहा था। हवा में उमस थी और सावनी आसमान में घुटन। उसी आसमान के नीचे सुषमा छितराई बदली-सी नजर आ रही थी।

उसने सन्नाटे को तोड़ते हुए कहा, "अब लेट भी जाओ। इतना गुस्सा ठीक नहीं।"

देवराज चुप रहा। उसने पाँच बरस के जीवन को कठोर दृष्टि से देख कर उस दृष्टि को अँधेरे में समेट लिया। सुषमा ने फिर धीमी आवाज में कहा, "तुम इस बच्चे से भाग कर जाओगे भी कहाँ? यह तुम्हारा ही छोटा भाई है। मैं तो पराए घर की हूँ। मैं इसे अपना सकती हूँ तो तुम क्यों नहीं अपना सकते।"

देवराज ने सुषमा की ओर देखे बिना ही कहा, "मुझे इससे नफरत है। इसे देख कर मुझे उस सौतेली मा की याद आती है, जिसने मुझ से मेरे पिता तक को छीन लिया। उसने मुझे मा-बाप के सुख को जानने ही न दिया और··· और यह मुझे पत्नी के सुख से वंचित कर रहा है।"

सुषमा ने कोमल स्वर में कहा, "तुम्हें इस दूध पीते बच्चे से ईर्ष्या होती है।"

देवराज उत्तेजित स्वर में बोला, "ईर्ष्या ही सही, क्योंकि मेरी जिन्दगी में ऐसा कभी कुछ रहा ही नहीं जिससे किसी अभागे से अभागे को भी ईर्ष्या होती।"

सुषमा को इस बात से आघात ही लगा। फिर भी वह संयत स्वर में बोली, "पर तुम अपना बदला एक अबोध बच्चे से क्यों ले रहे हो? बदला तुम्हें अपनी सौतेली मा से भी नहीं पिता से लेना चाहिए था। एक अबोध

उम्र के पुरुष से ब्याह करने का चाव उस औरत को कभी न रहा होगा जिसके आगे एक दस साल का बच्चा भी रहा हो। उसे उस पुरुष से घृणा ही हो सकती थी और उसे सताने में ही उसे सुख मिल सकता था।"

देवराज ने घृणा के साथ कहा, "पर उस पुरुष से बदला न लेकर उसने मुझ से लिया। और अब मैं भी अपना बदला......"

सुषमा खाट से उठ खड़ी हुई। पास आकर बोली, "तुम पुरुष हो। दुर्बल से बदला लेना तुम्हें न सोभेगा। वह स्त्री थी, तुम्हें चोट पहुँचा कर ही शायद वह अपना बदला ले सकती थी। सच जानो, स्त्री उस पुरुष को कभी क्षमा न करेगी जो उसके स्वप्न को ही तोड़ देता है।"

देवराज ने सुषमा को कठोर दृष्टि से देखते हुए कहा, "स्वप्न पुरुष के भी हो सकते हैं। आज मैंने जीवन को इसीलिए पीटा कि वह मेरे सबसे मनोरम स्वप्न से खिलवाड़ करता आ रहा है। तुम अगर उससे घृणा कर सको तो मैं उसे इस घर में आसानी से सह सकूंगा।"

सुषमा सन्न रह गयी, देवराज ने नश्तर जैसी आवाज में कहा, "मुँह क्यों उतर गया। उसका सुख ही चाहती हो न तुम? तो उस सुख के लिए ही घृणा करो।"

सुषमा ने टूटे स्वर में कहा, "तुम एक बच्चे के साथ इतने निर्दय कैसे हो सकते हो?"

देवराज ने अपने व्यंग्य को अट्टहास में मुखरित करने की चेष्टा की, पर असफल रहा। चेहरे की विकृति को गूढ़ करता हुआ बोला, "तुम पत्नी हो कर भी तो पति के साथ निर्दय हो।"

सुषमा पति को सूनी आँखों से देख कर अपने आप में सिमट गयी। उसका चेहरा जो अब तक निरीह था, कठोर हो उठा। उसने दृढ़ता के साथ कहा, "मैं तुम्हारी बात मान लूँगी। पर पहले मेरी सूनी गोद को भर दो। मुझे कुछ ऐसी पूर्णता दे दो जिसमें मेरी कल्पनाएँ आकार पा सकें।"

देवराज का मुँह तमतमा उठा, पर बोला कुछ न गया। कुछ कहने के प्रयत्न में दाँत किटकिटा कर ही रह गया। सुषमा फिर अपनी चारपाई पर चली आई। देवराज उसी तरह आँगन में घूमता रहा।

तभी जीवन घबड़ाया-सा जाग उठा। भयभीत स्वर में बोला, "भाभी, भाभी! मुझे अपने पास सुला लो। मुझे डर लगता है।"

भाभी उस स्वर से खिचीं-सी उसकी खाट की ओर बढ़ी पर हठात् बीच ही में रुक गई। स्वर को कठोरता का आवरण देती हुई बोली, "चुपचाप सो जाओ जीवन। मुझे रात में तो चैन लेने दो!"

जीवन सन्न रह गया। रोना चाहा, पर रो भी न पाया। सुषमा ने पति से कोमल स्वर में कहा, "मुझे अकेले अच्छा नहीं लग रहा है। आओ, तुम ही मुझे सुला दो।

देवराज कोई कठोर उत्तर देना चाहता था, पर सुषमा का दीन स्वर सुन कर चुपचाप उसकी शैय्या पर चला आया।

सावनी बदलियाँ सघन होती जा रही थीं। थोड़ी देर में उमस कुछ कम जान पड़ने लगी। बीच-बीच में ठंडी हवा का झोंका भी आ जाता। लगता कहीं बदलियाँ पिघल कर पवन को शीतलता दे रही हैं। देवराज कुछ वैसे ही स्पर्शों को पा कर सो गया था। बदलियाँ जाग ही रही थीं। सुषमा भी सो न पाई थी। धीमे से वह अपनी खाट से उठी। देवराज सोया ही रहा। वह जीवन के पास आयी। जीवन औंधे मुँह पड़ा था। उसने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा। जीवन को जैसे उस स्पर्श की प्रतीक्षा थी। वह 'भाभी' कह कर उसकी बाँह से लिपट गया।

सुषमा ने प्यार से दुलरा कर पूछा, "सोए नहीं जीवन!"

जीवन ने सहसा चू पड़े आँसुओं से भाभी का हाथ भिगो कर कहा, "अकेले डर लगता है भाभी!"

सुषमा जीवन की बगल में लेट गई, बोली, "अब तो नहीं लगता डर?"

जीवन ने भाभी के वक्ष में अपना मुँह छिपा लिया जैसे आँधी-पानी से बचने के लिए कोई विहग-शावक अपने नीड़ में घुस गया हो।

जीवन कुछ देर उसी अवस्था में रहा। फिर सहसा बोला, "भाभी, तुम भैया को अपने पास मत सुलाया करो।"

भाभी को वह चर्चा अच्छी न लगी। रुखाई से कह दिया, "सो जाओ जीवन!"

जीवन क्षण भर चुप रह कर फिर बोला, "मुझे वह अच्छा नहीं लगता भाभी !"

सुषमा ने भी कहना चाहा कि अच्छा मुझे भी नहीं लगता, पर जाने किसने मुखरता पर बिराम लगा दिया।

जीवन उसके मौन से उत्साहित हो कर बोला, "भाभी, भैया तुम्हें तंग करते हैं न ? मुझे छोड़ कर अब तुम कभी उनके पास मत सोना भाभी ?"

भाभी के संयम की ही जैसे परीक्षा थी। जीवन तो स्त्री-पुरुष के संबंधों को कुछ भी नहीं समझता। फिर भी जैसे वह उसकी विडम्बना को ही समझ कर यह सब कह रहा हो। भाभी स्वयं को सम्हाल न पाई। जीवन को अपने वक्ष में समेटती हुई प्यासी धरती-सी चटक उठी। कहना चाहा—हाँ, वे मुझे तंग करते हैं, बेहद तंग करते हैं। मुझे आग से भर देते हैं। मुझे झुलसा कर छोड़ देते हैं। मैं उनसे तुम-सा एक खिलौना माँगती हूँ। पर वे मुझे वह भी नहीं दे सकते। वे मुझे बेहद सताते हैं। मेरी हत्या ही करते हैं। तुम बड़े हो जाओ जीवन ! तुम जल्दी से बड़े हो जाओ। मैं तब तुम्हारे साथ ही रहूँगी। वे मुझे अतृप्ति से भर देते हैं। मैं उनसे सचमुच ही दूर-बहुत दूर रहना चाहती हूँ जीवन !

पर वह यह सब कह न पाई !

सुषमा की वेदना के ज्वालामुखी को बुझाने आँखें पिघल पड़ीं। आसमान में भी गड़गड़ाहट हुई। बदलियाँ तरल होकर धरती की ओर तिरने लगीं। जीवन ने कहा, "भाभी बूँदें।"

सुषमा ने सुना ही नहीं। बिजली ने चमक कर उन बूँदों को दिखाना भी चाहा, पर उसने देखा ही नहीं। बदलियाँ चीवर उतार प्रपात-सी झरने लगीं। जैसे धरती पर ही उनका प्रियतम हो, जिसे बिजली चमक-चमक कर राह दिखा रही हो। बदलियों की खुशी की किलकारियाँ नभ को बधिर करने लगीं। लगा आसमान फट चला या कि बिजली ही टूट पड़ी।

देवराज की भी आँखें खुल गईं। उसने अपने पार्श्व को रिक्त देखा। भींगी हुई खाट का वह रिक्त पार्श्व बिजली की चमक में उसे धरती की पानी

भरी दरार-सा दिखाई पड़ा। उसने दृष्टि घुमाई। सुषमा जीवन की शैय्या पर थी। वह चीख उठा, "सुषमा!"

सुषमा को लगा कि उसके सिर पर ही गाज गिरी। वह जीवन को छोड़ कर उठ खड़ी हुई। जैसे गाज ने उसके दो टुकड़े कर दिए हों और दूसरा टुकड़ा खाट पर ही रह गया हो।

सड़क का कुत्ता

जीवन बढ़ रहा था। सन्देह, प्यार और घृणा के वातावरण में ही वह सात बरस का हो गया। बस्ती के प्राईमरी स्कूल की दूसरी कक्षा का छात्र था। उसके साथ ही बढ़ई का लड़का तीरथ भी था, जो ग्यारह बरस की उमर में अभी दर्जा दो तक ही पहुँच पाया था। एक दिन वह जीवन से बोला, "बड़े गुमसुम रहते हो यार!"

जीवन क्या जवाब देता। गुमसुम ही रहा। तीरथ ने फिर कहा, तुम अपने को अच्छा लड़का समझते हो, इसी से मिजाज नहीं मिलता।"

जीवन ने कहना चाहा कि तुम बुरे लड़के हो। रोज पिटते हो। रोज झूठ बोलते हो। रोज कक्षा से भागते हो। रोज हिसाब ग़लत लगाते हो। पर उसके डील-डौल का उस पर कुछ ऐसा असर पड़ा कि कह बैठा, "नहीं, तुम तो दर्जे के सब से अच्छे लड़के हो। मानीटर भी तुमसे डरता है।"

तीरथ खुश हो कर बोला, "चलो एक तारीफ करने वाला साथी तो मिला। मुझे तलाश भी थी। एक बात मानोगे!"

जीवन ने सहमते मन से पूछा, "क्या?"

तीरथ ने कहा, "आज खाने की छुट्टी में ही भाग चलें।"

जीवन काँप उठा। तीरथ ने हिम्मत बँधाते हुए कहा, "डरते हो! अरे डर किस बात का! मास्टर जी ज्यादा से ज्यादा मुर्गा बना देंगे। पर भागने में बड़ा मजा आएगा।"

जीवन ने कह दिया, "नहीं, मुझे डर लगता है।"

तीरथ बोला, "देखो हरिया माली के बाग में खूब आम लगे हैं, बड़े मीठे-मीठे। उन्हें तोड़ कर छोटी नहर पर चल कर खाएँगे। तुम्हें कुछ नहीं करना होगा। सिर्फ निगरानी रखना। हरिया को आता देखो तो मुझे इशारा कर देना। मैं पेड़ से कूद कर भाग जाऊँगा।"

जीवन को बहाना मिला, "पर हरिया को तो मैं पहचानता ही नहीं।"

तीरथ गुस्से में भर कर बोला, "तू तो अपने बाप को भी नहीं पहचानता होगा। निकम्मा कहीं का।"

जीवन को बुरा लगा। तमक कर बोला, "मैं तुम्हारे साथ नही जाऊँगा। तुम बुरे लड़के हो।"

तीरथ की आँखों में बदमाशी लहरा उठी, "अच्छा तो देखूँगा। दो दिन में ही तेरी अच्छाई न झाड़ कर रख दी तो मेरा नाम तीरथ नहीं।"

जीवन की नस-नस में उसकी धमकी का आतंक व्याप गया। उसके मन में आया कि मास्टर जी से शिकायत कर दे। पर हिम्मत ने साथ ही न दिया।

तीरथ ने भी अपनी धमकी को सच कर दिखाया। दूसरे दिन तीरथ की हिसाब की किताब गायब हो गई थी, जो जीवन के बस्ते में से मिली। मास्टर जी बड़े बिगड़े। कान उमेंठे। चपत लगाए और अन्त में दर्जे के बीचोंबीच मुर्गा बना कर खड़ा कर दिया।

जीवन अपनी सफाई में मुँह तक न खोल सका। चोर वह साबित हो चुका था। सजा भी उसने भोग ली। पर आँसू एक न बहाया। दर्जे के बाहर जब निकला तो लड़के 'चोर, चोर' कह कर चिढ़ाने लगे। तीरथ ने शरारत के साथ हँसते हुए कहा, "हरिया, माली के बाग के आम मिट्ठे हैं।"

जीवन को किसी बात का जवाब नहीं सूझा। वह सिर झुकाए ग्लानि से भरा घर की ओर चल दिया। जीवन ने दस मिनट के रास्ते को बीस मिनट में तय किया। जब वह घर पहुँचा तो तीरथ को ड्योढ़ी के दरवाजे पर पहले ही से जमा देख कर सन्न रह गया। उसने उसकी ओर से निगाह हटा कर चुपचाप घर में घुसने की कोशिश की। वह जब तीरथ की बगल से

गुजरा तो तीरथ ने उसे ठेलते हुए व्यंग के साथ फिर कहा, "हरिया के बाग के आम मिट्ठे।"

जीवन काँपते कदमों से बढ़ रहा था। तीरथ के ठेलने से वह गिर पड़ा। बस्ता हाथ से छूट गया। धूल झाड़ता हुआ उठा, तो तीरथ चम्पत हो चुका था।

असगुन दरवाजे पर ही हो चुका था। घर में घुसते हुए उसकी हिम्मत साथ छोड़ने लगी। फिर भी बढ़ा। आँगन में पैर रखा ही था कि देवराज पर नज़र पड़ी। उसने भाग जाना चाहा। पर देवराज की कठोर मुद्रा के आतंक ने उसे जड़ कर दिया। तभी देवराज ने आगे बढ़ कर उसे पीटना शुरू कर दिया। पीटते-पीटते वह कहता भी जा रहा था, "सब गुण थे। बस एक चोरी का गुण न था। वह भी सीख लिया। घर की शान्ति तो मिटा ही डाली, अब बाहर की भी न छोड़ेगा। दुनिया कहेगी इन का छोटा भाई चोर है।"

जीवन ने अपनी रक्षा के लिए भाभी की गुहार देनी चाही। पर जैसे ही पथराई-सी खड़ी भाभी पर उसकी दृष्टि पड़ी तो मुँह से सी तक न निकाली। भाभी ने उसे पिटने से बचाने की कोई कोशिश नहीं की। जब देवराज पीटते-पीटते थक गया तो उसने जीवन को छोड़ दिया। जीवन मार खाया कुत्ता-सा घर के भीतर आया और खाट पर बस्ता पटक अँधेरी कोठरी में जा छिपा। वह रोना चाहता था, स्वयं से भी छिप कर रोना। आज उसे भाभी भी अपनी न लग रही थी। इसी से उसका मन ऐसे अँधेरे को चाहता था, जहाँ वह खुद को भी न देख सके।

भाभी स्वयं जीवन से दूर रहने लगी थीं। पर मन उनका उससे कभी दूर नहीं गया। आज जो कुछ घटा वह सब उन्होंने आँसू थाम, मौन रह कर देखा। जीवन को पिटते देख उनकी आत्मा विकल हो उठी थी। उसके बाद जाने कहाँ लुप्त हो गया था। वह उसे छाती से लगा कर अपने मन की चोट को सहलाने को विकल थीं। आखिर उसकी सिसकियों के सहारे वे भी उस अँधेरी कोठरी में पहुँच गईं। उन्होंने अँधेरे में सहसा कुछ न देख पाकर कोमल स्वर में पुकारा, "जीवन!"

जीवन की सिसकियाँ उस स्नेह भरी आवाज की ऊष्मा पा कर आँसुओं में और वेग से गलने लगीं। भाभी ने पुकारा, "जीवन मुझ से भी नहीं बोलोगे?"

धीरे-धीरे प्रकाश की सताई आँखें जब अन्धकार की अभ्यस्त हो गईं, तो भाभी ने देखा जीवन औंधे मुँह जमीन पर पड़ा था। उन्होंने आवेग से आगे बढ़ कर उसे अपनी छाती से लगा लिया। आज बरसों बाद वे अपने उस स्नेह-शिशु को छाती से लगा रही थीं। जीवन ने भाभी की छाती से चिमट कर कहा, "भाभी।" और जोरों से रोने लगा। भाभी भी रोती रहीं। उनके उस सम्मिलित रुदन का साक्षी केवल अन्धकार था।

जीवन ने रोते-रोते कहा, "भाभी, मैंने चोरी कभी नहीं की।"

भाभी ने भींगे स्वर में कहा, "मैं जानती हूँ मेरे लाल ! तू चोरी कभी नहीं करेगा।"

जीवन फिर बोला, "भाभी अब मैं किसी से नहीं बोलूँगा। भाभी अब मैं घर से भी भाग जाऊँगा।"

भाभी ने पीड़ित हो कर कहा, "ऐसा कभी न करना जीवन। घर से कभी न भागना मेरे राजा ! तुम घर से चले जाओगे तो मैं मर जाऊँगी। मैं जीती हूँ तुझे देख कर। बोलो, तुम चाहोगे कि मैं मर जाऊँ?"

जीवन के घावों पर मरहम लग गया। उससे भी किसी को इतना प्यार है। उसकी भी कहीं इतनी सार्थकता है। वह सुख में मौन ही रहा। भाभी ने उसे अपने में समेटे हुए आग्रह से कहा, "कहो जीवन कि अब तुम कभी ऐसी बात सोचोगे भी नहीं। कहो कि अपनी भाभी को छोड़ोगे नहीं।"

जीवन ने रोते-रोते कहा, "हाँ भाभी।"

पर इन आँसुओं में हर्ष था, विषाद नहीं।

फिर कुछ स्वस्थ हो कर जीवन ने पूछा, "पर भाभी आजकल तुम मुझ से बोलती क्यों नहीं?"

भाभी कुछ देर चुप रही। फिर बोली, "जीवन मैं पराधीन हूँ। तेरी ही तरह पराधीन। कल तू स्वाधीन हो जाएगा, पर मैं मृत्यु से पूर्व कभी स्वाधीन नहीं होने की। मैं पत्नी हूँ। मैं किसी की दासी हूँ। जीवन में दासी से भी छोटी हूँ।"

भाभी अत्यन्त पीड़ित थीं। जीवन उनकी वेदना तो समझा पर उसकी गहराई न पा सका। बोला, "भाभी, ऐसा क्यों ?"

भाभी उस 'क्यों' से अपना मन बहुत देर तक कुरेदती रही। पर उत्तर कुछ न दे सकी। फिर सहसा जीवन से अलग होती हुई बोलीं, "अच्छा, चलूँ। तुम्हारे भैया मुझे ढूँढ़ते होंगे।"

भाभी जीवन को फिर अन्धकार में छोड़ कर चली गयी। उनके इस तरह छोड़ कर चले जाने से जीवन को अपने 'क्यों' का उत्तर तो अवश्य मिल गया था पर उस उत्तर को भी वह स्पष्ट अर्थों में ग्रहण न कर सका। भाभी को पा कर उसने जो पूर्णता और तृप्ति अनुभव की थी, वह उनके जाते ही खो गई। उनके वक्ष का कोमल, गरम और आत्मीयता भरा स्पर्श उसे किसी ऐसे अभाव से भर गया, जिसका अर्थ अभी वह बरसों नहीं समझ सकता था।

कुछ देर बाद जीवन भी कोठरी से बाहर आया। बाहर सबसे पहले भैया दिखाई दिए। उन्होंने उसे ऐसी दृष्टि से देखा कि वह सकपका गया। फिर भाभी दिखाई दीं। पर इस बार वे उस कोठरी की भाभी से सर्वथा भिन्न थीं। उन्होंने उसे देखने की कोशिश ही नहीं की। चुपचाप उसकी बगल से होकर रसोई में चली गईं। जीवन का घाव फिर हरा हो गया। पर वह हठात् उनके पीछे हो लिया। भाभी रसोई में लगी थीं। आज शायद खाने में कढ़ी बनाने का इरादा था जिसके लिए वे बेसनी पकौड़ियाँ तल रही थीं। कुछ पकौड़ियाँ पानी में भींग रही थीं। जीवन को पानी में भीगी फूली-फूली पकौड़ियाँ खाने में अच्छी लगती थीं। वह चुपचाप जा कर रसोई की देहली पर बैठ गया। भाभी ने धीमे से पूछा, "पकौड़ी खाओगे ?"

जीवन ने कहा, "हाँ।

भाभी ने उसे एक कटोरी में थोड़ी-सी पकौड़ियाँ दे दी। पर जीवन को वे अच्छी नहीं लगीं। उसने एक खा कर बाकी छोड़ दीं। भाभी ने उसे न खाते हुए देख तो लिया, पर पूछा कुछ नहीं। जीवन भी वहाँ से हट गया।

दोपहर का वक्त था। कड़ी धूप थी। आसमान ही नहीं जमीन तक तप चली थी। जीवन तपती जमीन पर नंगे पाँव चलता हुआ घर के आँगन

को पार कर बाहर सड़क पर आ गया। सड़क पर जन संचार विरल था। वह उसी धूप में बाहर के चबूतरे पर सड़क की चौड़ी नाली में पैर लटका कर बैठ गया। उसके अन्तर में इतना दाह था कि उसे बाहर का दाह अनुभव ही नहीं हो रहा था। वह क्या चाहता है यह भी उसे ठीक-ठीक पता न चल रहा था। इतने में उसका दृष्टि एक कुत्ते पर पड़ी। पैर में उसके चोट लगी थी जिससे खून बह रहा था। कुत्ता उसके पास आ कर रुक गया और निरीह-सी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा। उसकी गोल-गोल छोटी आँखों में जीवन को आदमियों की सुन्दर कही जाने वाली आँखों से कहीं अधिक स्नेह और आत्मीयता जान पड़ी। उसने बड़े प्यार से उसे पुकारा, "मोती कूर कूर।"

मोती अपने आप में सुन्दरता और आभा का प्रतीक है। कुत्ते के नाम के रूप में उसकी क्या सार्थकता है, नहीं कहा जा सकता। पर जीवन जानता था कि कुत्ते का मोती नाम प्रचलित है। उसने अनायास ही उसे वह प्रचलित नाम दे दिया था। कुत्ता उसके आवाहन पर उसके और समीप चला आया। जीवन प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। मोती इससे प्रोत्साहित हो उसकी बगल में बैठ गया। जीवन ने उसे थपथपाते हुए पूछा, मोती तूने चोट कहाँ खाई ?"

मोती ने कान खड़े कर सुना और फिर अपनी खुरदुरी जीभ से पाँव चाटने लगा।

खाने का वक्त हो गया था। जीवन को भी भूख लग आई थी। अपने आप में घुटा-घुटा वह जिस भूख को अनुभव न कर सका था, मोती के संपर्क में करने लगा था। उसने उससे प्यार से पूछा, "मोती भूख लगी है ?"

मोती क्या समझा क्या नहीं समझा पर वह उठ खड़ा हुआ। जीवन भी उठा। और घर के भीतर की ओर चला। मोती उसके पीछे-पीछे हो लिया। जीवन रसोई में पहुँचा। देहली के पास ही पकौड़ियों का कटोरा रक्खा था। भाभी भात का मांड नितार रही थीं। जीवन ने मांड भी एक कटोरी में ले लिया। फिर उसने बड़े प्यार से मोती को पकौड़ियाँ खिलाई। बाद में आँगन के चबूतरे के एक पत्थर में पड़े गड्ढे में मांड डाल कर उसे पिलाया। मोती चपचप करके उसे पीने लगा। बीच-बीच में वह

जीवन की ओर देख लेता। आज वह एक उदार व्यक्ति का अतिथि था। इतने सत्कार के साथ उसे कभी किसी ने भोजन न कराया था। वह तो सड़क का कुत्ता था। दुत्कार-मार उसके भाग्य में अधिक थी। बाजार में चाट के जूठे पत्ते चाट-चाट कर उसने अपने जीवन को पोसा था। इस पर भी कभी चाट वाले की लाठी खानी पड़ती थी तो कभी किसी दूसरे तगड़े कुत्ते की मार। चाट के एक पत्ते पर जब कई-कई कुत्ते टूट पड़ते, तो युद्ध-सा ठन जाता। पर आज कुछ निराली ही स्थिति थी। आज उसे चाट वाले की लाठी का भय न था। वह अपने पैर की चोट को भी भूल गया जो जूठन के लोभ में ही उसने खाई थी।

पर सड़क के कुत्ते के भाग्य का भी क्या ठिकाना! एक ओर से प्यार और दूसरी ओर से दुत्कार कब पड़े कुछ पता नहीं। जब मोती अपने को विश्व के समस्त कुत्तों में सौभाग्यशाली समझता हुआ चावल का मांड चपचप कर पी ही रहा था तभी देवराज का दृश्य में आगमन हुआ। उसने जीवन और उसके अतिथि को देखा। एक बार तो जाने क्यों उपेक्षा कर दी, पर जैसे ही उसकी दृष्टि अपनी पत्नी पर पड़ी, जो जीवन को प्रसन्न मुद्रा में देख स्वयं मुदित हो रही थी, तो गम्भीर स्वर में बोल उठा, "जीवन तुम रोज एक नई आदत सीख रहे हो। चोरी का गुण तो सीख लिया, अब कुत्ते पालो। ये कुत्ते तुम्हें अवश्य ही आदमी बना देंगे। जाने मेरे किस जनम के पापों का बदला तुम चुका रहे हो।"

मोती को सहज ज्ञान से अनुभव हुआ कि उसके आतिथेय की स्थिति कुछ विषम हो चली है। वह अपने आतिथेय की अवमानना के लिए तैयार न था। पर आरम्भ में उसने धीरज का परिचय दिया। जीवन चुप ही था। भाई साहब को उसकी चुप्पी असह्य लगी। तेज़ स्वर में बोले, "गूँगे हो! जवाब क्यों नहीं देते? पढ़ने-लिखने को कुछ नहीं रहा क्या?"

जीवन के मुख से अनायास ही निकल पड़ा, "नहीं।"

इस 'नहीं' की तात्कालिक प्रतिक्रिया हुई भाई साहब का थप्पड़। जीवन थप्पड़ खा कर भी चुप रहा। वह आँखों में आँसू और रोष भरे भाई साहब को घूरता रहा। आज उसे आँसू और थप्पड़ ही तो मिल रहे हैं। पर मोती

को यह सब कुछ सह्य नहीं हुआ। वह देवराज पर गुर्रा उठा। उसने जोर से भूँक कर थप्पड़ का विरोध किया। इस पर देवराज के तन में आग लग गई। वह तुरंत भीतर जा कर एक लाठी ले आया। मोती की पीठ पर प्रहार हुआ। 'कूँ कूँ' करके वह चिल्लाता हुआ भागा। देवराज ने भागते-भागते मोती पर दूसरा प्रहार किया। वह चूक गया। इससे खीज कर वह जीवन की ओर मुड़ा। बोला, "अब हमें कुत्तों से नुचवाएगा! देखो तो इस पाजी की शरारत!"

इतना कह कर उसने लाठी वाले हाथ का भी प्रयोग किया। लाठी उठी और पड़ी। एक चीख निकली। चीख जीवन की थी, पर खून भाभी के सिर से बह रहा था। वे प्रहार के सामने स्वयं आ गई थीं। न चाहते हुए भी लाठी उनके सिर पर पड़ी। भाभी खून भरे आँचल से सिर को थामे कमरे के भीतर चुपचाप चली गईं। देवराज के हाथ की लाठी छूट गयी। जीवन पत्थर-सा वहीं खड़ा रहा।

देवराज इस कांड के बाद चुपचाप बाहर चला गया। जीवन ने जमीन पर पड़ी भाभी के रक्त की बूँदों को देखा। उसने उसी जगह अपना सिर पटक दिया। कड़ी जमीन पर सिर पटक-पटक कर वह भाभी की चोट का अनुभव करने लगा। वह जानना चाहता था कि जब खून बहता है तो कैसा लगता है। मोती के पाँव का खून और भाभी के सिर का खून उसकी आँखों में था और वह अपना सिर तब तक जमीन पर पटकता रहा जब तक कि अपने खून में ही उसकी आँखें धुँधली न पड़ गयीं।

अनंग बाधा

जीवन ग्यारह साल का हो गया। आकृति का भोला और सुकुमार जीवन कितना दुरूह था, यह न तो वह बालक स्वयं जानता था और न अन्य ही। पुरुषों से वह डरता था। पशुओं, पक्षियों और स्त्रियों में उसे अधिक संवेदन

मिलता था। वह उनके संपर्क में अधिक आने की चेष्टा करता। एकान्त में वह उन्हीं के बारे में सोचा करता। गायों से हेल-मेल स्थापित करने से एक दिन उसके मन में बड़ा सहज प्रश्न उठा। गाय बच्चा देती है। बच्चे के बाद ही दूध आता है। यह बच्चा कहाँ से आता है ? यह दूध कैसे बनता है ? बच्चे और दूध का क्या संबंध है ? कल ही गोमती ने बच्चा दिया था। वह बहुत दिनों से सुन रहा था कि गोमती बच्चा देने वाली है। उसकी इच्छा थी कि देखे कैसे बच्चा देती है। जब उसने सरलतापूर्वक अपनी इस इच्छा को भाभी के सामने रख दिया तो उसने हँस कर टाल दिया पर देवराज ने झिड़क दिया। वह अपना-सा मुँह ले कर रह गया। अगले दिन जब सो कर उठा तो पहला समाचार यही मिला कि गोमती ने बछड़ा दिया है। बड़ा प्यारा-सा बछड़ा। गाय के दूध-सा ही धौला। माथे पर लाल तिलक। जीवन को उसे देखते ही ममत्व हो गया। गोमती का पेट जो कल तक फूला हुआ था आज ठीक लगा। जीवन जानता था कि बच्चा पेट से ही आता है। पर कैसे आता है और पेट में कैसे हो जाता है ? उसके इन प्रश्नों का समाधान किसी के पास न था। पूछने में संकोच भी था, डर भी। चेष्टा करने पर परिणाम भी प्रतीकूल रहा। सृष्टि के इस गूढ़ रहस्य का उसे पता ही न चला। वह अपनी मा का बच्चा है। वह स्वयं कैसे हुआ ? आखिर लोग मरते हैं, रोज ही। दुनिया इसी से तो खत्म नहीं होती कि पैदा होने वालों की तादाद मरने वालों से ज्यादा है। पर पैदा कैसे होते हैं ? मरना तो राम जी की इच्छा पर है। भगवान कह देता है मर जाओ और आदमी मर जाता है।

पर क्या पैदा होना आदमी की इच्छा पर नहीं ? वह अनाज का पैदा होना, पेड़ों का उगना, उन पर फल लगना तो समझ लेता था, पर आदमी से आदमी का बनना उसकी समझ में नहीं आता था। एक दिन उसने इस प्रश्न का समाधान अपनी भाभी से ही करने की ठानी।

भाभी यौवन की तप्त दुपहरी लांघ चुकी थीं। अब धूप कोमल पड़ने लगी थी। अपनी इस कोमलता में उनमें अधिक मिठास थी, अधिक सुखद जान पड़ती थीं। जीवन की इच्छा हुआ करती कि उन्हें देखा करे। भाभी के अंगों

में उसकी कुछ ऐसी वासना और रहस्यमयी ममता थी कि वह भाभी को टकटकी लगा कर देखने में दीन बन जाता। उस दिन भाभी कपड़े बदल रही थीं। स्वल्प वस्त्रों में होने के कारण उनकी सुषमा वैसे ही बिखर रही थी, जैसे कोई नर्तकी अंग संचालन के द्वारा अपने सौन्दर्य का विस्तार कर रही हो। जीवन को भाभी की वह उन्नतावनत अंग यष्टि बड़ी ही मधुर लगी। वस्त्रों में अंगों के सौन्दर्य रहस्य को छिपाने की गंभीरता न थी। जाड़े के दिन थे। फिर भी उस रूप को देख कर जीवन ऊष्मा का-सा अनुभव करने लगा। उसने मन ही मन एक बार सोचा—भाभी दुनिया में सबसे अधिक सुन्दर है।

जीवन को घूरते हुए देख भाभी ने हँस कर कहा, "क्या देख रहे हो बाबू साहब। मैं तो तुम्हारी नित की देखी भाली हूँ।"

जीवन कुछ सकपका-सा गया। सकपकाहट में भी अनायास ही कह दिया, "भाभी तुम सुन्दर हो।"

क्षण भर को भाभी के कपोल आरक्त हो गए। गालों पर लज्जा के भँवर बन कर मिट गए—दूसरे ही क्षण हृदय में हल्की-सी टीस हुई। इस रूप का क्या उपयोग। व्यर्थ ही आया और व्यर्थ ही चला गया। उसकी सार्थकता इससे अधिक कुछ भी तो नहीं थी कि पति की वासनाओं से मथा जाय, ताड़ित होता रहे, उत्सर्ग होता रहे। वह किसी निर्माण के द्वारा स्वयं को सार्थकता तो न दे सका।

मनोहर बालक जीवन उसके सामने खड़ा था। जैसे उसके मन की भूख ही सामने आ गयी हो। सोचा, जीवन ने उसकी कोख से क्यों नहीं जन्म लिया। वन्ध्या रूप की सार्थकता क्या? वह अपने मन की भूख से हारने-सी लगी, इच्छा हुई कि जीवन को अपने अंक में ले ले। उसके स्तन स्पंदित से हुए। क्या उनमें दूध का संचार होने जा रहा है! जीवन के होंठ क्यों नहीं उस स्पन्दन का उत्तर बनते। क्यों नहीं मेरा शिशु मेरे स्तन्य को सार्थक करता।

सुषमा पीड़ा से हार गयी।

जीवन भाभी के मौन से भीत-सा बोला, "जाऊँ भाभी।"

मन की उस नवनीत दशा में यह वाक्य ताप-सा लगा। वह पिघलने

लगा। भाभी के प्राण जीवन को अपने में समेटने लगे। बोली, "तुम भी चले जाओगे। तुम मेरी वेदना को न समझोगे। जीवन, मेरे सच्चे जीवन।"

जीवन कुछ न समझ पाया, आखिर भाभी की वेदना क्या है? उसने कुछ कहना चाहा पर 'भाभी' इस एक शब्द से अधिक उसके मुख से न निकला। आँखें उसकी भर आई थीं। गला उसका आँसुओं से रुँध गया था। स्वयं उस अश्रु-पंक में धंस कर जहाँ का तहाँ रह गया था। भाभी ने मातृत्व के अधिकार से आगे बढ़ कर जीवन को बाँहों में भर लिया। वह विक्षिप्त-सी कहने लगीं, "जीवन, मैं तेरी मा क्यों नहीं हुई। मेरे बच्चे, तू ने मेरी गोद की शोभा क्यों नहीं बढ़ाई? मेरे लाल, तू ने मुझे अभागिन क्यों रखा?"

भाभी अपनी अवस्था को भूल गई। आँचल के सरक जाने से दोनों कंधे नग्न हो गए थे। वर्तुल सुचिक्कण स्कन्ध सुषमा के ढलाव से थे। जीवन उनके वक्ष कोटर में विहग शावक-सा छिप गया। भाभी ने उसे अपनी छाती से भींचा···और भींचा···और कस कर भींचा। इतना भींचा कि अन्तः वस्त्र के बन्धन खुल गए। भाभी अपने स्पन्दित मातृत्व को इस शिशु पर बरसा रही थी। उसकी आँखों में आँसू थे, होठ फड़क रहे थे। वक्ष उमग रहा था। स्नायुओं में रक्त का संचार तीव्र था। वह जीवन का मुँह चूमने लगी। माथा चूमा, आँखें चूमीं, गाल चूमें, होंठ चूमें, ठोड़ी चूमी और चूम-चूम कर विह्वल होती हुई उसे भी विकल करने लगी। जीवन कुछ सुखी था, कुछ परेशान था, कुछ अज्ञ था, फिर भी चाहता था कि भाभी उसे कभी अपने से अलग न करें, कभी अपने से अलग न करें।

पर भाभी को वह कैसे ग्रहण कर ले। उसे अपना दूध पीता शैशव याद आया, जब वह भाभी से ब्याह करना चाहता था। क्या आज भी वह वैसा चाह सकता है? भाभी पर भाई का अधिकार है। वह कैसे भाभी को संपूर्णतः अपनी कर लें। जैसे वर्षों पीछे की आवाज उसके होंठों से टकरा कर फिर प्रतिध्वनित हुई। वह अनायास ही बोल उठा—"भाभी, मैं तुम से ब्याह करूँगा।"

विह्वल भाभी सब कुछ भूल गयी। "मेरे बच्चे तू सिर्फ मेरा है। बोल तू ब्याह करके क्या करेगा?

यह तो जीवन स्वयं न जानता था—"ब्याह करके क्या होगा ? ब्याह करके होता क्या है ? फिर उसे कुछ ध्यान आया। बोला—"मैं तुम्हें अपने पास रखूँगा। मैं भैया को तुम्हारे पास आने न दूँगा। मैं, मैं तुम्हें···"

ग्यारह वर्ष का जीवन जैसे अपनी आयु का आधा भर रह गया था। भैया के उल्लेख से भाभी चोट खा कर चौंक-सी पड़ी। उन्होंने स्वयं को संयत किया। वे कैसे इतनी विकल हो जाती हैं, उनकी अपनी समझ में नहीं आया। बच्चे की चाह उन्हें क्यों आपे में नहीं रहने देती ? जीवन को वे अपनी कोख का ही रत्न क्यों नहीं मान लेतीं ? जीवन उन्हें कितना प्यार करता है ? वे स्वयं जीवन को देख कर कैसी उमग पड़ती हैं।

जीवन का अन्तिम वाक्य अधूरा ही रह गया था। भाभी बोली, "तुम चुप क्यों हो गए जीवन।"

ग्यारह वर्ष के जीवन को विवाह का उद्देश्य, उसकी सार्थकता चाहे मालूम न हो, पर वह विवाह को दो व्यक्तियों का, जिनमें एक स्त्री होती है और दूसरा पुरुष, संबंध समझने लगा था। वह यह भी जान चुका था कि भैया का ब्याह भाभी से हुआ है। वह यह भी जानता था कि ब्याह एक ही बार होता है। उसके पड़ोस की राधा इसी से तो अकेली है। उसका पति मर गया है और अब दूसरा ब्याह वह कर नहीं सकती। फिर भी वह भाभी से कुछ अजीव-सी बात कर गया था। संकोच ने उसके बोल छीन लिये। वह चुपचाप बाहर जाने लगा।

भाभी ने अपने वस्त्र संभाल लिए थे। कंधों पर शाल डाल लिया था। बालों को पीछे झटक लिया था। अब वह कुछ स्वस्थ हो चली थीं। जीवन को जाते देख खिलखिलाहट के स्वर में बोलीं, "मत जाओ जीवन, मैं तुम्हीं से विवाह करूँगी।"

जीवन जाना तो चाहता था पर रुकने का साहस भी न कर पा रहा था। जैसे उसके नीचे की भूमि में बिछलन थी। भाभी समझ रही थी। उसने उसे आगे बढ़ कर रोक लिया और अपने पास ही पलंग पर बिठाते हुए बोलीं, "तुम आए क्यों थे ?"

जीवन ने भाभी की आँखों में देखा। वहाँ आभा थी। निर्मलता थी।

विश्वास की ज्योति थी। जीवन के मन की ग्रन्थि मुक्त होने लगी। उसका सरल शैशव लौटने लगा। वह जटिल क्यों हो जाता है। उसमें यह बूढ़ापन कैसे आ जाता है, उसे पता न था। पर अब भाभी के अम्लान मुख को देख कर वह फिर ठीक अपनी वय का हो चुका था। न ग्यारह से अधिक न ग्यारह से कम। अब वह अपना जिज्ञासा भाभी के सामने रख सकता था। भाभी ने फिर प्रोत्साहित किया, "क्या है, तुम्हारे मन में आज। भाभी से भी कोई छिपाता है।"

जीवन ने बल पाया। बोला, "गौमती ने बछड़ा दिया हैं।"

भाभी बोलीं, "दिया तो है। अब खूब दूध होगा। खूब दूध पीने को मिलेगा। तुम जब थे काफी छोटे और हठी थे तो दूध पीते रोया करते थे। फिर इसलिए पीने लगे थे कि तुम्हें जल्दी-जल्दी बड़ा होकर भाभी से ब्याह करना था। दूध पीने से आदमी जल्दी-जल्दी बड़ा होता है, यह तुम्हारा विश्वास हो गया था।"

भाभी के कहने के ढंग ने जीवन को संकोच की पीड़ा न देकर मन की मुक्ति दी। वह बड़े-बूढ़े की तरह बोला, "तब मैं बच्चा था।"

भाभी ने प्यार से कहा, "बच्चे तुम सदा रहोगे।' अपनी भाभी के लिए तुम कभी बूढ़े न होगे।"

और भाभी ने उसे अनन्त आशिर्वादों और ममत्व से भरी दृष्टि से देखा।

जीवन ने अपनी बात छेड़ी, "मैं कुछ और कह रहा था भाभी।"

भाभी ने पूछा, "क्या ?"

जीवन ने फिर से घिरते हुए संकोच को ठेलते हुए कहा, "बछड़ा कहाँ से आया भाभी ?"

मुझे मालूम नहीं, "भाभीं ने टालना चाहा।"

जीवन कैसे मान लेता कि इतनी अच्छी भाभी को इतना भी पता नहीं। उसने आगे कहा, "भाभी, पारा-पड़ोस में सबके बच्चा है। तुम्हारे कोई नहीं। बोलो कहाँ से आए उनके बच्चे ? तुम क्यों नहीं लाईं।"

भाभी का मर्म दुखा। पर कह दिया, "मेरे भी बच्चा है, वह तुम हो।"

"नहीं भाभी," जीवन ने हठी बालक की तरह पूछा, "मुझे ठीक-ठीक बताओ।"

भाभी ने टालने को कह दिया, "राम जी के यहाँ से आते हैं।"

जीवन का समाधान न हुआ। स्वर में और अधिक आग्रह भर कर बोला, "नहीं भाभी, ठीक-ठीक बताओ।"

भाभी ने हार कर कहा, "ब्याह होगा तो जान जाओगे।"

पर तभी कैसे ? जीवन के लिये यह भी तो रहस्य था। फिर गोमती का भी ब्याह हुआ क्या ? जानवरों का तो ब्याह होता ही नहीं। उसने पूछा, "गोमती का ब्याह हुआ भाभी ?"

"हाँ," भाभी ने कह दिया।

"किससे ?" उसका प्रश्न था।

भाभी जीवन के गाल मसलती हुई बोली, "जीवन तुम कभी बड़े न होना, कभी बड़े न होना। तुम देवता हो। ऐसे ही भोले, इतने ही छोटे बने रहना।"

उनके स्वर का उल्लास फिर धीरे-धीरे करुणा में बदलने लगा था। उनका पत्नीत्व मातृत्व से वंचित रह कर जैसे अपनी निरर्थकता पर रो पड़ा था। तभी देवराज के आने की आहट आई। भाभी जीवन से कुछ और कहे बिना चली गईं।

जीवन अपने प्रश्न के साथ अकेला रह गया। कितनी ही देर तक वह अपने एकान्त का मन्थन करता रहा। फिर निरुद्देश्य-सा बाहर आया। वह चुपचाप छत पर जा पहुँचा। उसने वहाँ पतंग और डोर जमा कर रखे थे। पहले वह चुपचाप धूप में अपनी छाया को देखता रहा फिर आसमान में उड़ते हुए पतंगों को देख कर अपनी डोर और पतंग निकाला। पर आज पतंग उससे उड़ा नहीं। हवा कम थी और वह उस कला में अपटु। उड़ाने की चेष्टा में पतंग फट गया। जगह-जगह से डोर उलझ गई। वह स्वयं थक-सा गया। कहीं उलझा हुआ था। धूप में मुँडेर का सहारा लगा कर बैठ गया। तभी उसकी दृष्टि सामनेवाले मकान की छत पर पड़ी। वहाँ एक बन्दर और एक बन्दरी दाम्पत्य सुख में लीन थे। उसने पहली बार ही किसी पशु को ऐसी

अवस्था में देखा था। एक बार तो उसने उस ओर से दृष्टि हटा ली। उसे उसमें कुछ भद्दा जान पड़ा। पर मन का कुतूहल आँख हटा लेने से न दबा और वह बन्दर दम्पती को मन में जाने कैसी खटास लेकर देखता रहा।

मृत्यु सुन्दरी

जीवन अब पाँचवें दर्जे में था। उसके साथ एक लड़का पढ़ता था। नाम उसका शिवलाल था, पर सब उसे शिब्बन कहा करते थे। शिब्बन स्कूल भर में विख्यात था। सब उसे उसकी निर्भीकता और गुंडई के लिये जानते थे। वह आराम से पढ़ाई करने में विश्वास करता था। अपने पुराने साथियों से कई जमात पिछड़ चुका था। वह शरीर का भोंडा पर मजबूत था। छोटी-छोटी आँखों में क्रूरता थी। मसूड़े फूले हुए थे और जब हँसता था तो ऊपर का होंठ नाक तक सिकुड़ जाता था। मास्टरों से वह कतई न डरता था। स्कूल में उसका पूरा दल था। जहाँ कहीं मारपीट होती शिब्बन जरूर होता। कई बार सब लड़कों के सामने हैडमास्टर ने उसे बेंत भी लगाए थे। पर वह बेंतों की गिनती जोर-जोर से करता हुआ हँसा करता। अब वह स्कूल से ही निकाला जाएगा ऐसा सब का विश्वास हो गया था।

एक दिन जीवन भी उसकी दृष्टि में आया। उसने उससे अक्खड़ ढंग से पूछा, "तेरा नाम क्या है ?"

जीवन को बुरा लगा, पर कह दिया, "जीवन।"

वह हँस कर बोला, "अबे जीवन तो सब हैं। मरण रखता।"

इतना कह कर उसने आत्मीयतापूर्वक उसके कंधे पर एक धौल जमादी। फिर बोला "बड़े नाजुक हो यार। क्या लड़कियों जैसे नक्श पाए हैं।"

जीवन उसके विरुद से परिचित था। अतएव किसी भी बात का प्रतिकार करने की हिम्मत भी न कर पा रहा था। वह आतंकित-सा उससे जान बचाने की फिक्र में था। शिब्बन फिर बोला, "अबे यार कुछ बोल भी तो। शिब्बन की जमात में काहे चला आया, जब मुंह में जुबान न थी।"

जीवन ने कहा, "मुझे जाने दो। वक्फा खतम हो गया है।"

शिब्बन बोला, "खत्म तो मेरे लिए भी हो गया है। पर मैं परवाह थोड़े ही करता हूँ। अच्छा जा फिर मिलेंगे।"

फिर उसके बाद एक घटना हुई। जीवन स्कूल से घर अकेला आ रहा था। रास्ते में शिब्बन मिल गया। बोला, "ठहर भी यार, कहाँ झपटा चला जा रहा है। हम भी साथ हैं।"

जीवन अनसुना बना रहा। शिब्बन ने झपट कर उसका हाथ पकड़ा। बोला, "शिब्बन की बात नहीं सुनता ?"

फिर हाथ को मरोड़ता हुआ बोला, "यार हाथ भी तेरे लड़कियों जैसे हैं। आँखें…कातिल हैं यार तू भी। चल उस बाग में चलें।"

जाड़े की शाम। रात दोपहर के ढलते ही दिन को धमकी देने लगती है। जीवन घबरा गया। आखिर यह बाग में चलने का प्रस्ताव क्यों ? घबराहट में चुप ही रहा।

शिब्बन ने उसे खींचते हुए कहा, "अबे चल भी।"

जीवन ने कहा, "मुझे फल अच्छे नहीं लगते।"

शिब्बन शरारत के साथ हँस कर बोला, "गजब की मासूमियत है। यह फलों का बाग नहीं। यहाँ तो…"

फिर उसने बड़ा भद्दा संकेत किया। जीवन ठीक-ठीक न समझ कर भी आतंकित हो गया। अभी भी शिब्बन के हाथ में उसका हाथ था। वह छुड़ाना चाह कर भी छुड़ा न सका। अन्त में वह रो पड़ा। उसके आँसू देख कर शिब्बन ने हाथ छोड़ दिया। बोला, "जा साले, बिल्कुल लड़की है। अबे लौंडा क्यों बना ? जा भाग।"

और उसके बाद सचमुच ही वह भागने लगा। दम उसने घर आकर ही लिया। अब स्कूल का रास्ता उसके लिए हौवा हो गया। अगले दिन डरता-डरता वह स्कूल गया। पर वहाँ तो अजब ही तमाशा था। लड़के उसे अजीब निगाह से देख रहे थे। कुछ ने उसे शिब्बन का नाम लेकर चिढ़ाया। कुछ ने कहा—बाग में फल खूब हैं। लड़कों के भद्दे संकेतों और मजाकों से उसकी नाक में दम आ गया। उसकी समझ में न आया कि यह सब कैसे

हुआ ? वह शिब्बन के साथ बाग में गया तक नहीं। फिर यह सब बदनामी क्यों ?

जीवन ने सोचा शायद एकाध दिन में बात खत्म हो जायगी। पर वह बढ़ती ही गयी। अब तो स्कूल के रास्ते में भी लड़के उसके पास से शिब्बन का नाम ले कर निकल जाते। उसकी नाक में दम आ गया। शिब्बन उसे देख कर सिर्फ मुसकुरा लेता। जीवन का बुरा हाल था।

जीवन को जाँने क्यों यह विश्वास हो गया कि इस सब बदनामी का सूत्रधार शिब्बन ही है। एक दिन वह उससे स्कूल के रास्ते में आ कर रोता हुआ बोला, "तुम मुझे बदनाम क्यों कर रहे हो शिब्बन। तुम्हें इससे क्या मिलेगा। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। बोलो, मेरे पीछे क्यों पड़े हो ?"

शिब्बन कुटिलता से मुसकराया, "मेरी बात क्यों नहीं मानी। बात मान लेते तो कोई न छेड़ता।"

"क्या बात," जीवन ने सरलता से पूछा।

शिब्बन आँख मार कर बोला, "यार इतने दूध के धोए मत बनो।"

तभी सड़क पर एक और दृश्य सामने आ गया। एक साँड गाय का पीछा कर रहा था। गाय कुछ आतंकित थी। आखिर साँड के काबू में आ गयी। शिब्बन ने उधर इशारा किया और बोला, "जीवन चलोगे बाग में।"

जीवन की दीनता सहसा रोष में बदल गयी। उसने शिब्बन के एक तमाचा कस दिया। आज तक किसी की इतनी हिम्मत न हुई थी। शिब्बन ने इधर-उधर देखा। गुस्से की जो आग उसकी आँखों में धधकी थी वह तत्काल बुझ गयी। बोला, "प्यारे, जाओ माफ कर दिया। किसी ने देखा नहीं। नहीं तो शिब्बन जिन्दा न छोड़ता तुम्हें। अच्छा, अब तो जाओ, फिर कभी···।"

शिब्बन इस तरह बख्श देगा जीवन को उम्मीद न थी। जीवन घर चला आया। वह छत पर बैठा बन्दर, गाय-साँड, और शिब्बन के बाग वाले प्रस्ताव के बारे में सोचता रहा। वह अनुभव कर रहा था कि इन सब के मूल में एक ही बात है। पर वह क्या हो सकती है। वह कौन-सा रस हो सकता है। इसका मतलब यह है कि शिब्बन सब कुछ जानता है। वह बता सकता

है। पर वह सब कितना घृणित है। नहीं नहीं, वह शिब्बन से कभी नहीं पूछेगा। ये सब गन्दी बातें हैं।

अगले दिन स्कूल में भी एक अजीब बात हुई। जब शिब्बन के सामने ही लड़कों ने उसे शिब्बन का नाम ले कर चिढ़ाया, तो जाने क्यों शिब्बन ने एक लड़के को पकड़ कर पीटना शुरू कर दिया और खूब पीटा। पीट-पाट कर वह चलता बना। लड़कों ने चाहे जो समझा हो, पर जीवन की समझ में कुछ न आया। आखिर बदनामी की जड़ तो वही था। उस घटना का जादुई असर पड़ा। उस दिन से किसी ने जीवन को चिढ़ाने की हिम्मत नहीं की। पर शिब्बन से उसका लगाव है यह सब के मन में अवश्य ही जम गया।

एक दिन एक मास्टर ने उसे बुला कर कहा, "देखो तुम अच्छे लड़के हो। शिब्बन के साथ मत रहा करो।"

जीवन को अचरज हुआ। बोला, "मैं तो उससे बात तक नहीं करता।"

मास्टर ने कहा, "झूठ मत बोलो। उस दिन उसने तुम्हारे लिए उस लड़के को क्या यों ही पीट डाला। तुम जानते नहीं शिब्बन को। बदमाश लड़का है। अब वह स्कूल से निकाला ही जाने वाला है।"

इसके बाद मास्टर ने उसे कुछ उपदेश देकर बिदा कर दिया। शिब्बन स्कूल से निकाल दिया जाएगा इससे उसे शिब्बन पर कुछ दया-सी आई। ममता-सी जागी। शिब्बन ने उसके लिये लड़के को पीटा। और अब वह निकाल दिया जाएगा तो कितना बुरा होगा। वह शिब्बन को यह सूचना देने के लिए विकल था। पर उस दिन से शिबब्न से उसकी एकान्त में मुलाकात ही नहीं हुई। उसने सोचा कि शिब्बन को चिट्ठी लिख कर इस बारे में सूचित कर दे। पर चिट्ठी के देने का भी तो सवाल था। साथ ही यह भी डर लगा कि चिट्ठी देते किसी और ने देख लिया तो ? जीवन की यह उलझन एक दिन आप ही सुलझ गयी। वह किताब खरीदने हरिद्वार गया था। लौटते-लौटते देर हो गयी। वह घर पैदल आ रहा था। जब मायापुर नहर के पुल पर पहुँचा तो उसने देखा डाम के पास शिब्बन अकेला बैठा है। वह साहस बटोर कर उसके पास जा पहुँचा। पुकारा, "शिब्बन।"

शिब्बन किसी गहरी चिन्ता में था। पहली पुकार न सुन सका। उसने फिर पुकारा, "शिब्बन।"

शिब्बन ने गर्दन घुमाकर देखा। जीवन था। उसे अचरज हुआ। जीवन ने शिब्बन की आँखों में देखा। आँसू थे। उसे गहरा आश्चर्य हुआ।

शिब्बन ने झट से आँखें पोंछ डाली। पूछा "क्या बात है। इस वक्त यहाँ कैसे।"

अब भी उसके स्वर में भीगा पन था। जीवन अपनी बात न कह कर पूछ बैठा, "तुम रो रहे हो शिब्बन।"

शिब्बन के चेहरे की सहज शरारत लौट आयी थी। बोला, "हटो भी यार कुछ और बात कर। तू इस समय यहाँ कैसे ? हिम्मत भी तेरी गजब है। किसी ने देख लिया यहाँ तुझे मेरे साथ तो फिर बदनाम होगा।"

जीवन बोला, "मैं कुछ कहने आया था।"

"एक बात पूछनी भी थी।" जीवन ने फिर कहा।

शिब्बन गंगा की कनखल की ओर जाने वाली धाराओं को देखने लगा। दूर सामने हिमालय की पर्वत शृंखलाएँ थीं और बाँई तरफ शिवालक की पहाड़ियाँ। उसकी दृष्टि उन सब की एक क्षण में ही सैर कर आई। जीवन की बात के प्रति उसे कोई कुतूहल न था। यह जीवन ने भी अनुभव किया। फिर भी उसने पूछा, "उस दिन तुमने मेरे लिये उस लड़के को पीटा क्यों ?"

शिब्बन ने गम्भीरता से कह दिया, "तुम्हें झूठे बदनाम करता था। तुम अच्छे लड़के हो, मैं जानता हूँ।"

जीवन कृतज्ञता से भर गया। बोला, "पर तुम्हारे शत्रु बहुत हैं। लड़के तुम्हें स्कूल से निकलवाने की सोच रहे हैं। मुझे पक्के तौर पर पता चला है। मैं तुम्हें कब से यह बताना चाहता था। पर तुम मिले ही नहीं।"

"हूँ," शिब्बन ने एक बार गम्भीरता से कहा। फिर उदासीन भाव से बोला, "इसमें परेशानी की तो कोई बात नहीं।"

जीवन ने कहा, "मुझे सुन कर तकलीफ हुई थी।"

शिब्बन ने उसे गहरी दृष्टि से देखा। जैसे उसकी सच्चाई की गहराई नाप रहा हो। बोला, "तकलीफ मत मानो। मैं खुद अपनी जिन्दगी से ऊब गया।

हूँ। मैं तमाम झंझटें दूर कर देना चाहता हूँ। स्कूल तो मैं खुद छोड़ने वाला हूँ। मैं पढ़ नहीं सकता। पढ़ने में मेरा मन नहीं लगता। तुम जानते नहीं कि मैं कितना बुरा हूँ। मैं इतना बुरा हूँ कि मुझे जीने का हक नहीं।"

जीवन उसके पास बैठ गया था। उसके मन में इस निराश और बदनाम व्यक्ति के लिए आत्मीयता पैदा हो गयी थी। पूछा, "आखिर तुम ऐसा सोचते क्यों हो ?"

"क्यों ?" शिब्बन बोला, "बताऊँ ? पर क्यों बताऊँ ? आज तक मैंने किसी पर अपनी कमजोरी जाहिर नहीं की।"

दोनों मौन रह गए। कुछ ही देर बाद शिब्बन बोला, "पर तुम्हें बता दूँ। एक को तो बता दूँ। और अब यह आखिरी ही मौका है किसी को कुछ बताने का। मेरी कहानी सुनोगे।"

आखिरी जुमला उसने बड़े दर्द के साथ कहा। कहानी शब्द में जाने कैसा हाहाकार था। जीवन ने स्वर में आग्रह भर कर कहा, "हाँ।"

शिबब्न कहने लगा, "कहानी से यह मत समझना कि मैं बहुत लम्बी-चौड़ी बात कहने जा रहा हूँ। दो बातें हैं। जानते हो मेरे मा-बाप नहीं हैं। बाप मेरे जन्म से पहले मर गए थे और मा जन्म देकर। मेरे घर में और कोई नहीं था। मैं अनाथ हो गया था। पड़ोस वालों ने अनाथालय में मुझे भेज दिया। वहीं बड़ा हुआ। पर ऐसे बड़ा होना, मौत से भी बदतर। जानते हो वहाँ भीख माँगने की शिक्षा दी जाती है। वहाँ बच्चों में बुरी आदतें पड़ती हैं। जब मैं कुछ बड़ा हुआ तो मैं खुद उन बुराइयों को दूसरों को सिखाने लगा जो मुझे सिखायीं गयी थीं। इस पर एक दिन मेरी बड़ी पिटाई हुई। मैं अनाथालय से निकाल दिया गया। फिर मुझे एक ईसाई मिला। उसके भी कोई न था। इस स्कूल में उसी ने भर्ती कराया। वही मेरे ऊपर खर्च करता रहा। पर मैं इतनी बुराइयाँ सीख चुका था कि पढ़ना अब मेरे लिये बस की बात न थी। फिर भी वह ईसाई मेरे लिये रुपया बहाता रहा। मैं सारी दुनिया को बुरा समझता था। इतना बुरा कि आग लगा दूँ। पर उस ईसाई को देख कर लगता था कि दुनिया में अच्छाई भी है। जानते हो वह मर गया है।

"कब" जीवन ने दर्द के साथ पूछा।

"दस रोज हुए। ठीक दस रोज हुए। उसी रोज जिस दिन मैंने उस लड़के को पीटा था," शिब्बन ने कहा।

कुछ देर ठहर कर वह फिर बोला, "मैंने उस लड़के को इसलिये पीटा था कि मैं उस ईसाई के बाद तुम्हें अच्छा मानने लगा था। उसके मर जाने पर मुझे लगा कि अच्छाई मर गयी। तुम्हें देख कर लगा कि नहीं अभी जिन्दा है। तुम्हारा थप्पड़ मुझे याद है। तुम अच्छे लड़के हो। मैं तुम्हें बुरा बनने से बचाना चाहता था। बुरा आदमी नहीं होता। परिस्थितियाँ बना देती हैं। मैं क्या कभी बुरा था। शिब्बन भी कभी जीवन-सा निर्दोष था। पर अब…"

उसने छाती की ओर संकेत कर के कहा, "यहाँ आग धधकती है। वह आग मुझे चैन से जीने नहीं देगी। जीवन मैं सोच रहा था कि डाकू बन जाऊँ या फिर आत्महत्या कर लूँ।"

जीवन उसका चेहरा देखता रह गया। दोनों ही विचार भयानक थे। उसने पूछा, "क्या तुम अच्छे आदमी की तरह जी नहीं सकते ?"

"नहीं," शिब्बन ने जोर दे कर कहा, "अब मैं अच्छा नहीं बन सकता। मैं हर चीज को जो मुझे अच्छी लगे पा लेना, छीन लेना, और न मिले तो मिटा देना चाहता हूँ। यह डाकूपन है। इसमें मुझे सुख मिलता है। पर इस सुख का रस भयानक है। मैं आदमी न रह जाऊँगा, इस रस को चख कर। इसी से सोचता हूँ जीवन कि मर जाऊँ। जीना बड़ा मुश्किल है। जीना बड़ा मुश्किल है।"

"मरना," जीवन मन ही मन काँपा, "मरना भी तो भयानक है।" उसने कहा, "पर मरना तो और भी बुरा है।"

शिब्बन बोला, "बुरा हो सकता है पर मुश्किल नहीं। पहाड़ देखते हो। उस पर से कूद कर मरा जा सकता है। आग जानते हो उसमें जल कर खाक हुआ जा सकता है। रेल की पटरी देखते हो, उस पर आराम से लेट कर कटा जा सकता है। चाकू जानते हो, जरा गहरा हाथ काफी है। मरना कतई मुश्किल नहीं।"

जीवन ने अपनेपन के साथ कहा, "पर मैं तुम्हें मरने नहीं दूँगा।"

शिब्बन पीड़ा को हँसी में घोल कर बोला, "मुझ में मोहन पैदा करो।

मेरे मरने को मुश्किल न बनाओ। मेरे इरादे को कमजोर न करो। मुझे इस तसल्ली के साथ मर जाने दो कि मैं इस दुनिया में बिल्कुल बेकार था, इसीलिए आत्महत्या कर ली।"

उसकी वाणी की वेदना ने जीवन के मर्म का स्पर्श किया। वह आँसुओं में गलने लगा। शिब्बन बोला, "रोओ मत दोस्त। अब तुम घर जाओ। देर हो गई है काफी। तुम्हारे घरवाले परेशान होंगे।"

पर जीवन न हिला। बैठा रहा। शिब्बन बोला, "अच्छा मैं चला। तुम मेरे बैठे रहते न जाओगे। अच्छा जीवन सुखी रहो। मैं चला।"

शिब्बन वहाँ से उठ कर चल दिया। जीवन को उसे जाते देख कर लगा कि अब वह कभी न मिलेगा। अब वह बहुत दूर जा रहा है, इतनी दूर कि लौट भी न सके।

और वही हुआ। अगले ही दिन शिब्बन के मरने की खबर स्कूल में गरम थी। उसने रेल की पटरी पर लेट कर जान दे दी थी। उस दिन स्कूल में छुट्टी कर दी गयी।

लड़कों ने छुट्टी की खुशी मनाई। किसी ने कहा, "उम्र भर उसने तकलीफ ही दी लोगों को, पर मर कर एक काम अच्छा कर गया। एक दिन की छुट्टी तो मिली।"

पर जीवन, उस दिन इतना विगलित था कि खाना भी न खा सका। घर में किसी से बोला भी नहीं। छत पर जाकर बैठ गया। कभी धूप में लेटता तो कभी छाँह में। वह समझ नहीं पा रहा था कि आखिर जिन्दगी का प्रयोजन क्या है? बार-बार उसके कानों में ध्वनि उठति, 'शिब्बन मर गया।' आखिर यह मरना क्या है? क्यों मर जाता है आदमी? क्यों पैदा होता है आदमी? कैसे जाने इस मरने को? कैसे जाने इस पैदा होने को? सब एक साथ मर क्यों नहीं जाते? इस दुनिया की जरूरत ही क्या है?

वह सोच रहा था। आसमान में दो पक्षी उड़े जा रहे थे। उनकी परछाइयाँ छत पर पड़ रही थीं। फिर वे उसी के पास मुँडेर पर आ कर बैठ गए। कभी एक दूसरे की चोंच में चोंच डालते। कभी एक दूसरे से फुदक-फुदक

कर लिपटते, प्यार करते। जीवन देखता और सोचता कि ये पक्षी ही क्यों जीवित हे ? इन्हें इस जीवन में क्या रस मिल रहा है ?

रस—जीवन का रस क्या है? किस से पूछे। उसे भाभी की भी याद आई। वे कितनी सुन्दर हैं, बोली कितनी मधुर है। पर जीवन का रस शायद उनके पास भी नही, तभी तो रोती हैं। तभी तो रिक्त-सी रहती है। फिर भी जीवित हैं। आखिर क्यों जीवित है ? सब शिब्बन की तरह ही क्यों नहीं मर जाते ?

वह तिखने पर था। उसने नीचे झाँक कर देखा। अगर वह कूद पड़े तो सब ठीक हो जायगा। सब परेशानी हल हो जाएगी। वह छत के किनारे पर आ गया। उसने चाहा कि कूद जाए। हाँ, कूद कर सब बातों से छुट्टी पा ले। पर हिम्मत न हुई। सहम कर पीछे हट गया। मरने की हिम्मत उसमें न थी। आखिर वह जीना क्यों चाहता है ? इसका कोई सन्तोषजनक जवाब न होने पर भी वह कूद कर आत्महत्या न कर सका।

उसने सोचा—शिब्बन कहता था जीना मुश्किल है। मरना आसान है। पर उसे लगा—मरना बेहद मुश्किल है। वह मर नही सकता। वह वहाँ से कूद पड़े तो उसकी हड्डी पसली सब बिखर जाएँ। शिब्बन को जब रेल के बेरहम पहियों ने कुचला होगा तो वह कितना भयानक हो उठा होगा !

शाम हो गयी थी। रात के साथ-साथ ठंड भी तीखी हवाओं का दामन पकड़ उतर आई थी। सूरज सफेद से लाल हो कर आग के गोले-सा बुझ गया था। थोड़ी देर तक आसमान में छिट-पुट तारे ही रहे। अँधेरे के साथ-साथ उनकी संख्या भी बढ़ती गयीं। नीड़ों की ओर लौटने वाले पक्षी भी अब पंख समेट चुके थे। मकानों की छतें, पेड़ों और मन्दिरों की चोटियाँ, पहाड़ियों की श्रेणियाँ धीरे-धीरे अन्धकार में अपना अस्तित्व खोने लगी थीं। और जीवन सोच रहा था कि आखिर मर जाने पर आदमी का क्या होता है ? शिब्बन का क्या हुआ होगा ?

शिब्बन—वह घबड़ा-सा उठा। उसने सुन रखा था कि आत्महत्या करने वालों की सद्गति नही होती। वे भूत-प्रेत बन जाते हैं। उनकी आत्माएँ हवा में हाहाकार करती फिरती हैं। सायँ-सायँ करती उस हवा में उसे शिब्बन की प्रेतात्मा बिलखती हुई मालूम पड़ी। डर ने उसे जकड़ लिया। उसने चाहा कि

आँख मीच कर डर को भगा दे। पर आँख बन्द करते ही अँधेरा और सघन हो गया। शिब्बन उसकी बन्द आँखों में शिला-सा अड़ गया। वह हँस रहा था। उसके मसूड़े चमक रहे थे, शिब्बन—जीवन ने चीख मारी। चीख हवा के पंखों पर तिरती हुई जाने कहाँ खो गयी। जीवन न तो आँखें खोल पा रहा था और न बन्द ही रख पा रहा था। उसमें इतनी ताकत भी न रह गयी थी कि छत पर से नीचे चला आए। भय ने उसे जकड़ कर पथरा दिया था।

भाभी का उस दिन कोई व्रत था। चाँद देख कर पारण करना था। चाँद अभी नीचे की ओर मकानों और पेड़ों की करवट में था। भाभी छत पर चाँद को अर्घ्य देने आईं। वहाँ उन्होंने देखा जीवन पथराया-सा पड़ा है। अर्घ्य का पात्र उनके हाथों से छूट गया। जीवन उसकी ध्वनि से चौंका और एक साथ ही दो मुखों से दो अलग-अलग ध्वनियाँ निकलीं।

जीवन ने पुकारा, "भाभी।"

भाभी ने पुकारा, "जीवन।"

जीवन जहाँ का तहाँ था। भाभी ने आगे बढ़ कर उसे उठा लिया। वह भयभीत-सा भाभी से चिपट गया। भाभी विकल-सी पूछती रही, "यह तुम्हें क्या हुआ जीवन। यहाँ इस समय क्यों ? जीवन। बोल तो मेरे लाल। कुछ तो बोल।"

जीवन भाभी के गरम मुलायम वक्ष को आँसुओं से भिगोता रहा। उसे वहाँ अभय मिल रहा था। वह चाहता था कि वह इसी तरह भाभी से चिपटा रहे, नहीं तो दुनिया भर के मुर्दे उसे फाड़ खाएँगे।

भाभी धीरे से वहीं छत पर बैठ गयी। जीवन उनकी गोद में मुँह डाल कर पड़ा रहा। चाँद इन दोनों को देखने जैसे और ऊपर उठ आया था। जीवन ने उसी में भाभी के मुख को देखा। सुन्दर मुख। उपवास और वत्सलता से पवित्र मुख। जीवन की मनोरमता का दृष्टान्त मुख। जीवन को रसमय और सुखमय सिद्ध करने वाला मुख।

और ठीक उसके विपरीत शिब्बन का मुख—बेढंगा-सा। रूखे कड़े बाल। गोल खूँखार-सी आँखें। हँसने में चमक पड़ने वाले मसूड़े। काला रंग। भद्दी चेष्टाएँ। मृत्यु जैसा सब कुछ। भयावना। भयावना।

जीवन के एक ओर शिब्बन था, दूसरी ओर भाभी। एक ओर मृत्यु थी, दूसरी ओर जिन्दगी। विकलता में जीवन पूछ बैठा, "मरने के बाद क्या होता है भाभी ?"

भाभी पीड़ित स्वर में बोली, "तू अभी से यह सब कुछ क्यों सोचने लगा। जब तेरी भाभी मर जाय तो यह सोचना।"

भाभी भी मर सकती है—जीवन घबड़ा गया। बोला, "नहीं भाभी, तुम कभी न मरना। कभी न मरना। मैं तुम्हें कभी नहीं मरने दूँगा।"

भाभी ने भी मुसकुरा कर कह दिया, "अच्छा नहीं मरने की। पर तुझे हुआ क्या ?"

जीवन ने शिब्बन की कहानी सुनाई। भाभी ने सुन कर गहरी साँस ली। बोली, "जीवन शिब्बन के एक भाभी होती तो यह सब कुछ न होता।"

जीवन ने भाभी के अंक में पड़े-पड़े अनुभव किया—मेरे भाभी हैं। चाँद-सी सुन्दर, चाँदनी-सी उज्ज्वल। हवा-सी सुखद, जल-सी तरल। अच्छी भाभी, प्यारी भाभी।

भाभी का कोमल मुलायम गात उसे नशीला सुख देने लगा।

पीपल वाली हवेली

मृत्यु का अनुभव यह जीवन का पहला था। मुर्दों को उसने देखा था पर मौत को न जाना था। शिब्बन की मौत ने उसे बताया कि मौत क्या है। मौत है एक निशान का मिट जाना। मौत है एक साँस का टूट जाना। मौत है एक अभाव का अमर हो जाना। मौत है एक चिर विराम का लग जाना। मौत है कोशिशों की आखिर हार। मौत है न फटने वाला अन्धेरा। मौत है अस्तित्व का लोप। और यह सभी कुछ उसने शिब्बन की मौत से अनुभव किया।

जीवन के मुहल्ले में एक मकान था जिसकी छत चौबारों के कारण, शायद

सबसे ऊँची थी। चौबारे पर जीवन अक्सर एक स्त्री को देखा करता। दूर से भी वह अपनी तरुणाई और सुन्दरता का धुँधला-सा आभास दे दिया करती। चौबारे की छत पर वह निठल्ली-सी घूमा करती। कभी आसमान में उड़ते पक्षियों को देखती, कभी पतंगों को। पतंग डोर के सहारे उड़ता है। पंछी प्राणों की डोर के सहारे उड़ता है। यह डोर उड़ने के लिए जरूरी है। इस डोर का नाम है जीवन का आधार। या जीवन की आसक्ति जिस से बंध कर जीवन टिका रह सके। पर जब यह डोर न हो, यह आधार या आसक्ति न हो? यह एक प्रश्न था उस युवती के जीवन का जिसे वह हल नहीं कर पाई थी।

जीवन छत पर पतंग उड़ाने जाता तो उसे अक्सर देखता, पर उसके अस्तित्व की वह वैसे ही उपेक्षा करता जैसे किसी कटे हुए पतंग की या उड़ते हुए दूरगामी पक्षी की। एक दिन की बात है। जीवन का पतंग उसी स्त्री की छत के ऊपर होता हुआ उड़ रहा था। उसने समीप से उड़ते हुए एक और पतंग को देखा और उससे पेंच लगा दिया। ढील चलने लगी। ढील चलती रही। ढील इतनी चली कि पतंग गोद छोड़ने लगा। ढील बढ़ती गई। गोद भी बढ़ती गई। बढ़ते-बढ़ते गोद उस स्त्री के चौबारे से कुछ ही ऊपर रह गई। तभी जीवन ने रोष और निराशा के साथ देखा कि उस स्त्री ने उसके पतंग की गोद में बाँस मार कर डोर अपने हाथ में ले ली। जीवन छोड़ देने के लिये चिल्लाया पर वह मुस्कुरा कर थामें ही रही! उसने यह भी नहीं किया कि ढील बढ़ाती रहती। फलतः जीवन का पतंग कट गया। जीवन आपे में न रहा। उसका नुकसान तो हुआ ही था, साथ ही मन की भी न निकली। वह अपना डोर-माँझा वहीं पटक उस स्त्री के घर की ओर भागा।

हवेली काफी बड़ी थी और उतनी ही सुनसान! ड्योढ़ी खुली थी! वह तीर-सा भीतर घुस गया। जीना ढूँढ़ते भी उसे देर न लगी। तेजी से छत पर चढ़ गया। छत पर से उसे चौबारे की छत पर जाने की नौबत ही न आई। वह स्त्री स्वयं ऊपर से उतर रही थी! जीवन हाँफ रहा था और साथ ही गुस्से से पागल भी था। स्त्री मुस्करा रही थी। इससे पहले कि जीवन कुछ कहे स्त्री बोली, "मैं जानती थी तुम आओगे!"

वह स्वागत कर रही थी। जीवन की साँस फूल रही थी। उसने हाँफते-हाँफते कहा, "आपने मेरा पतंग क्यों तोड़ा।"

स्त्री ने विहँस कर कहा, "अब तो तोड़ ही लिया।"

जीवन ने चिढ़ के साथ कहा, "और मेरा जो इतना नुकसान हुआ।"

स्त्री बोली, "बस इतनी-सी बात। नुकसान पूरा कर दूँगी। पर एक शर्त पर। तुम रोज मेरे पास आया करोगे। तुम मेरी छत पर से पतंग उड़ाया करोगे।"

जीवन का रोष अचरज में डूबने लगा। फिर भी उसने ठनक कर कहा, "नहीं, मैं नहीं आऊँगा। मुझे कोई गरज़ नहीं है। मुझे अपनी डोर चाहिए। मुझे मेरा पतंग दे दो।"

स्त्री बोली, "चलो मेरी ही गरज सही। मेरी ही गरज से आया करो।"

जीवन हारने-सा लगा। वह तो झगड़ा करने आया था। पर यह स्त्री तो मैत्री करना चाहती थी। उसने जैसे मैत्री को ठुकराते हुए कहा, "मगर तुम ने मेरा पतंग तोड़ा क्यों?"

स्त्री बोली, "मन कर आया था।"

जीवन फिर भड़क उठा, "मेरा मन तुम्हारी छत पर पत्थर बरसाने का होता है। बोलो, मैं पत्थर बरसाऊँ तो क्या होगा।"

स्त्री ने कहा, "कुछ खास नहीं होगा। कुछ चीजें टूट सकती हैं। किसी का सिर फूट सकता है। तुम्हें इस से खुशी हासिल हो तो जरूर करो।"

जीवन ने बिगड़ कर कहा, "तुम्हें मेरा पतंग तोड़ कर खुशी हुई।"

स्त्री ने कहा, "हाँ।"

इसका क्या उत्तर दे जीवन। स्त्री उसे देख कर बोली, "तुम अकेले उस छत पर पतंग उड़ाया करते हो। मैं अकेली इस छत पर आसमान निहारा करती हूँ। मैं ने सोचा कि तुम्हें भी साथी मिल जाय और मुझे भी, तो कैसा!"

यह अजीब साथ था। जीवन न तो उसकी आवश्यकता समझ पा रहा था, न औचित्य। वह उसकी भाभी थोड़े ही है। वह अभी ग्यारह-बारह साल का बच्चा। यह स्त्री उम्र में उसकी दुगुनी। वह सोचता रहा।

३

स्त्री पुनः बोली, "तुम नहीं समझे मेरी बात ! जब आया करोगे तो मैं समझा दूंगी। तुम बच्चे ही हो। कहीं भी रह जाते हो। पतंग ही तुम्हारा साथी बन जाता है। कितने भोले हो। बेजान पतंग, वह भी दूर-दूर उड़ने वाला। तुम्हारा पतंग यदि बोल भी सके तो तुम्हें कितनी खुशी हो। तुम ने कभी यह क्यों नहीं सोचा।"

जीवन को शिब्बन की याद आयी जो दुनिया में बिल्कुल अकेला था। जिसने अन्त में आत्महत्या कर ली थी। उसने सहसा स्त्री से पूछ डाला, तुम आत्महत्या की तो नहीं सोचती।"

स्त्री वेदना के साथ मुसकुराई। यह बालक अचानक ही आज उससे वह प्रश्न कर रहा था जो वह स्वयं से करती रहती है। वह भी सोचती है कि इस बिच्छिन्न जीवन का क्या प्रयोजन। क्यों साँसों का भार ढोया जाय। यह बच्चा भी पूछ रहा है। इसे यह सब कैसे अनुभव हुआ। उसने कह दिया, "सोचती तो हूँ, पर कर नहीं पाती। हिम्मत नहीं होती। लगता है मरने के बाद सिर्फ अँधेरा रह जाता है। तुम्हें अँधेरा अच्छा लगता है !"

जीवन अंधेरा पाकर रो लेता है। अपनी चोटों को सहला लेता है। भाभी उसे अपनी छाती से लगा लेती है। भैया की क्रूर दृष्टि से बच जाता है। अँधेरा तो बड़ा उपयोगी है। पर वह चुप रहा। स्त्री उसे कुछ अजीब लगी। उसने गौर से उसका चेहरा देखा। इस बार उसे वह सुन्दर भी लगी। भाभी के अलावा और भी कोई सुन्दर हो सकता है, यह वह नहीं जानता था। स्त्री ने उसे कंधे पर से छूते हुए कहा, "अच्छा चलो, नीचे चलो। ठंड बढ़ रही है।"

अँधेरा सिमटने लगा था। सीढ़ियों में अँधेरा था। अपरिचित सीढ़ियों पर जीवन धोखा खाने लगा। स्त्री ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोली, "मेरे सहारे-सहारे आओ। गिर पड़ोगे।"

जीवन उस स्त्री से सट गया था। उसे उसके मांसल स्पर्श ने चिर-परिचित-सी अनुभूति दी। भाभी भी तो…हाँ अँधकार में इस स्पर्श से वह इस स्त्री और भाभी का अन्तर नहीं समझ सकता था।

स्त्री उसे एक कमरे में ले गई। कमरा काफी बड़ा और खूब सजा हुआ

था। सुन्दर-सुन्दर चित्र पर्दे, गद्दीदार कुर्सियाँ, पलंग, उस पर बिछा सुन्दर बिस्तर, फर्श पर कीमती कालीन। उसे लगा जैसे स्त्री रानी है। उसके यहाँ बिजली भी थी। कमरे को उसने बिजली से जगमगा दिया। जीवन के घर में तो मिट्टी के तेल की लालटेन जलती है। उसे यहाँ सब कुछ अपूर्व लगा !

स्त्री उसके लिए खाने को कुछ मिठाई और नमकीन ले आई। एक छोटी-सी मेज पर सब कुछ सजाते हुए कहा, "लो, यह खाओ।"

जीवन ने उलझन के साथ कहा, "मुझे भूख नहीं।"

"कुछ तो खाओ," स्त्री ने आग्रह किया।

जीवन ने कोई चेष्टा नहीं की।

वह फिर बोली, "जो रुचे वह खा लो।"

जीवन ने उलझे-उलझे कहा, "मुझे अब जाने दो।"

"चले जाना, पहले खाओ तो," इतना कह कर स्त्री ने उसके मुँह में मिठाई रख दी। जीवन खाने लगा।

स्त्री हँस कर बोली, "मैं समझ गई। तुम मा, भाभी के लाड़ले जान पड़ते हो। अपने हाथ से खाने की आदत नहीं।"

जीवन झेंप गया। और खुद उठा-उठा कर खाने लगा। इस पर स्त्री बोली, "पर इतनी हड़बड़ क्यों ? इतमीनान से खाओ।"

पर इतमीनान रखने की कोशिश में भी जीवन ने कितनी ही मिठाई मेज पर गिरा दी। जैसे वह अपनी चेष्टाओं का स्वामी न रह गया था।

तभी स्त्री ने एक और प्रश्न किया, "तुम्हारा कितना नुकसान हुआ होगा।"

जीवन के पास इसका उत्तर मौन था। वह फिर बोली, "बताओ तुम्हारा कितना नुकसान हुआ ?"

"कुछ नहीं," जीवन ने सिर झुकाए झुकाए कह दिया।

स्त्री बोली, "झूठ कहते हो। लो, कल इसकी डोर पतंग खरीद लेना।"

स्त्री ने पाँच रुपए का एक नोट जीवन की ओर बढ़ा दिया।

जीवन का पतंग के लिए एक साथ कभी इतना द्रव्य मिलने की नौबत

न आयी थी। वह उस नोट को लेने की हिम्मत कर ही न सका। वह 'नहीं नहीं' करता हुआ अपनी कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ। स्त्री उसकी जेब में डालने की कोशिश करने लगी। जीवन विकल-सा बोल उठा, "देखो मुझे तंग मत करो। मैं नहीं लेने का, मेरा कुछ भी नुकसान नहीं हुआ। मैं फिर कभी नहीं आने का। कभी नहीं आने का।"

स्त्री ने हँस कर कहा, "अच्छा रुपए न दूँ तो आओगे। बोलो आओगे।"

जीवन ने कहा, "मुझे अब जाने दो।"

"पहले मेरी बात का जवाब दो। बोलो आया करोगे," स्त्री जैसे उससे याचना कर रही थी। कभी-कभी यह दर्द उसे भाभी की आवाज में भी सुनाई पड़ता था। उसने कह दिया, "आऊँगा। अब मुझे जाने दो।"

"चलो ड्योढ़ी से बाहर तक कर आऊँ," स्त्री उठ खड़ी हुई।

जीवन बोला, "मैं चला जाऊँगा।"

स्त्री ने कहा, "सीढ़ियों में मेरी ज़रूरत पड़ेगी। वहाँ अंधेरा है।"

ड्योढ़ी पर पहुँच कर स्त्री ने फिर कहा, "कल आना ज़रूर।"

जीवन उस आमंत्रण का कोई उत्तर दिये बिना तेजी से चल दिया! स्त्री ने दुबारा कहा, "कल मैं तुम्हारी राह देखूँगी।"

सड़क पर आकर उसने खुल कर साँस ली! यह सब क्या था, उसकी समझ में न आया। मकान के बाहर आते ही स्त्री के सम्बन्ध में उसकी जिज्ञासा बढ़ चली।

घर आ कर भी वह उसी स्त्री के बारे में सोचता रहा। कभी उस पाँच रुपए के नोट के बारे में सोचता जिसको न लेने का थोड़ा-थोड़ा उसे पछतावा होने लगा था। उसके पास तो इतने पैसे भी नहीं जो जल्दी से डोर पलंग की व्यवस्था कर सके। पर अधिक कुतूहल उसे उस स्त्री के बारे में ही था।

रात को भी वह सोने से पहले उस स्त्री के बारे में ही सोचता रहा जिससे आती-आती नींद भी दूर जा बैठी। अपने मन के कुतूहल को वह सिर्फ भाभी पर ही प्रकट कर सकता था, पर जब से लौटा उनसे मिलने का अवसर ही न पाया।

सोचते-सोचते जीवन सो गया। अगले दिन उठा भी देर से। इतवार

का दिन था। स्कूल जाने की चिन्ता न थी ! जाग चुकने पर भी गरम-गरम रजाई में पड़ा रहा।

जब देवराज दुकान पर चला गया तो जीवन भाभी के पास जा पहुँचा कमरे में घुसते ही बोला, "भाभी एक बात तो बताओ।"

भाभी प्रसन्नभाव से बोली, "सदा मैं ही बताया करूँ। या कुछ तुझे भी बताना चाहिए।

जीवन के मन का चोर डरा। कहीं भाभी को कल शाम की बात तो पता नहीं चल गई। बोला, "मैंने क्या किया। मैं क्या बताऊँ।"

भाभी ने मुसकुरा कर कहा, "तुम तो घबरा से गये। जरूर तुम ने कुछ किया है। अब तो तुम्हें ही बताना पड़ेगा। बताओ।"

जीवन सकपका कर बोला, "पीपल वाली हवेली में जो रहता है उसे तुम जानती हो।"

भाभी ने छेड़ते हुए कहा, "वहाँ कोई लड़की है क्या ?"

"भाभी, तुम तो बुरी बातें करती हो," जीवन झेंप रहा था।

भाभी ने फिर कहा, "तब तो जरूर ही किसी मिठबोली को ढूंढ़ लिया होगा।"

जीवन तुनक कर बोला, "मेरी बात का ज्वाब दोगी कि जाऊँ।"

"कहाँ," भाभी के इस प्रश्न में फिर शरारत थी। जीवन पैर पटकता-सा भाभी के पलंग पर बैठ गया, "लो मैं अब न कहीं जाऊँगा, न तुम से कुछ पूछूँगा।"

भाभी ने उसकी ठोढ़ी को छू कर चुमकारते हुए कहा, "वाह, मेरे राजा देवर रूठ गए। लाऊँ देवरानी को जो मनाए !"

जीवन ने विकल हो कर कहा, "भाभी, तुम मानोगी नही !"

भाभी विचलित होने वाली न थी, "बातों में रस तो आ रहा है। सुनने के लोभ से बैठ तो गये। ऊपर से बन रहे हो।"

"लो मैं चला," कह कर जीवन उठ खड़ा हुआ।

भाभी बोलीं, "अब तुम्हें अपनी भाभी अच्छी नहीं लगती।"

यह इल्जाम जीवन कभी सह नहीं सकता था। रुक गया। जहाँ का तहाँ

खड़ा रह गया। भाभी मुदित हो कर बोली, "मेरा लाडला देवर। बैठो। बैठो तो तुम्हारी बात का जवाब दूँ।"

जीवन ने हठीले बच्चे की तरह कहा, "नहीं मैं ऐसे ही सुनूँगा!"

भाभी ने उसे हाथ पकड़ कर बैठा लिया। स्वयं भी उसके पास बैठ गई। बोलीं, "उस हवेली में तुम्हारा पतंग कट कर गिर गया है क्या?"

"हाँ।" जीवन ने अपने जीवन में पहला झूठ भाभी से कहा।

भाभी ने झूठ पकड़ लिया। हँस कर बोली, "एक ही पतंग कट कर गिरा या कई?"

जीवन भाभी की चतुराई समझ गया। भाभी की गोद में सिर डाल कर बोला, "मुझे तंग न करो भाभी। बता भी दो।"

भाभी बोली, "अरे बावले कुछ बताने को हो तो बताऊँ। उस हवेली में तो कोई परदेसी रहता है। थोड़े दिन से आया है। उसके यहाँ किसी का आना-जाना भी नहीं। हमारे यहाँ से भी कोई कभी गया नहीं।"

जीवन निराश हो गया। भाभी नहीं बता सकी तो अब किस से पूछे। भाभी ने अब अपना प्रश्न किया, "पर तुम पूछ क्यों रहे हो?"

जीवन के मन में आया कि सब बात बता दे। पर जाने फिर क्यों सकुचा गया। भाभी भी इस तरह मानने वाली नहीं थी। कुछ तो बताना ही होगा। जीवन ने कह दिया, "भाभी उस हवेली की छत पर से किसी ने मेरा पतंग तोड़ लिया।"

"किस ने, तुमने देखा?" भाभी ने पूछा।

जीवन फिर झूठ बोल गया, "अँधेरा हो चला था। ठीक-ठीक देख न सका।"

भाभी ने उसे छेड़ते हुए कहा, "तुम्हें एक कला तो खूब आ गई।"

"क्या?" जीवन ने पूछा।

"छिपाने और झूठ बोलने की।" भाभी ने कह दिया। फिर बोली, "छिपाओ! आज नहीं तो कल मुझे बताना ही होगा।"

इसके कुछ देर बाद ही जीवन पीपल वाली हवेली की तरफ चल दिया।

वह क्यों जा रहा है, यह स्वयं उसे पता न था, फिर भी जा रहा था। आधे रास्ते जा कर वह ठिठका। पर लौट न सका।

स्त्री जीवन को आँगन में ही मिल गई। आँगन काफी बड़ा था। उस में छोटी-छोटी बहुत-सी क्यारियाँ थीं। उन में तरह-तरह के फूल वाले पौधे थे। बहुत से गमले भी थे। जिनमें फूलों की मुस्कान बिखेरते हुए पौधे जैसे एक दूसरे को देख रहे थे। वहीं एक बड़ी जाली थी, जिसमें बेलें लहरा रही थीं और जिन पर बहुत सारी चिड़ियाँ फुदक-फुदक कर अपना मनोरंजन कर रही थीं। दो पिंजरे भी पास ही टंगे थे। एक में काली मैना थी और दूसरे में लालू सुग्गा। एक कुत्ता भी था, खरगोश-सा प्यारा, जो आँगन में किलोलें कर रहा था। समीप ही बहुत से कबूतर दाना चुग रहे थे। सब चिट्टे मनोहर गुटरगूँ में संगीत अलापते। एक बिल्ली भी थी जो इस समय भी सोने का उपक्रम कर रही थी। उसके उजले रंग पर काले धब्बे बड़े प्यारे लगते थे। जीवन इस सब कुछ को देख कर चकित रह गया, और सोचने लगा कि यह स्त्री कितनी भाग्यशाली है।

तभी एक प्रौढ़ा स्त्री आई। वह सीधे रसोई घर में गई और उसके जाने के थोड़े ही देर बाद बरतनों के खनकने की आवाज आने लगी। जीवन ने पूछा, "यह नौकरानी है।"

स्त्री ने कहा, "मिसरानी है। मेरा घर इसी के हवाले है। इस घर का हर काम यह करती है। खाना भी बनाती है। बर्तन भी माँजती है। बाजारी भी करती है। वक्त पड़ने पर मुझे डाँट भी देती है।"

इस आखिरी वाक्य के साथ ही वह स्त्री कुछ-कुछ हँसी। तभी रसोई के भीतर से आवाज आई, "मालकिन तुम्हारी यह कैसी खराब आदत है। दूध फिर ज्यों का त्यों रखा है। क्यों नहीं पिया रात को?"

स्त्री ने मुसकुराते हुए जीवन से कहा, "देखो उसने अपनी असलियत का सबूत कितनी जल्दी दे दिया!"

मिसरानी बड़बड़ाती रही। उसके बड़बड़ाने की आवाज़ बर्तनों की खनक में जाने किस प्रभाव की सृष्टि करती रही। अब वह बर्तन माँज रही थी। जीवन ने और किसी को न देख कर पूछा, "तुम अकेली हो?"

"ये सब तो हैं," स्त्री ने उन पौधों, चिड़ियाओं, कुत्ते, खरगोश, तोता-मैना की ओर संकेत कर किया !

यह कह कर वह कबूतरों के आगे दाना डालने लगी ! एकाध कबूतर को उसने उठा कर प्यार भी किया। दो-एक को हाथ में ले कर ऊपर को उड़ा दया। कुत्ता, उछल कर उसे रोकने की व्यर्थ चेष्टा करने लगा। चेष्टा में हार कर गुर्राया। स्त्री ने डाँट दिया, "मोती चुप।"

मोती, जीवन को काफ़ी पूर्व की वह घटना याद आ गई। मोती, एक काले, मरियल, जख्मी कुत्ते का चित्र उसकी आँखों में खिच आया। उसने इस मोती को देखा, कितना खूबसूरत था। पर याद उसे उसी मोती की आ रही थी। जाने वह जीता है या मरता है !

बिल्ली मोती की गुर्राहट से जाग गई थी। उसने एक बार मिचमिची आंख से देखा और फिर सो गई। स्त्री ने हँस कर कहा, "बड़ी सोने वाली है। रात भर चूहों की टोह में घूमेगी और दिन भर खुर्राटें भरेगी।"

जीवन पूछा, "यह कबूतरों को कुछ कहीं कहती ?"

स्त्री ने कहा, "नहीं।"

जीवन को अचरज हुआ। स्त्री ने कहा, "अचरज कुछ नहीं। साथ रहते-रहते कुत्ते-बिल्ली में भी प्यार हो जाता है। सब में प्यार हो जाता है। साथ में कुछ जादू है।"

फिर कुछ ठहर कर विषाद के साथ बोली, "पर शायद आदमी में नहीं होता। साथ रहते-रहते आदमी आपस में घृणा करने लगते हैं।"

इतना कह कर उसने अपने श्रोता के मुख को देखा। ग्यारह-बारह साल का एक बच्चा। उसने मन में सोचा यह क्या समझा होगा। यह अभी क्या जानता है। यह तो इन फूलों की तरह है।

उसने बात बदल कर पूछा, "तुम्हें मेरी ये चीजें पसन्द आई ?"

जीवन ने कहा, "बेहद।"

मिसरानी की आवाज़ फिर सुनाई दी, "मालकिन, आज बातों में ही दोपहर कर दोगी क्या ? लगता है अभी नहाई भी नहीं। नाश्ता ले कर आई।"

स्त्री ने कहा, "आज हम दो हैं नाश्ते में।"

मिसरानी ने खरखरे स्वर में कहा, "जाने कब होंगे दो ।"

उस भद्दे स्वर में भी दर्द था। स्त्री उस दर्द को पहचानती थी। उसने उसकी कुरेद सहने के लिए एक बार आँखें बन्द कर लीं। फिर जीवन से बोली, "तुम्हारा नाम क्या है ?"

उसने बताया, "जीवन।"

स्त्री हंसने की चेष्टा करती हुई-सी बोली, "यह भी कोई नाम है। नहीं, मुझे पसन्द नहीं आया। मैं···"

स्त्री रुक गयी थी। जीवन के मुख से सहसा निकला, "भाभी रुक क्यों गयी ?"

वह बोली, "नहीं, भाभी नहीं कहो मुझे। भाभी मत कहना मुझे। मेरा तुम सिर्फ नाम ले लिया करो। मुझे रजनी कहा करो।"

जीवन ने कहा, "रजनी भाभी।"

रजनी बोली, "नहीं और कुछ नहीं। तुम खाली रजनी नहीं कह सकते जीवन ?"

"तुम मुझ से बड़ी हो···", जीवन ने कहा।

रजनी बोली, "पर मैं तो चाहती हूँ कि तुम मुझे अपनी सहेली समझो। रजनी भी नहीं रज्जो कहो। मैं तुम्हें राजू कहा करूँगी। बोलो···चुप क्यों हो ?"

"रजनी !" जीवन ने झेंपते-झेंपते कहा।

"राजू !" रजनी ने प्यार में भर कर कहा। फिर ममता के साथ बोली, "चलो इन पौधों को सीचें।"

फिर दोनों ने झारी लेकर गमलों को सींचा, क्यारियों को सींचा, जाली को सींचा, और एक बार बीच में रजनी ने जीवन को ही सींच दिया। उत्तर में जीवन ने रजनी पर झारी उलट दी। दोनों हँस पड़े। मिसरानी फिर भीतर से चिल्लाई, "मालकिन, हँसी-ठट्ठा तो दिन भर होता रहेगा। तुम नाश्ते को तैयार हो जाओ।"

जीवन बोला, "मिसरानी बिगड़ रही हैं।"

रजनी ने कहा, "बिगड़ नहीं रही, यही तो उसका प्यार है। इसी से तो वह मुझे अच्छी लगती है।"

मिसरानी बड़बड़ाती हुई कह रही थी, "सारे जानवर तो पाल ही रखे थे। एक बन्दर की कमी थी। आज वह भी पूरी हो गयी।"

उसका स्पष्ट संकेत जीवन की ओर था। जीवन ने भी सुना। पर उसे बुरा न लगा। हँस कर बोला, "मिसरानी, अपनी रसोई का ताला बन्द रखना।"

रजनी हँस पड़ी। मिसरानी बड़बड़ाती रही।

इसके बाद दोनों ने नाश्ता किया। मिसरानी ने थोड़ी देर में कई चीजें तैयार कर ली थीं। जीवन को जब वह दुबारा परसने आई तो वह बोला, "बस-बस और नहीं।"

इस पर मिसरानी बिगड़ उठीं, "यहाँ खाओगे तो जैसे मैं खिलाऊँ वैसे खाना होगा। यहाँ बस नहीं चलने की। क्या सूखा-सा लड़का है। मिसरानी के हाथ का खायगा तो आदमी हो जायगा, नहीं तो बन्दर रह जाएगा, बन्दर।

अब जीवन पीपल वाली हवेली में अधिक से अधिक रहने लगा।

इसी तरह जाड़ा बीत गया। गर्मी आ गयीं। जीवन अपने जीवन में भराव पाने लगा। अब वह अकेला न था। उसे पतंग जैसे निर्जीव साथी की जरूरत न थी। अब उसकी एक हवेली थी। फुलवारी थी। बहुत से जानवर थे। एक रानी थी। एक रखवाली करने वाली बुढ़िया थी। उस हवेली में उसकी इच्छा का राज चलता था।

रजनी के साथ बातें करता हुआ वह कभी न अघाता था।

एक दिन उसने पूछा, "तुम्हारा व्याह हुआ रज्जो !"

रजनी ने कहा, "हर स्त्री व्याह करती है।"

उसने पूछा, "तुम अपनी कहो।"

वह बोली, "मेरे दो व्याह हुए। अब तीसरा करूँगी।"

जीवन को बड़ा अजीब लगा। उसने कहा, "ऐसा मजाक मत करो।"

वह बोली, "तुम यकीन नहीं कर पाते इसलिए मजाक समझते हो। मैंने सच कहा है।"

ऐसे ही एक दिन वह रजनी के घर पहुँचा तो वह दुमंजिले पर अपने सोने

वाले कमरे में छाती से किसी चीज को चिपटाए पलंग पर पड़ी रो रही थी। जीवन दरवाजे की चौखट पर खड़ा चुपचाप उसका रोना सुनता रहा।

थोड़ी देर में रजनी का रोना बन्द हुआ। पर वह दुख में इतनी डूबी थी कि उसने सामने खड़े जीवन को देखा भी नही। छाती से उसकी कोई चित्र चिपटा था। उसने उसे अलग किया। चूमा। बार-बार चूमा और फिर धीरे से तकिये के नीचे रख दिया। चित्र को रख कर उसने फिर निकाला। फिर चूमा, फिर रख दिया और फिर औंधी होकर बिस्तर पर लेट कर रोने लगी। सुबकियों में उसका सुन्दर देह हिल-हिल उठता।

अब जीवन से चुप न रहा गया। उसने भर्राए गले से पुकारा, "रज्जो !"

रज्जो सुबकियाँ लेती रही। उसने उसके सिरहाने बैठते हुए कहा, "रज्जो रोती हो।"

रज्जो ने किसी तरह स्वयं को संयत किया। जीवन रोने से सूजी उसकी आँखों को देख कर बोला, "तुम रोती भी हो।"

रजनी ने अपार कष्ट के साथ कहा, "रोती ही तो हूँ।"

फिर बोली, "तुम स्कूल नहीं गये !"

'आज छुट्टी है," जीवन ने कहा।

रजनी ने सुना। सोचा, "छुट्टी हर चीज़ की होती है। इस दर्द से भी क्या मुझे कभी छुट्टी मिलेगी।"

फिर वह पलग से उठती हुई बोली, "तुम बैठो मैं अभी आयी।"

जीवन अकेला कमरे में रह गया। उसने खिड़की से बाहर की तरफ झाँका। वहाँ देखने को कुछ न था। उस तरफ़ दूसरे मकान की दीवाल थी। उसकी दृष्टि कमरे में ही लौट आई। वह फिर अनायास ही पलंग पर लेट गया। लेटते ही उसका हाथ तकिये के नीचे जा पहुँचा। वहाँ एक फोटो था। उसने. निकाला। देखा। देखता रहा। कितनी ही देर तक देखता रहा। फोटो पर एक ओर लिखा था—'रज्जो का···राजू।'

यह राजू कौन है ?···जीवन सोचने लगा। क्या रज्जो का पति ? कौन-सा पति। वह कहती है, मेरे दो ब्याह हुए हैं। पहले ब्याह का या दूसरे ब्याह का ?······

जीवन फोटो देखने लगा। उसमें एक स्वस्थ सुन्दर युवक था। भोला प्यारा मुख। बड़ी-बड़ी आँखें। छोटी-छोटी व्यवस्थित मूँछे। दृष्टि बड़ी ही कोमल। होंठो पर बड़ा ही मधुर हास।

जीवन को वह व्यक्ति अच्छा भी लगा। हल्की-सी ईर्ष्या भी हुई। रजनी उसे इतना प्यार करती है। क्यों करती है?

उसने फोटो जहाँ का तहाँ रख दिया। फिर सोचने लगा···रजनी मुझे राजू कहती है। क्यों कहती है? वह चाहती है कि मैं उसे रज्जो कहूँ। क्यों कहूँ?

जीवन अशान्त हो उठा। रजनी नहा-धोकर कपड़े बदल कर चली आई थी। जैसे रात प्रभात के सरोवर में स्नान करके उषा-सी खिल उठी हो। जीवन रजनी को देख कर सोचने लगा—ओः कितनी सुन्दर है रजनी।

रजनी के पीछे मिसरानी ने भी बड़बडाते हुए प्रवेश किया, "अब वक्त हुआ रानी साहेबा के नाश्ते का। मैं कहती हूँ दस बजे नाश्ता होगा तो खाना कब खाओगी। मालकिन मुझ से तुम्हारी नौकरी नही निभने की। रोज की रोज तुम दुबली होती जा रही हो। मैं यह सब नहीं देख सकती। मेरा हिया पत्थर का नहीं।"

मिसरानी मेज पर नाश्ता सजा कर चली गयी। रजनी ने उसकी बड़बड़ाहट का उत्तर सिर्फ मौन से दिया। उसके चले जाने पर बोली, "राजू, मिसरानी न हो तो मैं मर ही जाऊँ!"

जीवन अचानक कह बैठा, "मुझे राजू मत कहा करो।"

"क्यों?" रजनी को अचरज हुआ।

"मै राजू नहीं," जीवन ने हठी लड़के की तरह कहा।

रजनी वेदना के साथ बोली, "कौन क्या है, यह तो मैं स्वयं नहीं जानती। पर तुम राजू हो। तुम मेरे राजू हो। जीवन···आः नहीं जीवन नहीं। राजू हो। नन्हें से राजू। राजू तुम्हें रज्जो प्यार करती है। मुझे एक बार रज्जो तो कहो।"

जीवन चुप रहा। रज्जो गलने लगी। बोली, "मै दुखी हूँ राजू आज। आज मैं स्वयं से हार रही हूँ। मुझे रज्जो कहो। कहो रज्जो। मैं आये दिन दुख को ले कर जी नहीं सकती। राजू चुप क्यों हो?"

जीवन चुप रहा। रज्जो ने कुछ आँसू और गिरा दिये। नाश्ते पर मक्खियाँ भिनभिनाती रहीं। बीच में एक बार फिर मिसरानी आयी। नाश्ते को जैसा का तैसा देख कर बिगड़ कर बोली, "बस मालकिन, मेरी नौकरी आज से खतम ! मैं अब गंगा में डूब मरूँगी। मुझ से अब तुम्हारा काम नहीं होने का ! लो यह अपने भंडार की चाबियाँ ! दो मुझे छुट्टी।"

इतना कह कर मिसरानी ने तालियों का गुच्छा पटक दिया। रजनी ने आँसू पोंछ लिये। जीवन से बिना कुछ कहे नाश्ता करने लगी। मिसरानी ने गुच्छा उठा लिया। नीरस स्वर में बोली, "तू क्यों बैठा है रे छोकरे। तेरे हाथ नहीं क्या ? यह सब किसके लिये धरा है। उठ खा ! सब एक-से। सब एक-से। मैं कहती हूँ अभी तो मैं बुरी लगती हूँ। पर जब मैं मर जाऊँगी तो तुम्हें पता चलेगा। याद करोगे मिसरानी को। खा।"

मिसरानी ने 'खा' इतनी ज़ोर से कहा कि जीवन रजनी दोनों हँस पड़े। रजनी ने भी कहा, "खाते क्यों नहीं जीवन।"

"मुझे भूख नहीं," वह बोला।

रजनी ने कहा, "खा भी लो, नहीं तो मिसरानी डूब मरेगी।"

मिसरानी बोली, "इसे झूठ न समझो। मैं कहती हूँ एक दिन मुझे डूबना ही होगा। मेरी मौत ऐसे ही लिखी है। समझीं तुम मेरी जिन्दगी खत्म करके ही रहोगी।"

जीवन नाश्ता करने लगा। मिसरानी चली गयी। रजनी बोली, "जीवन, मिसरानी जैसी सारी दुनिया होती तो कितना अच्छा हो।"

जीवन चुप रहा। कुछ रुक कर बोला, मुझे राजू ही कहो तुम।"

"आः मेरे राजू···" रजनी पुलकित हो उठी, "तुम भी दुष्ट हो। मुझे भला रुलाया क्यों ? क्यों नहीं कहा मुझे रज्जो।"

तभी मिसरानी फिर आयी। तेज स्वर में बोली, "मालकिन, तुम जीव हत्या क्यों कर रही हो। इन चिड़ी-कबूतरों को उड़ा क्यों नहीं देतीं। वह कलमुही मैना मेरे हाथ से कुछ नहीं लेती। मुझे मोटी मिसरानी कहकर चिढ़ाती है। और वह जल गया सुआ। 'रज्जो रज्जो' चिल्ला रहा है। मैं कहती हूँ तुम उनके दाने-पानी की फिकर नहीं कर सकतीं तो, क्यों उन्हें

पिंजरे में बन्द कर रखा है। तेरे मोती को तो मैंने खिला दिया। पर उस जल गयी बिलाई का कोई पता नहीं। दिन में भी चूहों की ताक-झाँक में होगी। रहे तेरे कबूतर। उनकी काबक से बदबू होती है। मैं उसे नहीं साफ कर सकती। तुम्हें उनसे प्यार हो तो आप करो।"

कड़कती-भड़कती-सी मिसरानी चली गयी। रजनी ने कहा, "चलो जीवन। नीचे चलें। पहले तोता-मैना की सुध लें।"

वे दोनों नीचे आये। जीवन क्यारी गमलों को सींचने लगा रजनी ने सब को चुगा दिया। ग्यारह का वक्त हो गया था। धूप में तेजी थी। थोड़ी ही देर में मुँह पर पसीने की बूंदे चमकने लगीं। खुले बाल हवा से उड़ कर पसीने से मुँह पर चिपक गये। रजनी बनलता-सी सुन्दर लग रही थी।

इसके बाद वे दोनों अन्दर कमरे में चले आये। रजनी ने कमरे की खिड़कियाँ बन्द कर लीं और पर्दे खींच लिये। बाहर भी हवा में थोड़ी-सी गर्मी थी, इसलिए उसने किवाड़ ढुका कर छत का पंखा चला दिया। फिर थकी-सी पलंग पर लेट गयी।

जीवन ने पास ही कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "आज तुम बड़ी जल्दी थक गयीं रज्जो।"

वह बोली, "निराशा की थकान बहुत होती है राजू। अब मैं निराशा से हार रही हूँ। आज मेरा विश्वास डोल रहा है। अब मैं अपने आप में कमजोर और रिक्त हो उठी हूँ। आज मैं कुछ चाहती हूँ। पर क्या चाहती हूँ नहीं जानती। राजू···तुम दूर क्यों बैठे हो। पास बैठो। यहाँ बैठो।"

जीवन उठ कर पलंग पर बैठ गया। रजनी बैठे स्वर में कहती गयी, "मेरा दिल डूब रहा है आज। देखो राजू, देखो, मेरे दिल की धड़कन सुनो।"

इतना कह कर उसने राजू का हाथ अपनी छाती पर रख लिया। हाथ को वहीं रखे-रखे बोली, "तुम कुछ नहीं समझ सकते राजू। अभी तुम बहुत छोटे हो। बहुत छोटे हो। अभी तुम उस तोते जैसे हो। नहीं वह शायद समझता होगा। मैं कैसे कहूँ कि तुम किस जैसे हो। राजू, ओः तुम्हें समझाने में अभी वक्त लगेगा। मैं तो तब तक मर जाऊँगी।"

रजनी विकल स्वर में कहती गयी, "मेरी बात कोई नहीं समझता। मैं किसी में अपना सब कुछ स्थापित कर देना चाहती हूँ। ये दीवालें देखती हैं पर पत्थर रहती हैं। यह हवा छूती है पर मेरे पास ठहरती नहीं। आसमान बेहद दूर है और उससे भी दूर उसके चाँद, सूरज, सितारे। धरती बड़ी कठोर है। सोचा इन पौधों से कहूँ। पर ये सब गूंगे-बहरे हैं। न मैना समझती है, न सुग्गा। मैं किस से कहूँ अपनी वेदना। मिसरानी को सुनाऊँगी तो वह डूब मरेगी। राजू, तुम समझो न। मैंने तुम्हें इसीलिए तो बाँधा है। मैं निर्जीव चीजों से ऊब गयी थी। मैं गूंगे पशु पक्षियों से भी ऊब गयी थी। तुम्हें मैं पतंग उड़ाते देखा करती, वह भी अकेले। तुम टकटकी लगाये अपने पतंग को देखा करते। मुझे लगा तुम्हें भी साथी की ज़रूरत है। ओः तुम बच्चे हो। फिर भी मैंने सोचा शायद मेरे साथी बन सको। मुझे साथी बना सको। राजू, आः साथी के बिना जीवन कितना सूना होता है।"

जीवन चुप था। रजनी करवट ले कर सिसकने लगी। जीवन उसके पास लेट गया। रजनी का रुदन तीव्र हुआ। जीवन उसकी पीठ से चिपक गया। वह नहीं जानता था कि ऐसी अवस्था में किसी को चुप करने के लिये क्या करना चाहिए। उसने 'रज्जो' कहा और स्वयं रो पड़ा। रजनी उसका रोना सुन करवट बदल कर उससे चिपट गयी और अब दोनों ही रो रहे थे। काफी तेज़। उधर मिसरानी रसोई घर में बड़बड़ा रही थी।

रजनी ने रोते-रोते कहा, "राजू तुम किसी से प्यार न करना।"

जीवन चुप था। रजनी बोली, "आज मैं तुम से सब कुछ कह दूंगी। सब कुछ कह दूंगी। राजू वह सब आग मैं अपने दिल में सुलगती हुई नहीं रख सकती। राजू तुम नहीं जानते मेरे पति ने मुझे छोड़ दिया है। वह बहुत बड़ा आदमी है। बहुत पैसे वाला। उसने मुझे यह हवेली दे दी। ढेरों रुपया दे दिया। पर उसने मुझे छोड़ दिया है। उसने दूसरा ब्याह कर लिया है। मैं खुद उस पति को पाने से पहले अपना ब्याह रचा चुकी थी। मन से ब्याह रचा चुकी थी। आत्मा से किसी की दुल्हिन हो चुकी थी।"

रजनी ने आगे कहा, "उसे मैं राजू कहती थी। वह मेरे बचपन का साथी था। वह जब छोटा था तो ठीक तुम्हारे जैसा था। वह भी पतंग

उड़ाया करता था। मैंने बचपन में एक बार उसका पतंग तोड़ लिया था अपनी छत पर से। वह मुझ से लड़ने आया था। पर जब लौटा तो प्यार करने लगा था। वह मुझे रज्जो कहता था। तुम्हें देख कर मुझे उसी की याद आया करती थी। उस दिन मैंने तुम्हें पतंग उड़ाते देखा। तुम मुझे ठीक राजू लगे। मैं तुम्हें देख कर एकदम छोटी बन गयी। रज्जो हो गयी।"

आँसुओं ने उसका गला रूँध दिया। वह रुक कर बोली, "जैसे डोर का सहारा पा कर पतंग बधता है इसी तरह साथ का सहारा पाकर प्यार। हम हिलमिल गये थे। अधिक साथ रहते थे। अधिक प्यार करने लगे थे। और इसी तरह बड़े हो गये। छुटपन में जो बात सहज थी बड़े हो कर वह जटिल हो गयी। हम दोनों ने चाहा कि हमारा ब्याह हो जाय, पर जाने वह क्यों नहीं हो सकता था। लोग कहते थे हमारी जाति एक न थी। पर मुझे तो वह अच्छा लगता था। उसे तो मैं अच्छी लगती थी।"

"बड़ा हो कर वह फौज में भरती हो गया। उसके घर के काफी लोग फौज में अच्छे-अच्छे पदों पर थे। वह भी कोई अफसर हो गया था। वह बहुत बहादुर था। वह बचपन से ही ऐसा था। एक बार पतंग उड़ाते-उड़ाते उसे बन्दरों ने छत पर घेर लिया था। उसे जगह-जगह से काट खाया था। पर उस अकेले ने इस पर भी उन सब बन्दरों को लात घूँसों से मार भगाया था। मैं उसके घाव देख कर रो पड़ी थी। वह हँस पड़ा था। बोला, "ये तो बन्दर थे, मैं शेर से भी लड़ सकता हूँ।"

रजनी ने आँखें बन्द कर ली थीं। उसी अवस्था में बोली, "मैं उसकी इस बात से दहल गयी थी। मैंने उसे कसम दी थी कि वह मेरी खातिर कभी शेर से न लड़ेगा। मैं तब यह भी नहीं सोच सकती थी कि शेर कौन से छतों पर रहते हैं।"

उसने गहरी साँस छोड़ी। आँखें धीमे से खोली और फिर बन्द करलीं, "बहुत-सी बातें हैं। मुझे उसके साथ का एकएक क्षण याद है। मैं उन क्षणों को नहीं भूल सकती। मैंने भूलने की कोशिश की पर तब भी न भूल सकी थी। उसे भूलने के लिये ही मैं ब्याह करने पर राजी हो गई थी। मेरा होने वाला पति अपार धन का मालिक था। सबने मेरे भाग्य को सराहा।

मैं तो मामूली घर की थी। चाचा ने पाला था। मा-बाप की तो याद भी नहीं। चाचा भी ब्याह के बाद चल बसे। जाने उनके बच्चे कैसे हैं। मैं कुछ नहीं जानती। मेरा ब्याह इतने बड़े घर में सिर्फ़ इसलिये हो सका था कि मैं सुन्दरी थी। राजू बोलो, तुम्हें भी लगती हूँ मैं सुन्दर। आः बोलो, ऐसा क्या है जो मैं सुन्दर लगती हूँ। और मैं सचमुच ही सुन्दर थी तो राजू ने मुझ से जबरदस्ती ब्याह क्यों नहीं कर लिया। अगर मैं सुन्दर थी तो मेरे पति ने मुझे छोड़ क्यों दिया ?"

आवेग से भर कर वह मूक हो गयी थी। जीवन ने उसके घुटनों पर माथा टेक दिया था। वैसे ही सिर टेके-टेके बोला, "पर उन्होंने ऐसा क्यों किया ?"

"क्यों ?" रजनी क्यों को दोहरा कर चुप हो गयी !

फिर उसने तकिये के नीचे से उस फोटो को निकाला। वेदना से विद्ध स्वर में बोली, "इस फोटो के लिये ही मुझे पति ने घर से निकाला। उन्होंने कहा कि मैं इसे फेंक दूँ। यह राजू का फोटो है। मेरे राजू का फोटो। उसने मेरे ब्याह पर यही एक उपहार भेजा था। यही एक उपहार। मैं इसे छिपा कर रख न सकी। मैं अपने पति से कुछ भी छिपा न सकी। यदि मैं थोड़ा झूठ बोल सकती तो यह कुछ न होता। झूठ को जाने क्यों बुरा समझा जाता है। झूठ बोल कर तो बहुत-सी मुसीबतें टाली जा सकती हैं। झूठ से तो किसी का बहुत बड़ा हित हो सकता है। पर मैं अपने पति को भी प्यार करने लगी थी। ओः यह प्यार क्यों हो जाता है। एक से होता है, फिर दूसरे से भी हो जाता है। आः मैं सच बोल कर मिट गयी। मैंने......"

रजनी जोरों से रो पड़ी। जीवन भी रो पड़ा था।

स्वर को संयत कर रजनी ने कहा, "मेरा राजू अब नहीं रहा। तुम्हें नहीं मालूम। जिस दिन मेरी शादी हुई उसी दिन उसने अपने गोली मार ली थी। मैं उसके फोटो और उसकी मौत की खबर के साथ-साथ रोती-रोती ससुराल आयी। मैंने अपने पति से कहा : यह उसकी एक मात्र निशानी है। इतने उदार बनो कि इसे मेरे पास रहने दो। वह अब इस दुनिया में नहीं। लेकिन इस चित्र और मेरी याद में उसे जीवित रहने दो। मैं तुम्हारी दासी

हूँ। मै तुम्हारे जूतों से भी बदतर हूँ। मैं तुम्हारे लिये अपने प्राण भी दे सकती हूँ। तुम इसे मुझ से अलग न करो।"

जीवन फोटो को देख रहा था। देखते-देखते सोच रहा था कि क्या बड़ा हो कर बाद में वैसा ही हो जायगा ? क्या रज्जो तब भी ऐसी ही रहेगी ? क्या मैं रज्जो से ब्याह नहीं कर सकता। रज्जो कहती है मैं तीसरा ब्याह करूँगी। क्या मुझ से वह ब्याह कर सकेगी ?

जीवन के शिशु-मन के स्वप्न से अपरिचित रज्जो अपनी कहानी सुनाती रही, "पर वह न माने। उन्होंने मुझे एक रात सोचने को दी। कहा: अगर कल मैंने इस चित्र को इसी कमरे में पाया तो मेरा तुम से कोई सम्बन्ध न रह जायगा। आ: मैं तब भी विश्वास नहीं कर सकी कि वे इतने कठोर हो सकते हैं। जाने मैं क्यों मानती रही कि मैं उन्हें मना लूँगी। वे इतनी दया मुझ पर करेंगे ही। पर वैसा न हुआ। फोटो अगले दिन भी वहीं रहा, और शादी के पहले ही साल मैं अपने पति से वंचित हो गयी। हम साथ-साथ रहने पर भी दूर थे। वे मुझ से बोलते तक न थे। अक्सर बाहर रहते। इसी तरह बरसों गुजर गए। और एक दिन वे मुझ से बोले, इतना भर कहने को बोले कि मैं दूसरा ब्याह करने जा रहा हूँ। मैं बेवफा औरत के लिये अपनी जिन्दगी तबाह नहीं कर सकता।

"बेवफा...," रजनी ने दर्द के साथ दोहराया। बोली, "मैं नहीं जानती कि बेवफा कैसे हुई। मैं यह भी नहीं जानती कि कोई एक व्यक्ति क्यों किसी दूसरे व्यक्ति को इतना बाँध ले। क्यों नहीं एक कई को प्यार कर सकता। हर कोई एक नहीं हो सकता फिर भी प्यार किया जा सकता है। प्यार भी तो एक नहीं। पर कोई नहीं समझता। कहानियों में प्यार पुण्य है। जीवन में प्यार अभिशाप है। समाज में प्यार पाप है। बस उनका ब्याह हो गया। दुनिया वालों को कह दिया गया कि बहू के बच्चा नहीं होता, इसी से दूसरा ब्याह कर रहे हैं। दूसरी बहू आ गयी। कलह आ गयी। और फिर यह भी कह दिया गया कि प्यार की शान्ति के लिये दोनों बहुएँ अलग-अलग शहरों में रहेंगी। मैं मेरठ से कनखल भेज दी गयी। राजू तुम मुझे जहर ला दो तो मैं इस जिन्दगी के बवाल से छुटकारा पालूँ।"

तभी मिसरानी ने नीचे आँगन से चिल्लाना शुरू किया, "मेरी जिन्दगी तो बवाल हो गयी। मैं कहाँ डूब मरूँ ? मालकिन कुछ मालूम है सूरज कहाँ पहुँच गया। अब रोटी कब खाओगी। हाय मैं बुढ़िया कहाँ डूब मरूँ। मेरी कोई नहीं सुनता। मेरी सिर्फ गंगा मा सुनेंगी। मालकिन ये रोटियाँ धरी-धरी मेरी जान को रो रही हैं। बोलो अब भी खाने का वक्त हुआ या नहीं।"

रजनी ने जीवन से कहा, "कह दो आज मेरी तबीयत ठीक नहीं। मैं नहीं खाने की !"

जीवन ने बाहर छज्जे पर आ कर यही कह दिया। मिसरानी विकल हो उठी। बोलती-बोलती सीढ़ियाँ चढ़ने लगी, "अरे क्या हुआ मेरी लाड़ली को। हाय मैं मर जाऊँ। क्या हो गया ? तबीयत ठीक नहीं ? हे राम जी मालकिन की बलाएं मेरे ऊपर। हाय क्या हो गया, मेरी रानी-सी मालकिन को।"

हाँफती-हाँफती वह ऊपर आयी। रजनी को छू कर देखा तो चीख पड़ी, "हाय दैया। तुम्हें तो बुखार हो गया। फिर भी मालकिन तुम इस तरह बैठी हो। कोई कपड़ा भी नहीं ऊपर। हायरे मैं क्या करूँ, मैं क्या करूँ।"

चिल्लाते-चिल्लाते बुढ़िया ने उस पर कम्बल लाद दिये। पंखा बन्द कर दिया। जीवन से बोली, "तू यहीं रहियो बेटा, यहीं रहियो ! मैं किसी डाक्टर-हकीम को ले आऊँ। हे राम जी, हे राम जी, तूने यह क्या ठानी।"

जैसे प्रलय होने जा रहा हो, ऐसे चिल्लाती हुई मिसरानी डाक्टर को बुलाने चल दी।

डाक्टर आया और देख गया। उसने कह दिया घबड़ाने की कोई बात नहीं, बुखार है। यह आश्वासन दे कर वह चला गया। दवाइयाँ लिख कर दे गया, कह दिया दुकान से मँगा ले। मिसरानी ने चलते-चलते डाक्टर के लिये अनन्त शुभ कामनाएँ प्रकट कीं। वह डाक्टर के पीछे-पीछे दवाइयाँ लेने चली गयी। फिर उस दिन की रसोई को किसी ने छुआ तक नहीं। मिसरानी कई बार खाने की कोशिश के बावजूद भी न खा पायी। रजनी को खाना देना नहीं था। जीवन किसी भी तरह खाने को राज़ी न हुआ।

वह घर भी नहीं गया। दवा दो-दो घण्टे पर देनी थी। यह जिम्मेदारी उसने ले ली थी। रजनी उसे हर बार कहती, "क्यों पिला रहे हो मुझे कड़ुए घूंट। मैं बचना नहीं चाहती राजू। मैं अब नहीं बचूँगी राजू।"

जब वह ऐसा कहती तो राजू रोने लगता। उसे रोते देख कर वह दवा पी लेती और कहती, "तुम तो बिल्कुल लड़की हो। हर बात में रो पड़ते हो। तुम्हीं बताओ कि मैं जीऊँ किसलिये। बोलो, कौन-सा सुख है जो मैं जी कर पा रही हूँ। मेरे लिये जीने-मरने में अब कोई फर्क नहीं।"

जीवन ने छत की तरफ देखते हुए कहा, "रज्जो, तुम तीसरे ब्याह की बात कहती थीं न।"

रजनी उसका संकेत समझ गयी। ईषत् मुस्कान के साथ बोली, "तुम कितने भोले और अच्छे हो राजू। मैं तीसरा ब्याह करूँगी पर इसके लिये मुझे नया जनम लेना होगा। कौन जाने तब तुम मुझे पहचानो भी या नहीं।"

जीवन ने बिगड़ कर कहा, "रज्जो, तुम मरने की बात आज बन्द नहीं करोगी?"

रजनी ने समर्पण कर दिया, "अच्छा जो बात तुम करो।"

तभी मिसरानी आयी। बिगड़ती हुई बोली, "मालकिन, बीमार को माथा-पच्ची नहीं करनी चाहिए। मैं देख रही हूँ कि तुम बराबर बोल रही हो। देखो, अब बोलोगी तो ठीक न होगा।"

मिसरानी डाँट-डपट कर चली गयी। रजनी आज्ञाकारिणी-सी चुप-चाप लेटी रही। जीवन सजग परिचारक-सा बैठा रहा।

पर डाक्टर ने जो आश्वासन दिया था वह सच न निकला। अठवाड़ा बीत गया। बुखार न उतरा। जीवन घर से तो स्कूल का बहाना करके चलता और चक्कर काट कर आ पहुँचता रजनी के पास। रजनी का बुखार चौबीस घण्टे में एक घड़ी को भी नहीं उतरता। आठवें रोज डाक्टर ने कह दिया टायफायड है। बहुत सावधानी की जरूरत है।

रजनी ने भी सुना, राजू ने भी सुना, मिसरानी ने भी सुना।

रजनी ने सोचा, मौत से भी सावधानी।

राजू ने सोचा, रज्जो मर गयी तो क्या होगा।

मिसरानी ने सोचा, मालकिन को कुछ हुआ तो वह डूब मरेगी।

मिसरानी ऊपर के काम में लगी रहती, जीवन रजनी के पास बैठा रहता रात को उसे हार कर घर जाना पड़ता। मुश्किल से ही वह खा पाता। सो भी जाता तो रजनी के स्वप्न देखा करता।

इन्हीं दिनों उसके मन में नये-नये कुतूहलों का संचार हुआ। रजनी ज्वर से अभिभूत पड़ी रहती। जीवन उसे एक टक देखता और अनुभव करता कि उसे देखने में दृष्टि को जो सुख मिलता है वह अन्यत्र तो नहीं मिलता। जो रमणीयता उसमें है अन्यत्र तो नहीं। भाभी उसे सुन्दर लगती थीं। पर अब वह उनसे दूर ही दूर था। रजनी के यौवन में तप्त मध्याह्न-सी प्रखरता थी। संयम से अंगों में अपूर्व कसावट और रूक्षता थी। जीवन अंगों की स्थूलता से रसता तक उतर आया था। सामने पड़ी हुई रजनी के अंग-प्रत्यंग उसके लिये रहस्य से भरे थे। ज्वर की बेहोशी में जब उसके वस्त्र अस्त-व्यस्त हो जाते तो जीवन उन्हें ठीक से करने की कोई चेष्टा नहीं करता। वस्त्रों के हट जाने से जो त्वचा भाग उसे दिखाई देता वह उसमें स्पर्श की कामना जगाता। स्पर्श में क्या उपलब्धि है यह वह नहीं जानता। रजनी के वक्ष पर उसकी दृष्टि प्रायः चढ़ती-फिसलती।

उसे भाभी भी याद आयी। बचपन की बात। भाई साहब ने भाभी को वस्त्रों के बिना दुरवस्था में कर रखा था। जीवन अब उस दृश्य का कुछ-कुछ अर्थ ग्रहण करने लगा था। पर अभी उसके जीवन का यह अनुभव मानसिक वासना तक ही सीमित था। स्त्री-पुरुष में अन्य कोई सहज सम्बन्ध भी है यह वह नहीं समझता था। जो वह समझ रहा था वह गलत ढंग से और गलत वय में।

जब वह रात को अपने बिस्तर पर सोता तो भटकी हुई नींद को बुलाने के प्रयास में रजनी की मनोनीत रूपों में कल्पना करता। पर नींद उस पुरुष का कैसे आलिंगन करे, जो दूसरी स्त्री की याद में डूबा हो। नींद भी तो औरत है। उसे भी तो डाह होती है। जो हो अब जीवन का अवचेतन रजनी को शरीर के स्तर से चाहने लगा था।

एक दिन जब रजनी का मुख ज्वरताप से लाल था, होंठ ज्वर की ऊष्मा

से जल कर भी आरक्त हो उठे थे, कपोलों पर जलती हुई लाली के भँवर बन, रहे थे तो जीवन के भी अंग-अंग जल उठे थे।

रजनी ने ज्वर से अभिभूत दृष्टि से उसे देख कर जाने क्या सोचा था। कुछ देर चुप रह कर वह बोली :

"तुम सुन्दर बहू लाना और कभी उसका अविश्वास न करना। यदि वह किसी अन्य से प्यार करती हो तब भी उसे बुरा न समझना। प्यार करके आदमी अच्छा होता है। बुराई उसमें नहीं आती। उसमें दूसरे के लिये स्वयं को दे देने की त्यागमयी भावना जागती है। वह अपने अहंकार का विसर्जन करके बहुत ऊँचे उठ जाता है। जाने क्यों प्यार को गलत समझा जाता है। तुमने अभी प्यार नहीं किया न। जब करोगे तो जानोगे।"

जीवन ने साहस बटोर कर कह दिया, "मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। रज्जो मैं तुम्हें मरने न दूंगा।"

रज्जो दर्प के साथ बोली, "राजू मैं तो मर जाऊँगी। पर तुम मुझे प्यार कर के बाद में रोओगे। राजू बोलो, मैं मर जाऊँगी तो भी प्यार करोगे?" जीवन उत्तर में रजनी से कस कर चिपट गया। जिसका आशय यही था कि मैं तुम्हें मरने न दूंगा। रजनी ने विदग्ध स्वर में कहा, "राजू, प्यार क्या होता है? प्यार करके क्या किया जाता है? बोलो, तुम्हें कुछ पता है।"

यह जीवन नहीं जानता था। प्रश्न रूप में यह बात कभी उसके मन में आयी ही नहीं थी। प्यार का स्वरूप प्यार का प्रयोजन उसके लिये अस्पष्ट था। वह गूंगा बना रहा।

रजनी ने फिर कहा, "तुम ने बताया नहीं। बोलो प्यार क्या होता है। प्यार करके क्या किया जा ता है?"

जीवन ने सहज भाव से कह दिया, "मैं नहीं जानता।"

रजनी बोली, "यही सच्चा जवाब है। जानता कोई नहीं। जो जानने का दावा करते हैं वे झूठे हैं। प्यार क्या होता है मैं प्यार करके भी नहीं जान पायी। जब मेरा राजू मेरे पास था तो मुझे लगता था कि प्यार स्वर्ग है। जब मेरा राजू मुझ से दूर चला गया तो मुझे लगा,

प्यार दर्द है। जाने क्या है यह प्यार। प्यार करके जीना भी मुश्किल है। मरना भी मुश्किल है। ओ: यह तो बड़ी भारी भूल है। राजू तुम यह भूल कभी न करना कभी न करना। यदि सुखी रहना चाहो तो यह भूल कभी न करना।"

प्यार क्या है, जीवन के मन में यह एक प्रश्न बन कर रह गया था। वह भाभी से पूछेगा और वे अवश्य ही उसे इसका ठीक-ठीक उत्तर दे सकेंगी। अगले दिन सुबह जब भाई साहब नहाने-धोने में लगे थे तो उसने उनकी अनुपस्थिति का लाभ उठाया। भाभी के पास जाते ही बोला, "एक बात बताओगी भाभी ?"

भाभी ने छेड़ते हुए कहा, "भाभी की याद कैसे आ गयी !"

जीवन किसी और बहस में पड़ने को तैयार न था। उसने वही बात दोहराई, "मुझे कुछ पूछना है।"

भाभी ने फिर छेड़ा, "अगर मैं न बताऊँ ?"

जीवन खिसिया-सा गया। भाभी हँस पड़ी। बोलीं, "अच्छा मुँह न बनाओ पूछो। साथ ही यह भी याद रखो कि भाभी बड़े काम की चीज होती है। उसे एक दम भुला नहीं देना चाहिये।"

जीवन आज सभी कड़ुए घूँट पीने और उपदेश सुनने को तैयार था अगर उसे उसकी बात का उत्तर मिल जाये। उसने भाभी का मधुर ताना सह लिया। पूछा, "भाभी प्यार क्या होता है ?"

भाभी विनोदशील हो उठी थीं। बोली, "किसी को करने लगे क्या बाबू साहब !"

जीवन ने खुशामद के साथ कहा, "बता भी दो मेरी भाभी, अच्छी भाभी।"

इतना कह कर वह प्यार के साथ भाभी से लिपट गया। भाभी ने उसे अपनी बाहों में भर कर कहा, "प्यार यही है। मैं अपने देवर राजा को प्यार करती हूँ। तुम अपनी अच्छी-अच्छी भाभी को प्यार करते हो।"

पर जीवन के प्रश्न का यह उत्तर न था। कुछ सोचते हुए उसने पूछा, "भाभी तुमने ब्याह से पहले भैया को प्यार किया था।"

"मैं तो उन्हें जानती भी न थी," भाभी ने हँस कर कह दिया ।

"तो तुम किसे प्यार करती थीं ?" जीवन ने तत्काल पूछा ।

"ओः मैं समझी," भाभी ने चुटकी लेते हुए कहा, "तुम तो लगता है बहुत समझदार हो गये हो ।"

जीवन झेंप गया । फिर भी बोली, "मुझे सच-सच बतादो भाभी ।"

भाभी कुछ गम्भीर हो कर बोली, "सच । तेरी भाभी के जीवन का सच बड़ा खट्टा है जीवन । मैं तो मा-बाप, भाई-बहन के प्यार के अलावा कुछ जानती ही न थी । बड़ी हुई शादी की बातें चलने लगीं तो पता चला कि स्त्री सिर्फ पति को प्यार करती है ।"

"और पति ?" जीवन ने प्रश्न किया ।

भाभी ने दर्द के साथ कहा, "यह मैं नहीं जानती । शायद प्यार करना सिर्फ स्त्री के बाँटे आया है । बस मेरा ब्याह हो गया और मैं तुम्हारे भैया को प्यार करने लगी ।

जीवन ने पूछा, "पर भाभी प्यार करके क्या किया जाता है ।"

भाभी ने बिंधे हुए स्वर में कहा, "यह मैं नहीं जानती । प्यार में बुद्धि का स्थान शायद नहीं होता । मैं बुद्धि से काम ले सकती तो तुम्हारे भैया को नफरत करती । नफरत ।"

भाभी के स्वर में सताए हुए व्यक्ति की प्रतिक्रिया थी । वे कहती गयीं, "प्यार शायद एक सुनहला झूठ है । इसका अस्तित्व खुद को छलने के लिये है । जीवन, मेरे बच्चे तुम इस छल में कभी मत पड़ना । नहीं तो रोओगे । कभी सुखी न होओगे ।"

जीवन कुछ और पूछना चाहता था । पर भाभी ने बीच में टोक दिया । बोलीं, "और कुछ मत पूछो जीवन । इस बारे में और कुछ नहीं । प्यार को तुम सिर्फ स्त्रियों के लिये छोड़ दो जो मूर्ख होती हैं, जो घुलना जानती हैं, जो देना जानतीं हैं । पुरुषों के लिये यह सबक़ नहीं है । तुम सिर्फ अधिकार का पाठ सीखो । जाओ जीवन, अभी से पीड़ा से परिचय न करो ।"

जीवन का प्रश्न और जटिल हो गया । जटिल मन से वह रजनी के

यहाँ आया। आज रजनी उसे अधिक कृश लगी। वह डर कर सोचने लगा कि वह इसी तरह कृश होती गयी तो क्या होगा।

रजनी ने पूछा "आज तुम देर से आये राजू।"

जीवन ने कहा, "भाभी से बातों में देर हो गयी थी।"

रजनी ने वैसे ही पूछा, "क्या बातें करते रहे।"

जीवन सरल भाव से बोला, "भाभी कहती हैं कि प्यार सिर्फ स्त्रियाँ कर सकती हैं। वे मूर्ख होती हैं, इसी से प्यार कर सकती हैं। वे घुलना जानती हैं। देना जानती हैं। पुरुषों के लिये यह सबक नहीं है।"

रजनी ने उदासीन स्वर में कहा, "उन्होंने सच कहा है जीवन। तुम्हारी भाभी लगता है बड़ी समझदार हैं। लगता हैं बड़ी दुखियारी हैं।"

कुछ देर चुप रह कर रजनी बोली, "आज कल तुम स्कूल नहीं जाते राजू। अच्छा नहीं करते हो। कल से स्कूल अवश्य जाना।"

जीवन ने कहा, "मेरा आना अच्छा नहीं लगता ?"

रजनी पीड़ा भरी मुस्कान के साथ बोली, "तुम्हें अभी से पुरुषों जैसी बातें आ गयीं। किसी स्त्री से ऐसा प्रश्न कभी नहीं करना, खास कर जब वह प्यार करती हो। तुम्हारी भाभी ने बड़ी सच बातें कहीं हैं। समझे। और कल से तुम स्कूल अवश्य जाओगे।"

जीवन ने सिर झुकाए हुए कह दिया, "मेरा और जगह मन नहीं लगता। तुम बीमार हो।"

दिन बीते ! रजनी की तबीयत और गिरी। इक्कीस दिन हो गये। ज्वर न उतरा। निराहार से रजनी का शरीर अत्यन्त कृश हो गया। गालों में गड्ढे पड़ गये। हँसली की हड्डियाँ उभड़ आयीं। आँखें कोटरों में चली गयीं। बाँहें सूख कर लकड़ी-सी रह गयीं। त्वचा का रस सूख गया। मिसरानी मालकिन को देख-देख कर अपनी मौत मनाने लगी। जीवन को अब रजनी के पास बैठे-बैठे भय लगने लगा।

रजनी ने अलग कुर्सी पर बैठे जीवन को संकेत से पास बुलाया। अपने पास ही बैठने का इशारा किया। जीवन झिझकता-सा बैठ गया। उसका मन सहम रहा था। रजनी ने उसके हाथ अपने हाथ में लिये। उसका सिर

अपने मुँह की तरफ झुका कर माथा चूमा। डूबते हुए स्वर में बोली, "राजू अब मैं बचने की नहीं। तुम मुझे भूल जाना।"

रजनी का जो शरीर कुछ दिन पूर्व तक जीवन में स्पर्श की चाह जगाता था अब वही भय जगाने लगा। वह चाहता था कि रजनी उसे छोड़ दे तो वह अलग कुर्सी पर जा बैठे। रजनी का चुम्बन उसे अप्रिय लगा। उस समय उसे यह भी याद न आया कि एक दिन वह इसी रजनी के अनावृत्त रूप को देखने को लालायित था। आज रजनी का वस्त्र विहीन ढाँचा उसके सामने आ जाता तो वह आँखें बन्द कर लेता और भाग खड़ा होता।

उसके बाद रजनी ने कहा, "अच्छा कागज़ कलम तो ले आओ। मेरी ओर से एक चिट्ठी तो लिखो।"

जीवन सब सामान ले आया और कुर्सी पर बैठ कर लिखने को उद्यत हुआ। रजनी बोली, "दूर नहीं, पास आओ। जोर से बोलने की मुझ में ताकत नहीं।"

जीवन पास सरक आया। रजनी ने कहा, "लिखो।"

पत्र में श्रीनामा कुछ नहीं था। आशय था अब मैं जाने कब मर जाऊँ कोई ठीक नहीं। पत्र पाते ही आ सको तो आभार मानूँगी। अन्तिम दर्शनों की कामना है।

पर पत्र जैसे ही समाप्त हुआ रजनी कुछ उत्तेजित हो उठी। बेचैनी भरे स्वर में बोली, "नहीं, पत्र नहीं। इसे फाड़ दो। राजू इसे फाड़ दो।"

जीवन ने वैसा ही किया। वह फिर बोली, "राजू मैं नीचे जाना चाहती हूँ। मैंने अपने फूलों को नहीं देखा। मैं अपने तोते से बात करना चाहती हूँ। मुझे मेरी मैना के पास ले चलो। एक बार मुझे सबको देखने दो। मैं अपने कबूतरों को देखना चाहती हूँ। जाने मेरा मोती कैसा है। मेरी पूसी कैसी है। राजू मुझे एक बार उन सब को दिखा दो।"

पर उसमें स्वयं उठने की ताकत न थी। मिसरानी ने सुना तो बिगड़ उठी। वह बोलती जाती थी और आँसू बहाती जाती थी, "मालकिन मेरे प्राण क्यों ले रही हो। तुम नीचे जाओगी! बिस्तर से हिल नहीं पातीं पर

नीच जाओगी ? हे गंगा मैया, मुझे अब तो तुम उठा लो। मुझे यह सब न दिखाओ। हे परमेश्वर, अव तो तू ही मेरी सुन।"

इसी तरह रोती प्रलाप करती वह नीचे आयी। वहाँ से वह तोते-मैना, के पींजरे लाई। मोती को लाई। बिल्ली को लाई। ला कर बोली, "लो ये रहे तुम्हारे लाड़ले। लो देखो।"

रजनी ने कहा, "जरा धीरे बोलो मिसरानी। हाँ पहले खिड़की खोल दो।

मिसरानी ने खिड़की खोल दी। तोते का पिंजरा उसके पास ले गयी। उसने पिंजरा खोल कर तोते को उड़ा दिया। पहले तो लगा जैसे वह उड़ना ही भूल गया है। फिर पंख फड़फड़ाये। उड़ने की कोशिश की। उड़ा। कमरे के दो-एक चक्कर लगाये और फिर खिड़की से बाहर आसमान में हो लिया। वह मुक्त था।

मैना चिल्ला रही थी : मोटी मिसरानी गंगाराम उड़ गया। गंगाराभ उड़ गया।

रजनी कुछ विहँसी। बोली, "इसे भी छोड़ दो मिसरानी।"

मिसरानी ने मैना को भी मुक्त कर दिया। पर वह फुदक कर रजनी के सिरहाने आ बैठी। उड़ी नहीं। रजनी बोली, "देखो, यह तो नहीं उड़ी। बेमुरौव्वत नहीं। उड़ जा प्यारी मैना। उड़ जा। मैं जालिम थी। मैंने अपनी खुशी के लिये तुम सब को बन्दी कर रखा था। अब मेरा भी पंछी उड़ने वाला है। तुम भी बन्दी न रहो। सब बन्धन तोड़ रहे हैं।"

रजनी की आँखों से आँसुओं की धाराएँ फूट रही थीं। जीवन छोटे बच्चे की तरह चीख कर रो पड़ा था। मिसरानी ने करम ठोंक लिया।

फिर सारे कबूतर उड़ा दिये गये। जाली में बन्द चिड़ियाएँ भी छोड़ दी गयीं।

मिसरानी दीवाल का सहारा ले निष्प्राण-सी खड़ी थी। रजनी बोली "मिसरानी, तुम्हें, बोलो, मैं क्या दूँ। तुमने मा की तरह प्यार दिया। बोलो, बदले में मैं तुम्हें क्या दूँ। मेरे पास जो कुछ भी है तुम्हारा है। मेरे बाद तुम दुखी न होना। अपने इस घर को सम्हालना। यह तुम्हारा है।"

मिसरानी दीवाल से सिर मार कर बिलख उठी, "हाय मेरी बेटी, तू मा को अपनी जायदाद दे कर मरेगी। हाय जिसे तू मा कहती है, उसको अपने पीछे छोड़ कर जा रही है। हाय मालकिन, तुम्हारा यही इन्साफ था। मैंने तुम्हारी लाश फूँकने को की थी यह नौकरी। हे गंगा मैया अब तो मुझे अपनी गोद में ले ले। हे मेरे ईश्वर अब तो मुझे उठा ले।"

इतना कह कर उसने जोरों से आपा पीट लिया। रजनी के जीते जी कुहराम मच गया। रजनी की ऊर्ध्व श्वास चलने लगी। जैसे रोने की आवाज सुन कर ही मौत करीब चली आयी।

दूसरी वेला

सू र ज ढ ले

आग के फूल

एक युग ही बीत गया। जीवन की देह को देखते ही लगता है कि एक युग बीत गया। लम्बा क़द। छरहरा बदन। कोमल श्मश्रु। वय कोई बीस बरस। प्रयाग विश्वविद्यालय में बी० ए० के अन्तिम वर्ष का छात्र। कहानी लिखता है। कविता करता है। कम बोलता है। मन्द हँसता है। पर नये परिचयों से अब भी डरता है।

देवराज को उम्र के लिहाज से ज्यादा से ज्यादा अधेड़ ही कहा जा सकता था। पर देखने में वह बूढ़ा ही लगता था। जैसे एक नहीं, अनेक युगों का मार्ग तय करता हुआ आ रहा हो।

सुषमा अजीब शालीनता से भर उठी थी। पति का अब उसे आदर प्राप्त था। जीवन को देख कर वह उत्साह से खिल उठती थी। अभाव जैसे कहीं बहुत गहरे दब गये हों। सौन्दर्य में उसके नया-सा निखार आ गया था। जैसे क्षितिज संध्या में फिर से सुनहरा हो उठता है।

वयक्रम से जीवन में एक नयी जवानी जाग रही थी। पर मनोमय होने से उसे उसकी स्थूलता का आभास कभी-कभी ही हो पाता। रजनी की याद भी उसे कम ही आती। पर उसकी साहित्यिक रचनाओं से यह अनुमान लगाया जा सकता था कि इस बीज को कैसी खाद का पोषण मिला है।

एक ज्वालामुखी जन्म ले रहा था। सहसा भौगोलिक परिवर्तन हुआ। उस पर हिमशिखर उठ खड़े हुए। तब यह आशंका किसी ने नहीं की कि यह हिम पिघल भी तो सकता है।

बी० ए० के दूसरे साल में पहुँचते ही, उसका परिचय एक ताल्लुकेदार के लड़के से हो गया था। उसका नाम शिववर्ण सिंह था, पर वह लिखता शिवबरण सिंह था। इस नाम की ध्वनि जीवन के अन्तर्मन में शिब्बन की गूँज पैदा कर देती थी यद्यपि सिंह भव्य आकृति का युवक था। भरा-पूरा डीलडौल। तीखे नक्श। बड़ी-बड़ी आँखें। श्यामवर्ण होने पर भी मुख

पर अजीब आभा। छोटी पैनी मूँछें जिन पर उसका हाथ अक्सर पहुँचता रहता था। दर्जे में भी वह शिकारी लिबास में आता था। कानों में सोने की बालियाँ थीं, जो उसकी विलासपूर्ण आकृति की मुहर-सी थीं। जीवन और सिंह में अच्छी खासी दोस्ती हो गयी थी। दोनों में मन का कोई साम्य न था। फिर भी वे दोस्त हो गये थे। दोस्ती भी नाटकीय ढंग से हुई। दोनों होस्टल की एक ही विंग में रहते थे। अक्सर एक दूसरे के आमने-सामने पड़ते और कतरा जाते। एक दिन शिवबरण के कुतूहल ने जोर मारा। उसने जीवन के कमरे का दरवाजा खटखटाया। जीवन ने सहज स्वभाव कह दिया, "भीतर चले आओ।"

सुबह का वक्त था। शिवबरण कन्धे पर तौलिया डाले नहान-घर जाने के लिये निकला था। जीवन को उसे देख कर अचरज हुआ। वह स्वयं उसकी ओर आकृष्ट था और उसके सम्पर्क की इच्छा रखता था। उसने अचरज भरी खुशी के साथ कहा, "आओ, बैठो।"

शिवबरण खड़े-खड़े बोला, "बैठने का वक्त कहाँ ?"

"कैसे आये ?" जीवन ने पूछा।

शिवबरण मुस्करा कर बोला, "कोई खास बात नहीं। तुम कुछ दिलचस्प जान पड़े। कालेज में भी तुम्हें देखता हूँ, यहाँ भी देखता हूँ। वहाँ भी तुम चुप से रहते हो और यहाँ भी अक्सर क़लम घिसा करते हो। मुझे लगा कि तुम्हें किसी साथी की जरूरत है।"

इतना कह कर शिवबरण मुक्तभाव से हँस पड़ा। बोला, "तो मैं तुम्हारा साथी हुआ। मेरा नाम शिवबरण सिंह है। सिंह भी कह सकते हो। शिवबरण भी।"

जीवन ने कृतज्ञता के साथ कहा, "मैं आपका नाम जानता था।"

"खूब," सिंह हँसा, "पर मैं तो तुम्हारा नाम नहीं जानता। देख कर इतना भर लगा कि तुम गाँधी के चेले हो।"

सिंह के कहने में उपहास था। जीवन ने कहा, "नाम मेरा जीवन है। क्या तुम्हें गाँधी पसन्द नहीं ?"

शिवबरण बोला, "मुझे ऐसा कोई आदमी पसन्द नहीं जो पिटने, भूखों

मरने, और गाली सहने का उपदेश देता हो। मैं तो शक्ति में विश्वास रखता हूँ।"

इतना कह कर उसने अपनी चौड़ी छाती को फुलाया और भुजदण्डों को फटकारा। यह सब उसने विनोद के रूप में किया और फिर जीवन से बोला, "यार कसरत किया करो। कलम से काम नहीं चलने का। खूब डण्ड-बैठक लगाया करो और दूध पिया करो। अच्छा फिर मिलेंगे।"

सिंह चला गया और जीवन के पास ढेरों कुतूहल छोड़ गया। फिर दोनों मिलने लगे। परिचय बढ़ने लगा। जीवन भी उसके कमरे में अब तब जाने लगा। कालेज के जलपान-गृह में भी दोनों साथ ही दिखाई देने लगे। एक सामन्ती युग का प्रतीक, दूसरा सत्याग्रही। दोनों की जोड़ी पर लड़के हँसते, पर शिवबरण के सामने नहीं, पीछे ही।

एक दिन शिवबरण ने जीवन से कहा, "यार तुम हरवक्त लिखते क्या रहते हो?"

उसका 'यार' शब्द जीवन को शिब्बन की याद दिला देता। पर जब सिंह के चेहरे पर वह दृष्टि डालता तो उसे शिब्बन से उसमें कोई साम्य नहीं मिलता। बोला, "कुछ भी लिख लेता हूँ।"

सिंह ने चुटकी लेकर कहा, "किसी से इश्क फरमा रहे हो क्या?"

जीवन के कान तक सुर्ख हो गये। सिंह बोला, "झेंपो मत यार। बताओ तो खतों में क्या लिखते हो।"

जीवन को कहना पड़ा, "ये खत नहीं हैं। कहानियाँ है।"

शिवबरण उसी तरह बोला, "कहानियाँ लिखते हो। तुम्हारे जैसा आदमी भी कहानियाँ लिख लेता है। यार कहानियों के लिये भी तो मुहब्बत के किस्सों की जरूरत पड़ती है। तुमने किसी से मुहब्बत की। बोलो कैसे लिख लेते हो?"

जीवन के पास इसका ठीक-ठीक उत्तर न था। उसकी अपनी जिन्दगी एक दिलचस्प कहानी है, यह तक उसे पता न था। फिर भी कह दिया, "कल्पना से लिख लेता हूँ।"

सिंह बोला, "तब क्या मजा रहता होगा तुम्हारी कहानियों में? जिन्दगी

को तो तुमने देखा नहीं। पहले सब कुछ देख-भोग लो, फिर लिखो किस्से। क्या कहूँ यार मुझे लिखना नहीं आता, नहीं तो कहानियाँ तो लाजवाब ही लिखता। तुम भी जनाब जिन्दगी देखो जिन्दगी। कल्पना से काम नहीं चलने का।"

जीवन चुप था। सिंह बोला, "तुम सोचते होगे कि जिन्दगी कैसे देखूँ। तरीका मैं बताऊँगा। जनाब यूनिवर्सिटी में तीन साल हो गये हैं। अभी बी० ए० के पहले साल में ही पड़े हैं। इम्तिहान की तीन बार नौबत आयी। तीनों बार काम निकल आया। मतलब कि एक बार शिकार के लिये हिमालय की तराई में चल दिये और एक बार ज़रा···वह शौक की बात है। तुम्हें क्या बतायें। और एक बार मन ही नहीं किया।"

शिवबरण जीवन को साथ घूमने भी ले जाने लगा। अब अक्सर शाम को वह उसे चौक घुमा लाता। कभी नाव पर जाते तो कभी सिनेमा देखते। सिनेमा का सिंह को बेहद शौक था। उसे इस बात की बेहद शिकायत थी कि रोज-रोज नये खेल नहीं आते।

दोनों की दोस्ती को दो महीने बीत गये। एक दिन शिवबरण ने जीवन से कहा, "यार दोस्तों के भी कुछ काम आओ।"

जीवन ने मुसकुरा कर कहा, "कहो।"

बोला, "कहूँ क्या? तुम से दोस्ती खामख्वाह थोड़े ही की है। तुम्हें शुरू में लिखते देखा करता था, सोचा आदमी काम का है, दोस्ती कर लो।"

जीवन की समझ में न आया। शिवबरण बोला, "नहीं समझे। इस पर कहते हो कहानी लिखता हूँ। यार तुम मक्खी मारने का काम ले लो। कहानियाँ किसी और के लिये छोड़ दो।"

जीवन ने हँस कर कहा, "भई तुम तो मेरी कहानियों के पीछे पड़े हो। कुछ कहो भी तो।"

शिवबरण ने कहा, "बात यह है कि तुम खत तो लिख सकते हो।"

जीवन को अचरज हुआ। कहा, "इसमें तो कोई खास बात नहीं। खत तो कोई भी लिख सकता है।"

सिंह ने उतावली से कहा, "यार बेकार की बातें मत करो। तुम से घर राजी-खुशी का पत्र नहीं लिखवाना है। खत का मतलब तुम इस उम्र में भी नहीं समझे तो भला कब समझोगे? जनाब खत वह होता है जो मजनूं लैला को लिखता है।"

जीवन ने हँसते हुए कहा, "मजनूं ने तो लैला को कभी खत नहीं लिखा।"

शिवबरण बोला, "तुम हो चौंघड़। अरे न लिखा होगा एक मजनूं ने। आज की दुनिया में मजनुओं की कमी है? मिसाल के तौर पर एक तुम्हारे सामने हाजिर है।"

जीवन के पेट में हँसते-हँसते बल पड़ गए। मजाक के स्वर में बोला, "इश्क ने तुम्हें सुखा-सुखा कर हाथी ही बना डाला।"

शिवबरण अपने हट्टे-कट्टे शरीर का प्रदर्शन करता हुआ बोला, "तुम्हारी अक़्ल में तो गोबर भरा है। क्यों जनाब? इश्क के मानी यह कब कि आप सीकिया पहलवान हो जायँ।"

जीवन ने कहा, "नहीं, इतना मोटा हो जाना चाहिए कि कपड़े फट जायँ। मजनूं भी फटे-हाल रहता था, उसके कपड़े दीवानगी में लीर-लीर हुए, तुम्हारे दूसरी वजह से हो जायँगे।"

सिंह इस पर ठहाका मार कर हँस पड़ा, "यार तुम भी मजाक कर सकते हो। मैं तो सोचता था कि सिर्फ कहानी लिखते हो। खैर, काम की बात करो। मेरे लिये तुम्हें एक खत लिखना होगा।"

"किसे?" जीवन ने पूछा।

सिंह बोला, "फिर वही बात! अरे, एक लड़की है उसी को लिखना है।"

जीवन ने पूछा, "वह तुम्हें प्रेम करती है?"

शिवबरण बोला, "इसका तो पता नहीं।"

"तुम करते हो प्रेम उससे?" जीवन का दूसरा प्रश्न था।

शिवबरण बोला, "प्रेम तो अपने राम को शायद ही किसी से हो।"

"फिर?" जीवन ने कहा।

वह बोला, "फिर यही कि वह लड़की हमें पसन्द है।"

जीवन ने पूछा, "उसने तुम्हें कभी पत्र लिखा है?"

शिवबरण झल्ला कर बोला, "फिर वही बेवकूफी की बात ! वह मुझे क्यों लिखती ?"

"खूब" जीवन बोला और हँस पड़ा।"

शिनबरण बोला, "हँसो मत यार, हमारा काम बनाओ। बात सारी यह है कि लड़की पढ़ती है एम. ए. में। एम. ए. भी हिन्दी में। अंग्रेजी में लिखना होता तो जनाब वो वो लिख डालता कि वह एक ही खत में फिदा हो जाती। पर यहाँ अंग्रेजी में खत लिखने की हिम्मत नहीं होती। लड़की हिन्दी पढ़ती है न। तुम लिखो यार और ऐसी हिन्दी में लिखना जिसमें सिर्फ संस्कृत हो।"

उसके इस सुझाव पर जीवन हँसते-हँसते लोट-पोट हो गया। बोला, "भाई हिन्दी संस्कृत कैसे हो सकती है ?"

"देखो यार दिलजलाने वाली बातें मत करो। मेरा मतलब ऐसी हिन्दी से है जैसी···मतलब कि तुम समझते हो। समझ गये होगे। समझ जाओगे !" शिवबरण खुद उलझन में पड़ गया था।

जीवन ने कहा, "मालूम है लड़कियाँ चप्पलबाजी करने में बहुत तेज हैं। अभी कुछ दिन पहले एक किस्सा हुआ है। उस बेचारे ने तो चिट्ठी देने की भी हिमाक़त न की थी। मुसकुरा भर दिया था।"

शिवबरण ने ठाकुरपन के साथ मूँछों पर हाथ फेरते हुए कहा, "शिवबरण से ऐसी गुस्ताखी करने के लिये हिम्मत चाहिये हिम्मत।"

इसके बाद जीवन ने एक पत्र लिखा। पत्र लिखने में वह स्वयं घबड़ा रहा था। क्या सम्बोधन हो, क्या अन्त हो, बीच में कैसा भाव हो। फिर वह एम. ए. में पढ़ती है। किसी तरह उसने खत लिखा जिसे शिवबरण ने वापस कर दिया। फैल करते हुए कहा, "यार, यह खत तो ऐसा है जैसे तुमने अपनी चाची को लिखा हो। एक बार भी तो तुमने मेरे ग़म की बात नहीं की। यार खत ऐसा हो जिसे पढ़ कर उसे लगे कि मैं उसके बिना बस मर ही जाऊँगा।"

इस पर जीवन ने फिर एक पत्र लिखा। वह भी सिंह को जँचा नहीं। इसी तरह कई पत्र लिखे और वह हर पत्र में एक न एक कमी बता देता।

आखिर जीवन ने हार कर कहा, "भाई, उसी लड़की से कहो न कि खत का मजमूं भी लिख भेजे।"

सिंह ने जीवन की फिर खुशामद की। बोला, "देखो मैं तुम्हें अंग्रेजी का एक खत दिखाता हूँ। वह खत किसी लार्ड ने अपनी प्रेयसि को लिखा था। वह इंगलैण्ड में था और प्रेयसि अमरीका में। उस खत को पढ़ कर वह अमरीका से इंगलैण्ड भागी चली आयी थी।"

जीवन ने पूछा, "वह खत लार्ड ने खुद लिखा था ?"

"बड़ी मोटी अक्ल है यार। लार्ड लिख सकता तो मैं न लिख लेता। वह उस समय के सब से बड़े पोएट लार्ड बायरन का लिखा हुआ था।" ठाकुर ने गर्व से कहा। उसका आशय था कि इस तरह पत्र लिखवाना तो लार्डों की परम्परा रही है।

जीवन ने चुटकी ली, "लेकिन लिखने वाला तो फिर भी लार्ड था।"

शिवबरण इसका जवाब न दे सका। बोला, "तुम तो यार बहस करने लगे। मेरी मुसीबत समझते नहीं।"

इसके बाद जीवन ने उस खत का अनुवाद किया। पत्र में जो व्यक्तिगत हवाले थे उन्हें बदला। कुछ अपनी ओर से जोड़ा। कुछ सिंह ने जोड़ा। फिर समस्या आयी कि टाईप कराया जाय या हाथ से लिख कर भेजा जाय। सिंह खुशखत लिखता था। तय हाथ से लिखना हुआ। वह गुलाबी कागज लाया। गुलाबी लिफाफे में रख कर खत भेजा गया। नाम कोई नहीं दिया गया। अन्त में जगह बता दी गयी। लिखा था—ओ पत्थरदिल ! अगर रहम की दो बूंदें भी तेरे पास हैं तो फलां जगह फलां वक्त मुझ से मिलना और देख कर समझना कि मैं तेरे बिना कैसे जी रहा हूँ।

जीवन ने इस पर कहा, "पर भाई तुम्हें देख कर वह यकीन न कर सकेगी। ऐसा न हो कि तुम्हें हट्टा-कट्टा देखे और फुर हो जाय।"

"घबड़ाओ मत," शिवबरण ने कहा, "औरत को मर्द पसन्द होता है। मर्द दिल से मरता है। और हर खूबसूरत औरत पर मरता है।"

इतना कह कर शिवबरण अपने कमरे में चला आया। जीवन उसकी बात सुन कर उदास-सा हो गया। उसने अपने कमजोर बदन को देखा।

पीले दुबले मुँह को देखा। अपने मैले लिबास को देखा। अपने दिल को भी देखा जो जाने कैसे सपने देख रहा था।

तभी उसे भाभी याद आयी। रज्जो याद आयी। दोनों का प्यार याद आया। अब वह प्यार प्यार का फर्क भी समझने लगा था। सोचने लगा, तो क्या वे सिर्फ दया करती थीं। आखिर क्यों? आखिर क्यों?

जीवन उदास-सा अपने तख्त पर लेट गया। उससे चुपचाप लेटा न गया। परेशानी बढ़ती जा रही थी। किताब खोली—पर उसमें भी मन रमा नहीं। कलम उठाई। कुछ लिखे। क्या लिखे? कहानी—ओः कहानी ऐसे थोड़े ही लिखी जा सकती है। उसके मन में कहीं गहरे अभाव करवटें ले रहा था। उसने सोचा—अगर मेरी एक प्रेयसी होती तो मैं उसे एक पत्र लिखता। उस पत्र में आहें, कराहें, आँसू और मौत होती।

एम. ए. की उस लड़की का नाम विनता था। शिवबरण ने उसे पत्र में अगले ही दिन एल्फ्रेड पार्क में एक खास स्थान पर मिलने को लिखा था। जब मिलने का समय समीप आया तो उसने जीवन से कहा "यार, तैयार हो जाओ।"

जीवन ने पूछा, "कहाँ के लिये?"

शिवबरण मूछों पर ताव दे कर बोला, "संयुक्ता स्वयंवर के लिये।

जीवन संकेत समझ गया। उदास वाणी में कह दिया, "तुम हो जाओ।"

सिंह उस समय उत्साह में था। उसने उसकी अनिच्छा को न समझते हुए कहा, "चलो भी यार। कहीं वह हिन्दी बोलने लगी तो मैं क्या करूँगा। तुम दुभाषिये का काम तो कर सकोगे!"

जीवन को उसकी सरलता पर हँसी आ गयी। कुछ विनोद के साथ बोला, "कौन जाने उसे दुभाषिया पसन्द आ जाय!"

"शीशा देखा है?" शिवबरण ने सहज भाव से कहा,. पर जीवन के मन को चोट लगी। उसमें एक अजीब-सा आत्महीनता का भाव जड़ें जमा रहा था। उसने कह दिया, "तुम ही हो आओ।"

शिवबरण ने फिर कहा, "पृथ्वीराज संयुक्ता को ब्याहने अकेला नहीं गया था। चन्द्र भी साथ में था, मेरे कवि तुम चलो न।"

जीवन ने कहा, "मुझे तेरी संयुक्ता से डर लगता है।"

अच्छा तो यहीं रहो, शिवबरण ने लापरवाही से कहा, "पर कहीं जाना नहीं। मैं तुम्हें जल्दी ही आ कर कोई अच्छा समाचार सुनाऊँगा।"

पर उस शाम को शिवबरण नहीं आया। रात को भी देर से लौटा। जीवन प्रतीक्षा करते-करते सो गया था। उसने मान लिया था कि वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ है। अगले दिन वह सुबह ही शिवबरण की सफलता पर बधाई देने के लिये उसके कमरे में जा पहुँचा। उसने कृत्रिम उत्साह के साथ कहा, "बधाई प्यारे!"

शिवबरण ने चौंकते से पूछा, "क्या बात! कौन-सी खुशखबरी है?"

"वह तो तुम सुनाओ" जीवन ने कहा।

"ओ:" शिवबरण ने सिर खुजला कर कहा, "क्या कहूँ भाई, चिड़िया जाल में फँसी नहीं। अपने राम गार्डन का एक-एक फूल, एक-एक पत्ती गिन आये, पर उसका पता न चला।"

जीवन को इस सम्वाद पर खुशी हुई। पर मन का भाव छिपाते हुए बोला, "शायद खत न मिला हो।"

शिवबरण ने कहा, "इसमें शायद नहीं हो सकता। सिंह किसी लड़की को खत भेजे और वह उसे न मिले! बात यह है कि उस पर खत का कोई असर ही नहीं हुआ। अच्छा देखता हूँ कब तक उड़ती है।"

'तो फिर तुम रात गये तक कहाँ रहे," जीवन ने पूछा।

शिवबरण लापरवाही से बोला, "उसके न आने से मन थोड़ा खट्टा हो गया था। बस जी में आया कि थोड़ी-सी तफरीह कर आऊँ। मन बहल जायगा।"

जीवन ने कहा, "तो सिनेमा जा डटे थे?"

वह बोला, "कल खाली तसवीरें दिल न बहला सकती थीं। गाना सुनने चला गया था।"

फिर वह आप ही हँस कर बोला, "जानते हो गाना सुनने का एक टेकनिकल अर्थ होता है।"

जीवन को शिवबरण बड़ा पतित जीव लगा।

"क्या सोचने लगे ?" शिवबरण ने पूछा।

"कुछ नहीं," जीवन ने एक व्यावहारिक-सा झूठ बोल दिया।

शिवबरण बोला, "तुम्हें अच्छा नहीं लगा। कभी गये जो नहीं। मेरे साथ चलना। इस दुनिया में बुरा कुछ नहीं। जब यहाँ आये हो, तो कुछ देख-भोग कर जाओ। नहीं तो जन्म लेने से ही क्या फायदा !"

जीवन कुछ ऊँचे सिद्धान्तों की बात कहना चाहता था। पर कमजोर मन से ज्यादा बड़ी बात कह नहीं सका। वह अपने कमरे में चला आया। शिवबरण के बारे में ही वह सोच रहा था। कैसा आदमी है। इसके लिये अच्छा बुरा कुछ नहीं है। हार और विषाद जानता ही नहीं। मनभाई चीज को ले लेना चाहता है। नहीं मिलती तो गिला नहीं। जो मिल जाती है उसी से दिल बहला लेता है। जीना शायद इसी को आता है। एक चीज को पकड़ कर जीना तो जिन्दगी को बाँध देना है।

जीवन खुली जिन्दगी और बँधे जीवन के बारे में सोचता-सोचता उदास हो गया।

इस बात को एक दिन भी नहीं बीतने पाया कि शिवबरण एक नया समाचार ले आया। आज वह खुश था। काफी खुश। खुशी में उसकी गर्दन हिल उठती जिससे कान की बाँलियाँ थिरक कर उसके सुचिक्कण साँवलें कपोलों पर आभा बिखेर जातीं। आते ही बोला, "लोकिला फतह कर लिया।"

जीवन को तत्काल लगा कि वह विनता से बातें करने में सफल हुआ है। उसे यह सम्भावना भी अच्छी नहीं लगी। पूछा, "कौन-सा किला ?"

"यार तुम भी कितनी मोटी अकल के हो," उसने खुशी में एक टाँग पर चक्कर लगाते हुए कहा,' 'मेरी हर बात जानते हो फिर भी हर बात हर बार शुरू से बतानी पड़ती है।"

"तुम्हारा मतलब विनता से है," जीवन अजान बना रहना चाहता था पर बना रह न सका।

"हाँ उसी से," शिवबरण ने मेज पर रखे हजामती शीशे में अपना मुँह देखते हुए कहा।

"बात तो बताओ," जीवन ने कुतूहल से पूछा।

वह बोला, "बात ! प्यारी बात है। जनाब वह कालेज से लौट रही थी और होस्टल जा रही थी। अपने राम तो कल से ही उसकी ताक में थे। सब सड़कों की मोर्चे बन्दी किये थे। जैसे ही वह सड़क पर आयी, मैंने अपनी कार उसके सामने कर दी।"

"कार ? तुम्हारे पास कार कहाँ ?" जीवन ने सन्देह किया।

शिवबरण बोला, "जिसके पास रुपया है उसके पास सब कुछ है। मेरा एक दोस्त है। नयी कार थी उसके पास पर बेचना चाहता था पैसे की तंगी की वजह से। मैंने उससे आज ही खरीद ली। दो चार-दिन में घर से रुपए मंगा कर दे दूँगा"

जीवन उपदेश के स्वर में बोला, "तुम बहुत रुपया फूंकते हो। तुम्हें कार की जरूरत ही क्या थी ?"

वह हँस कर बोला, "लड़कियों का पीछा पैदल करो तो वे काबू में नहीं आतीं, कार का रोब पड़ता है। तुम बात तो सुनो।"

शिवबरण सुनाने लगा, "कार, रोक कर मैंने दरवाजा खोल दिया। नीचे उतर कर कहा, "तशरीफ लाइये। इस पर उन्होंने कुछ नाक-भौं सिकोड़ी। मैंने फिर कहा, एतराज क्या, आपही की कार है। होस्टल पहुँचा दूँ। वह तब भी आँखें तरेरती रहीं। मैंने कहा, मेरा खत तो आपको मिला होगा। पर आप नहीं मिलीं। इस पर वह चुपचाप कार में पीछे की सीट पर बैठ गयी। मुसकुरा कर बोली—आपका खत था। चलिये मुझे होस्टल छोड ही आइये। मैंने कार बढ़ाई और चलते-चलते पूछा—आप आयी क्यों न थीं। उसने कहा—पत्र में भेजने वाले का नाम पता न था। वह कायरपन मुझे भाया नहीं। मैंने तुरन्त उसे अपना नाम बताया और बाकी सब कुछ भी।"

जीवन ने पूछा, "यह भी बता दिया कि तुम बी. ए. में पढते हो।"

"हाँ, वह बोला," "कह दिया कि मेरे साथी तो एम. ए. कर चुके हैं मैं पढ़ने में उतना विश्वास नहीं करता।"

"फिर क्या हुआ" जीवन ने पूछा।

वह बोला, "खास कुछ नहीं। मैंने उसे होस्टल उतार दिया।"

"मैं तो सोचता था कि तुम उसे ले भागे होगे," जीवन ने वही कहा, जो उस परिस्थिति में वह करना चाहता।

शिवबरण ने अभिमान के साथ कहा, "छीनने में मेरा विश्वास नहीं, जीतने में है। वह अब बच कर जायेगी कहाँ।"

पर कहानी ने दूसरा अन्त ले लिया। अगले ही दिन डीन ने शिवबरण को बुला भेजा। वे उसके बाप के गहरे दोस्तों में हैं। दोनों साथ ही इंगलैण्ड में भी रहे। वे तब वहाँ रिसर्च करते थे और ताल्लुकेदार साहब ऐश। उन्होंने शिवबरण को हिदायत के स्वर में कहा, "तुम्हारी शिकायत आयी है। मुझे यह पसन्द नहीं। इस बार मैंने माफ किया। आइन्दा ऐसा कुछ सुनने में आया कि तुमने किसी लड़की को खत लिखा या किसी का पीछा किया तो मैं कालेज से तुम्हरा नाम काट दूँगा। बस जाओ, यही कहने को बुलाया था।"

शिवबरण के खून में आग लग गयी। वह डीन के कमरे से तेजी से बाहर आया और वैसी ही रफ्तार से अपनी कार तक। मानो जिस जमीन पर वह चल रहा है उस पर अंगार बिछे हों।

शिवबरण कालेज से होटल चला आया और चुपचाप अपने कमरे में लेट गया। उसके दिल में आग धधक रही थी। कभी किसी स्त्री ने उसे इस तरह बेवकूफ बनाने की कोशिश नहीं की थी। उसने निश्चय कर लिया कि वह अवश्य ही विनता से बदला लेगा।

पर बदले का निश्चय करके भी वह अपने मन को व्यवस्थित न कर सका। सोने की चेष्टा की पर प्रयत्न विफल रहा। डीन की आँखें उसकी आँखों में गड़ती रहीं। उसने तकिया सिर के नीचे से निकाल कर सिर के ऊपर आँखों को ढकते हुए रख लिया। पर डीन उसी तरह खिलखिलाता रहा।

उसने पास पड़ी फिल्मी मैगजीन उठाई। उसकी रंगबिरंगी तसवीरों से मन बहलाने की कोशिश की। पर तस्वीरें तस्वीरें ही साबित हुईं। फिल्म अभिनेत्रियों के अर्द्धनग्न वासनात्मक चित्र भी उसके रोष को न्यून न कर सके। वह कमरे में इधर-उधर टहलने लगा। उसकी मुट्ठियाँ भिंच जातीं और माथे की नसें तन कर फटने लगतीं।

तीसरे पहर जीवन भी लौटा। वह सीधा सिंह के कमरे में पहुँचा। पूछा, "आज कालेज से एकदम भाग आये ?"

"हूँ," उसने अनिच्छा से कहा। स्वर में रोष भी था।

"कुछ परेशान हो," जीवन ने पूछा।

वह तुनक कर बोला, "औरत आखिर खुद को क्या समझती है ? मैं उसे खरीद सकता हूँ। मैं उसे बेच सकता हूँ।"

"किसे ?" जीवन ने न समझते हुए पूछा। विनता तक उसका ध्यान जा ही नहीं पा रहा था।

शिवबरण उत्तेजित स्वर में बोला, "उसने डीन से शिकायत करके समझा कि मै डर जाऊँगा। पर वह बेवकूफ है। उसने मेरे डर को अब रहने ही नही दिया। जीवन, विनता अब मुझ से बचेगी नहीं।"

बात स्पष्ट हो गयी। जीवन सिंह को और उसके अस्त-व्यस्त कमरे को देखता रहा। फिल्मी मैगजीनों के मुखपृष्ठों की तस्वीरें अब भी मुसकुरा रही थी। एक ओर उद्विग्न, उत्तेजित पुरुष दूसरी ओर शराबी मुसकुराहट से होश छीनने वाली औरत।

जीवन ने कुछ देर चुप रह कर कहा, "चलो घूम आएँ।"

शिवबरण चुप था। सहसा बोला, "तुम मेरे साथ चलोगे ?"

"जरूर।" जीवन ने उत्तर दिया।

"तो तैयार हो जाओ। जहाँ मैं चलूँ वहीं चलना होगा।" उसने फिर कहा।

जीवन तैयार था। दोनों सिविललाइन्स आये। सिनेमा देखा। पर पूरा खेल देखने से पहले ही शिवबरण उठ खड़ा हुआ। बोला, "तस्वीरें मेरा मन नहीं बहलातीं।"

जीवन को खेल में रस आ रहा था। उसे भी उठना पड़ा। फिर दोनों बार में आये। जीवन का ऐसी जगह जाने का पहला ही मौका था। शिवबरण ने ब्लैक एण्ड ह्वाइट का आर्डर दिया। दो पेग आये। जीवन की रूह काँप उठी। बोला, "मैं······।"

वह पूरा निषेध कर ही नहीं सका। जीभ उसकी अटपटा रही थी।

सिंह बोला, "मत पियो। तुम नहीं पी सकते। कोई नेक काम तुम कर नहीं सकते। तुम सिर्फ पानी पी सकते हो और हवा खा सकते हो।"

इतना कह कर उसने दोनों पेग चढ़ा लिये। बोला, "अभी नशा जमा नहीं। बैरा—उसने आवाज दी। "एक डबल पेग और।"

वह भी आया। शिवबरण ने पानी की तरह उसे भी अपने गले में उड़ेल लिया। आँखों में उसके लाली के डोरे खिंच गये। बोला "इस तरह कोई मजा नहीं। साकी होनी चाहिए। साले बैरे के हाथ की शराब में नशा नहीं होता। जीवन......"

शिवबरण पर नशा चढ़ आया था। हल्का-हल्का। वह बोलता गया, "जीवन शराब पीना तो यह अहद करके कि औरत के हाथ से पिओगे। चलो।"

वहाँ से वे फिर दोनों चौक की तरफ आये और चौक की एक गली में घुस गये। संकरी गली, भीड़ बेहद, उससे भी ज्यादा शोर। बिजली की रोशनी। नीचे दुकानें सजीं ऊपर कोठे। कोठों पर की निगाहें सड़क पर बिछी हुईं और सड़क की निगाहें कोठों पर टंगी हुईं। वहाँ से आने जाने वाले लोगों के चेहरे भद्दे। सब की हँसी में जहर और आवाज में मलिनता। सब कुछ ऐसा कि दम घुटने लगे। साफ हवा वहाँ नहीं। जीवन घबड़ा-सा गया। पर शिवबरण का साथ तब भी न छोड़ सका। कुतूहल ने उसे उसके साथ कस कर बाँध दिया था।

जहाँ शिवबरण गया वह जगह ठिकाने की थी। साफ-सुथरा मकान, सजावट पेशेवर होने पर भी कुछ ऊँचे दर्जे की। वहाँ के वातावरण में बदबू तो थी, पर कीचड़ की नहीं। शराब की-सी। बाई जी को जैसे इन्हीं लोगों का इन्तजार था। झुक कर लम्बा फर्शी सलाम किया। वह बुढ़िया थी। बोली, "क्या हमें भुला ही दिया था कुँवर साहब।"

सिंह ने रुखाई से कहा, "नूरी कहाँ है ?"

"हुजूर की खिदमत कर ने का इन्तजार कर रही है," वह मिस्सी से काले मसूड़े चमकाती हुई बोली। उसके बाल सफेद थे। कानों में चाँदी की सफेद बालियाँ थीं। चुस्त पाजामा, कुर्ता और ओढ़नी का लिबास था। मुँह पर

झुर्रियाँ पड़ी थीं। रंग चिट्टा था। आँखों के नीचे अन्धेरा था। उसने आगे से हट कर रास्ता दे दिया। सिंह ने पाँच रुपए का नोट उसके सामने फेंकते हुए कहा, "पान का इन्तजाम करो।"

उसके बाद नूरी उसकी खिदमत में हाजिर थी। उसने अर्ज की, "गाना सुनेंगे हुजूर।"

"नहीं," शिवबरण ने पहले जैसी रुखाई से कहा। वह वहाँ तकियों का सहारा लेकर बैठ गया। जीवन उसका इशारा पा कर पास ही बैठ गया। नूरी खड़ी थी। हुक्म का जैसे इन्तजार हो।

शिवबरण ने कहा, "जरा अपने हाथ तो दिखाओ।"

नूरी ने हाथ बढ़ा दिये। वह उसके पास झुक आयी थी। वह बोला, "खूबसूरत हैं। नाजुक हैं। शराब पिलाओ। साले बैरे ने पिलाई पर नशा नहीं हुआ।"

नूरी मुस्कुरा दी। आँखों ने अधिक चपलता का प्रदर्शन किया। फिर थिरकती-सी शराब ले आयी। सागर भी पैमाना भी।"

जीवन नूरी को देख रहा था। वह उसे बेहद खूबसूरत लगी। पर साथ ही डरावनी भी। रंग उसका केले की गोब जैसा था। उम्र उसकी जीवन से कम ही थी। पतली इतनी कि जीवन की परछाईं में छिप सकती थी। अंग-अंग में चपलता ऐसी कि हवा भी रुक जाय चलते-चलते, पर वह न रुके। उसने भी जीवन को देखा। उसे वह भोला लगा। शायद मूर्ख लगा। शायद अच्छा लगा। शायद ऐसा लगा जैसे लोग वहाँ नहीं आते। शिवबरण तो आने वालों में से था।

उसने शराब ढाली। एक जाम शिवबरण को दिया, दूसरा जीवन की ओर बढ़ाया। शिवबरण बोला, "नूरी मुझे पिलाओ। यह क्या पियेगा। यह तो गांधी का चेला है। यह तो पानी पीता है और उसे भी छान कर।"

नूरी मुसकुराई और सिंह को शराब पिलाने लगी। न सिंह ने बस की और न उसने। बस, बोतल ने ही कर दी। सिंह पर नशा भूत की तरह चढ़ आया। उसने नूरी का हाथ पकड़ कर अपने पास खींचा और उसे अपनी छाती से चिपटा कर जहाँ का तहाँ लेट गया। थोड़ी ही देर में वह नशे के

काबू में पूरी तरह चला गया। बेहोशी की नींद उस पर चढ़ने लगी। नूरी ने धीरे से खुद को उसकी बाहों से छुड़ा लिया। शिवबरण औंधे मुँह लेटा रहा। नूरी जीवन को देख कर बोली, "घबड़ाना नहीं। आपके ये दोस्त ठीक ही हैं। अब रात भर ऐसे ही पड़े रहेंगे। इनकी ऐसी ही आदत है, जब शराब पीते हैं तो ऐसे ही पीते हैं।"

नूरी जीवन के पास आकर बैठ गयी। जीवन की आँखों में घबराहट थी। वह बार-बार नूरी को देखता, सिंह को देखता। नूरी हँस पड़ी, "परेशान क्यों हो। तुम्हारा दोस्त अब सुबह से पहले नहीं उठेगा। तुम शराब क्यों नहीं पीते?"

जीवन ने कहा, "शराब अच्छी चीज नहीं है।"

नूरी बोली, "और जहाँ तुम आये हो, वह अच्छी जगह है।"

जीवन उसकी बात का जवाब नहीं दे सका। वह फिर बोली, तुम्हारा यहाँ अना मुबारक हो। तुम नहीं पीते तो मुझे इस मुबारक वादी में एक जाम पिला दो। तुम्हारे दोस्त कहते हैं कि शराब तब नशा करती है जब पिलाने वाली औरत हो। मैं कहती हूँ कि शराब तब खुशी देती है जब पिलाने वाला मर्द हो। उन्हें औरत की चाह है, मुझे.........। मुझे किसी की चाह नहीं है।"

शरारत उसकी आँखों में खेल रही थी। वह जीवन से खेलने लगी। जीवन उसके जादू में आ गया। उसने नूरी को पिलाने को शराब उठाई। नूरी बोली, "अहे किस्मत। लाओ मेरे मासूम जवान अपनी तन्दुरुस्ती का जाम मुझे पिलाओ।"

नूरी ने जाम होठों से छुआ। फिर बोली, "अब यह तुम पियो। मुझे लाख-लाख खुशियाँ देने के लिये पियो।"

जीवन देख रहा था नूरी को। उसके हाथ की जूठी शराब को। नूरी बोली, "पिओ भी। तुम पिओगे तो मुझे लगेगा कि मैं ही पी रही हूँ।"

जीवन को उलझन हुई। उसका जी घबड़ाया। बोलना चाहता था पर बोल न पाया। नूरी ने उसके होठों से वह जाम लगा दिया। जीवन ने घूँट भरी। तीखी कड़ुवी शराब। वह पी न सका। वह वहाँ से भाग

निकलने को अकुला उठा। पर सामने बैठी हुई नूरी जैसे उसे बाँधे हुए थी।

नूरी ने नया प्रस्ताव किया, "गाना सुनोगे।"

जीवन के हाँ ना की प्रतीक्षा किये बिना ही उसने बगैर साजों के ही एक गजल सुनाई जिसका मतलब था—देखो, कैसी उल्टी हवा बह चली। शमा को पतंगे से प्यार हो गया। वह पतंगे के लिये जल-जल कर धुआं हो रही है। जरूर ही अजीब बात है। चाँद को कुई से मुहब्बत हो गयी। देखो वह आसमान से धरती पर उतरना चाहता है। देखो तो फूल भँवरे का पीछा कर रहा है। आज की रात गजब की रात है। कुफ्र की रात। माशूक आशिक के लिये छटपटा रहा है। संगदिल मोम दिल हो कर बह चला है। आज जरूर ही क़यामत बरपा होगी। जो होंठ सिर्फ प्यास जगाते आये हैं आज वे खुद प्यासे हो उठे हैं। उनकी प्यास में समुन्दर सूख जायँगे। देखो तो जिन बाहों से रहम की भीख सारी दुनिया माँगती थी आज वे खुद रहम माँगने बढ़ चलीं हैं। वे बाँहें फैली रहीं तो क्या आसमान न टूट पड़ेगा। देखो तो वह कैसी साँस ले रही है। उसकी छातियाँ कैसे उठ-उठ कर गिर रही हैं। जैसे वहाँ आग के पहाड़ दफन हों। ओः उसकी आह में तो झुलसाने वाली आँधियाँ हैं। खुदा यह तू क्या चाहता है। रूप के समन्दर में आग भड़क उठी है। अब क्या कोई उससे बचेगा ?"

नूरी के होंठ लपटों से लहक रहे थे—जल रहे थे। उसकी बाहें जलती हुई मशालों-सी उठी हुई थीं। नूरी की छाती ज्वालामुखी-सी धधक रही थी। जीवन का भी अंग-अंग जलने लगा। उसके सामने ऐसी आग धधक रही थी जिससे न तो वह लिपट सकता था न छोड़ कर भाग सकता था। नूरी प्यासी आँखों से जीवन को देखती रही।

जीवन ने मौन तोड़ा, "मैं इन्हें कैसे ले जाऊँ ?"

उसका मतलब शिवबरण से था। नूरी तड़प कर बोली, "अब भी जाने की सोचते हो ?"

तो क्या करूं ?" जीवन सचमुच बेबस हो रहा था।

"यह भी मैं बताऊँ।" नूरी की आवाज भी जैसे जल रही थी, "बताऊँ मुझे गोली मार दो।"

जीवन घबड़ा उठा, "नूरी।"

नूरी चुप थी। उसने फिर कहा, "नूरी।" इस बार उसकी आवाज में घबड़ाहट कम दर्द अधिक था। बोला, "मैं तुम्हें शराब पिलाऊँ ?"

नूरी की आखें 'हाँ' कह रही थीं।

जीवन ने जाम भरा। उसकी तरफ बढ़ाया, "लो।"

"ऐसे नहीं," नूरी ने कहा, "मुझे कड़ुवी शराब पसन्द नहीं। अपने शीरी होंठों की बू से मीठी कर दो।"

जीवन झिझका। वह बोली, "मेरी अर्ज कबूल नहीं।"

जीवन हार गया। उसने खुद पी, नूरी को पिलाई। नूरी ने पी कम, जीवन को पिलाई अधिक। जीवन की समझ में नहीं आ रहा था कि कड़ुवी शराब क्यों पीते हैं लोग। बोला, "कड़ुवी शराब लोगों को क्यों इतनी पसन्द है ?"

नूरी ने जवाब दिया, "शराब की मिठास तुम तब जा[illegible] जब तुम्हारे यहाँ आग धधकने लगेगी।"

इतना कह कर नूरी ने अपने वक्ष की ओर संकेत [illegible] [illegible]वन को ऐसा लगा कि जैसे वहाँ आग के फूल खिले हो। जो [illegible] शराब न कर सकी, वह उन आग के फूलों ने किया। वह बोला, "नूरी तुम्हारे हाथ की शराब सचमुच मीठी है। मुझे पिलाओ।"

शराब ने जल्दी ही जीवन को अपने काबू में ले लिया। थोड़ी ही देर में उसका सिर घूमने लगा और वह भी शिवबरण की तरह बेसुध सा लेट गया। नूरी ने प्यार से उसका सिर अपनी गोद में रखा। उसके बालों को सहलाया। उसके माथे को सूंघा। उसके पपड़ी पड़े होठों पर अपनी पतली-सी अंगुली रखी। अपना वक्ष उसके मस्तक पर टेक दिया। अपना मस्तक उसकी छाती पर रख दिया।

शिवबरण ने करवट ली। आँखें खोलीं। इन दोनों को देखा, पर होश नहोने' की वजह से कुछ समझा नहीं। उसने ऐंठती हुई जीभ से कहा, "नूरी पानी !'

नूरी ने थोड़ी शराब उसे और पिला दी। सिंह जीभ चाटता हुआ फिर नशे में धुत पड़ा रहा। वह फिर जीवन के पास आ बैठी। उसे देखती रही।

जाने क्यों वह उसे अच्छा लगा। जैसे अपने चारों ओर के कालुष्य में उसे पवित्रता एक उसी व्यक्ति में मिल रही थी। पर उसकी समझ में नहीं आया कि उसने जीवन को इतनी ज्यादा शराब क्यों पिला दी। शायद उससे वह जो चाहती थी, वह उसे होश में नहीं दे सकता था।

नूरी के बदन पर तंग कसे हुए कपड़े थे। उनमें उसे घबड़ाहट मालूम दी। उसने उतार दिये। ढीले गरारे और कुर्ती में सिर के बाल खोले, वह लालसा से भरी जीवन के पास ही लेट गयी। वह उसमें स्वयं को डुबो देना चाहती थी। पर कैसे? जीवन बेहोश था। वह उससे वैसे ही खेलती रही जैसे चील मुर्दे से। उसकी आग उसी को जलाने लगी। उसने जीवन के होठों को इस बुरी तरह काटा कि खून बह चला। नशे में बेहोश जीवन सिर्फ थोड़ा-सा हिल कर रह गया। नूरी की परेशानी और बढ़ी। जैसे दो लाशों के बीच में जिन्दगी छटपटा रही हो। वह जीवन से कुछ चाहती थी। उसने जीवन को झिंझोड़ा, खूब झिंझोड़ा। पर जब वह मुर्दा ही बना रहा तो उसने अपना सिर घुटनों में छिपा लिया। उसके मुंह से चीख निकल पड़ी। वह रो पड़ी। बुढ़िया उसकी आवाज सुन कर बेचैनी से दौड़ी आयी। आते हुए कहती जा रही थी, "मेरी बेटी, मेरी सितारा, मेरी चाँदनी, क्या हुआ? क्या हुआ?"

नूरी ने रोते-रोते कहा, "कुछ नहीं अम्मी, कुछ नहीं अम्मी। ये सब लोग क्यों आते हैं? मुझे इनसे नफरत है। मत आने दिया करो इन्हें। आः मुझे इन सब से दूर रक्खो। नहीं तो मैं मर जाऊँगी। अम्मी, अम्मी।"

अम्मी हैरान थी। उसने जीवन और सिंह को देखा। दोनों निढाल पड़े थे। वह समझ ही नहीं सकी थी कि बेहोश आदमी से किसी तरुणी वेश्या को क्या परेशानी हो सकती है। पूछा, "आखिर बात क्या है बेटी?"

"कुछ नहीं अम्मी, कुछ नहीं अम्मी, मैं मर जाऊँगी। मुझे इनसे दूर रक्खो! मुझे सब से दूर रखो," वह अम्मी की छाती से चिपट कर रो रही थी।

सिंह ने इस बार फिर आँखें खोलीं। लड़खड़ाती जुबान में बोला, "कौन रो रहा है? मुझे प्यास लगी है। पानी दो, नूरी पानी दो।"

नूरी चीखी, "आः प्यास मुझे भी लगी है। मेरी प्यास कोई नहीं बुझाता। अम्मी मुझे प्यासी ही मर जाने दोगी क्या ?"

अम्मी ने भी यही जिन्दगी गुजारी थी। उसकी जिन्दगी में अजीबो-गरीब वाक़या हुए थे। पर नूरी की बातों से उसकी हैरत ही बढ़ रही थी। किसी वेश्या की बेटी को, उसने इस हालत में न देखा था। तसल्ली देने के लिए उसे शब्द न मिल रहे थे। बोली, "चलो, आराम करो।"

"आराम," नूरी ने सिर धुनते हुए कहा, "इस मकान में, इस मुहल्ले में, मुझे आराम नहीं मिल सकता। अम्मी क्या ऐसी कोई जगह नहीं इस दुनिया में जहाँ ये मर्द न हों।"

बुढ़िया ने ढाढस के लिए कह दिया, "ऐसी भी जगह है। हम वहीं चलेंगे।"

नूरी की दृष्टि जीवन की ओर उठ गयी। उसे देखकर वह फिर रोती-रोती कहने लगी, "नहीं अम्मी। मुझे यहीं रहने दो। मुझे यहीं रहने दो। मै यहाँ से हटते ही मर जाऊँगी।"

बुढ़िया का धीरज टूट गया। उसने आसमान में बसने वाले खुदा की ओर देखा और उसकी रहमत की भीख के लिए अपना आँचल पसार दिया।

अगले दिन जब जीवन सोकर उठा तो दिन काफी चढ़ चुका था। वही वेश्या का कोठा और वही जहर भरा वातावरण। शिवबरण अभी भी औंधा पड़ा था। उसके बाल बिखरे थे और मुँह से लार बह रही थी। उसका जी मितला रहा था और सिर दर्द के मारे फटना चाहता था। उस कमरे में नूरी या उसकी अम्मी में से कोई न था। दीवालों पर चारों ओर नंगे अधनंगे चित्र टंगे थे। जीवन उन्हें देख कर कुछ-कुछ जुगुप्सा से भर उठा। वह वहाँ से जाना चाहता था। पर कैसे जाए, समझ में नहीं आ रहा था। जी उसका और अधिक मितलाता रहा। मतली आते-आते रुक जाती। उसने 'कोई है' कह कर दो एक आवाजें दीं और इससे पहले कि कोई उसकी आवाज का जवाब देता उसने कमरे को ही कै से गन्दा कर दिया। काफी कै कर चुकने के बाद वह निढाल-सा लेट गया। कैसे खट्टी-खट्टी दुर्गन्ध उड़ रही थी। शिवबरण अभी भी खुमारी में था। नूरी और उसकी अम्मी परेशान-सी

सामने खड़ी थी। जीवन को लग रहा था कि सारी दुनिया गन्दगी से सनी है। वह खुद, शिवबरण भी, नूरी भी···उसने घबड़ा कर आँखें बन्द कर लीं।

बुढ़िया पानी ले आयी थी। जीवन ने कुल्ला किया। आँखों पर पानी के छपके मारे। कुछ स्वस्थता-सी अनुभव की और बोला, "अब मैं जाऊँगा।"

"आपके दोस्त···" नूरी पूछ रही थी।

"वे आते रहेंगे···" इतना कह कर वह चल दिया। उसने पीछे घूम कर भी नहीं देखा। जैसे जो कुछ पीछे छूट गया है उससे उसका कोई सम्बन्ध ही न हो।

चलते-चलते उसके कानों में कुछ शब्द पड़े। नूरी कह रही थी, "अम्मी उन्हें रोक न लो।"

अम्मी ने चिड़चिड़े स्वर में कहा था, "नूरी, तू भूल—भूल क्यों जाती है कि तू कोठे पर बैठने वाली की लड़की है और खुद भी···।"

जीवन सीढ़ियों से धड़ल्ले से उतर चला। दिन में वह गली और भी गन्दी दिखाई दे रही थी और उसमें दिखाई पड़ने वाले आदमी उससे भी गन्दे, घिनौने।

जीवन होस्टल आ गया। शिवबरण कई दिनों तक नहीं लौटा। जीवन अब पूर्णतः स्वस्थ हो चला था। और इस शरीरी स्वस्थता के साथ-साथ उसका मन फिर भटकने लगा था। उसे एकान्त के क्षणों में नूरी घेर लेती उसके अंगों में आग-सी लहकती और वह कल्पना में ही जब सामने बैठी नूरी पर दृष्टि डालता तो आग के वे फूल उसे जलाने लगते।

शिवबरण जब लौटा तो बीमार-सा लग रहा था। वह कुछ गम्भीर भी था। जीवन से भी बात कम ही की। उसने कुछ पूछा भी तो उसके प्रश्नों का उत्तर कुछ ऐसा वैसा ही दे दिया।

दिन बीतते चले। पढ़ाई जिस किस तरह चलती रही। शिवबरण का मन संघर्ष से मुक्त न हो पाया था। वह किसी योजना में लगा था। एक दिन जीवन से बोला, "मैंने फैसला कर लिया।"

जीवन ने उसके मुँह को देखा। आँखें जल रही थीं। माथे में सलवटें

पड़ी थीं। श्यामवर्ण अधिक गहरा हो गया था। पूछा, "कैसा फैसला ?"

"मैं उस लड़की से भरपूर बदला लूंगा···" उसने कठोर स्वर में कहा।

जीवन सहमा। समझाया, "लड़की से बदला लोगे ? छोड़ो, भी माफ कर दो।"

"माफ कर सकता हूँ" वह बोला, "पर तुम्हारे कहने से नहीं उसके माफी मांगने से।"

इसके अगले ही दिन यूनिवर्सिटी में जो खबर सबसे गर्म थी वह शिवबरण और विनता के भाग जाने की। इस खबर के कई पहलू थे। कोई कहता विनता राजी नहीं थी। किसी ने कहा, "आया तुम्हें मालूम नहीं। दोनों फिल्म में भर्ती होने गये हैं। उस लड़की को मैं जानता हूँ। फिल्म के सपने देखा करती थी।" दूसरे ने कहा, "यार बात तो तुम्हारी जंचती है। है भी छोकरी फिल्म के लायक। पर सिंह वहाँ भी विलेन ही बनेगा।"

यह प्रवाद कई दिनों तक खूब गर्म रहा। जीवन से अधिकतर लोग पूछा करते। जीवन खुद अन्धकार में था। वह समझता अवश्य था कि सिंह ने विनता के साथ जबरदस्ती की है। पर कह कुछ नहीं सकता था। इस घटना ने उससे उसका एक साथी छीन लिया था। वह परेशान रहता।

धीरे-धीरे खबर ठंडी पड़ने लगी। लड़के अपने दूसरे कामों में अधिक दिलचस्पी लेने लगे। पर तभी एक और ताजी खबर आयी। खबर थी कि सिंह विनता को कार में लेकर जबर्दस्ती भगा ले चला था। कार की रफ्तार उसने अन्धाधुन्ध बढ़ा रखी थी। एक मोड़ पर कार पेड़ से टकरा गयी। एक्सीडेंट से कार में आग लग गयी। विनता कार से बाहर गिर पड़ने के कारण सिर्फ जख्मी हो कर बच गयी, पर शिवबरण कार एक्सीडेंट में मर गया और विनता अस्पताल में थी।

जीवन अपने कमरे में उदास-सा पड़ा यही सब कुछ सोचता रहा। कई बार शिवबरण की याद उसे रुला गयी। वह सोचता जिन्दगी भी क्या है ? मिट्टी के कच्चे घड़े से भी नाजुक। जरा किसी कड़ी चीज से टकराई नहीं कि चूर-चूर हो गयी। शायद फिर भी धीमी रफ्तार से चलने में इस जिन्दगी को अधिक खुशहाल रखा जा सकता है। सिंह की रफ्तार बेहद

तेज थी। टूटते तारे की तरह तेज। वह आसमान में एक लकीर-सी खींच कर बुझ गया। आसमान तो अब भी है, पर वह लकीर नहीं।

आखिर कोई जिए क्यों? जीवन का मन गहरे अवसाद से भर गया। मरना जब ध्रुव है तो जिन्दगी के लिए इतनी परेशानियाँ क्यों? मरने के बाद मर जाने वाले के लिये रह ही क्या जाता है?

समय के पास हर चीज का हल होता है। धीरे-धीरे जीवन ने भी शिववरण की मौत को स्वीकार कर लिया और अपनी जिन्दगी की किताब के पन्ने पलटने लगा।

बिद्ध मृग

जीवन की जिन्दगी के नये अध्याय में दो व्यक्तियों ने प्रवेश किया। एक था गृहस्थी रमाकान्त और दूसरी सहपाठिनी सरिता। रमाकान्त बी. ए. में जीवन का सहपाठी था पर दोनों की मैत्री का प्रारम्भ शिववरण की दुर्घटना से ही हुआ। दोनों की मैत्री का आधार सहज सदभाव से अधिक कुछ न था। रमाकान्त अब कानून पढ़ रहा था। जीवन उसके घर जाता तो अपने घर की दूरी को भूल जाता। जीवन जिस नवीन मनोभूमि से गुजर रहा था उसमें उसे एक धैर्यशाली श्रोता की आवश्यकता थी। रमाकान्त उस शर्त की पूर्ति करता था।

जीवन अपने जीवन की विशृंखलता से अपरिचित, अपने छात्र जीवन को कल्पना के रस-पुष्ट करता हुआ आगे बढ़ रहा था। अब वह एम. ए. का छात्र था। इन्हीं दिनों उसका सरिता से परिचय हुआ। सरिता को देख कर उसने मान लिया था कि विश्व अत्यन्त सुन्दर है। जीने योग्य है, भोगने योग्य है। यौवन का प्यार रसवादी होते हुए भी आदर्शवादी होता है। इसका कारण यही है कि यौवन अपने चारों ओर की वास्तविकताओं की उपेक्षा करके आगे बढ़ कर सोचने का आदी होता है। जीवन का प्यार

सरिता के रूप की सोपान से चढ़ कर अपने आदर्श को अधर में स्थापित करने लगा।

सरिता को कीर्ति अपकीर्ति देने वाली हजारों कथाएं उसके चरित्र के साथ जुड़ी थीं। जीवन ने भी उन कथाओं को सुना, भले कहे जाने वालों से सुना, पर उसका मन विश्वास कर ही नहीं सका। जहाँ अन्य लोग सरिता की सुन्दरता को बुराइयों का हेतु सिद्ध करते, वहाँ जीवन उसी सुन्दरता को समस्त अच्छाइयों का हेतु मानता। वह अवसर रमाकान्त से सरिता की चर्चा करता। उस चर्चा में सरिता के रूप के प्रति श्रद्धा रहती थी व्यक्तित्व के प्रति नहीं यह अपनी पत्नी में आसक्त रमाकान्त भी न समझ पाया।

प्रथम साक्षात्कार के बाद से ही जीवन के मन में सरिता से परिचय की अदम्य लालसा जाग उठी थी। वे नित्य एक दूसरे को देखते। घंटों साथ ही एक कमरे में बैठते। पढ़ते। पर बात का कभी कोई अवसर न आता। जीवन मन ही मन नाटकीय परिस्थितियों की कल्पना करता हुआ, सरिता से परिचय के अवसर खोजा करता।

पर ऐसा अवसर कभी न आया कि वह वीरनायक की तरह सरिता की सहायता का कोई अवसर पाता। न तो कभी सरिता को बुरे लोगों ने एकान्त पाकर छेड़ने की कोशिश की जिससे वह वहाँ सहसा आविर्भूत हो कर अपने पराक्रम का प्रदर्शन कर सरिता के प्रेम का अधिकारी हो जाता और न वह कभी सरिता की कार के नीचे दब कर घायल हो सका जिससे सरिता करुणा से अभिभूत हो उसकी सेवा में लग जाती और अस्पताल की शैया से उनके प्रणय का प्रथम परिच्छेद प्रारम्भ हो जाता।

परिचय बहुत ही मामूली ढंग से शुरू हुआ। उस दिन कक्षा में तब तक वे ही दोनों थे। खाली घंटा था और दोनों ही अपनी पुस्तकों में व्यस्त रहने का प्रयत्न कर रहे थे। एक बार दोनों की दृष्टियाँ किसी ऐसे क्षण में उठीं कि एक दूसरे से मिल गयीं। जीवन झेंप गया। सरिता मुसकुरा उठी और तत्क्षण उसने पूछ भी लिया, "आपने बी. ए. कहाँ से किया ?"

जीवन ने संकोच से मुक्ति पाने का प्रयत्न करते हुए कहा, "यहीं से।"

सरिता ने फिर कहा, "आप तो होस्टल में रहते हैं न।"

"हाँ। और आप शहर में ?" उसने पूछा।

सरिता ने सिर हिला कर 'हाँ' कहा। जीवन अनायास ही कह गया "आपको कार में आते अक्सर देखा करता हूँ।"

यह कह कर उसे लगा कि जैसे उसने सरिता को अपनी किसी दुर्बलता का हवाला दे दिया। सरिता ने सहज भाव से कहा, "हाँ। मेरा घर शहर के एकदम दूसरे छोर पर है। कार से ही आने में सुभीता होता है।"

"आपके पिता कोई अफसर हैं," उसने प्रश्न किया ?

वह बोली, "नहीं। ज्वेलर्स हैं। हमारी हीरे जवाहारात की दूकान है।"

यदि जीवन किसी तरह मन को यह प्रत्यय दिला सकता कि सरिता किसी मामूली पिता की पुत्री है और वह कार उसकी अपनी नहीं मांगी हुई है तो उसके हृदय को अधिक शान्ति मिलती। इस अप्रत्याशित वार्तालाप ने उसके मन को जो सुख दिया वह तो दिया ही साथ ही यह पीड़ा अवश्य दी कि सरिता और उसकी सामाजिक परिस्थितियों में जो अन्तर है वह कभी मिट नहीं सकता।

इस वार्तालाप के बाद जीवन उसी दिन रमाकान्त के घर पहुँचा। आज उसे एक ऐसे साथी की आवश्यकता थी जिससे वह जी भर कर सरिता की चर्चा कर सकता। रमाकान्त कम बोलने वाला अत्यन्त शान्त स्वभाव का व्यक्ति था। वह अपने सुन्दर दाँतों को चमकाता हुआ जीवन के उद्‌गारों को सुनता और उसके प्रवाह में कभी एक शब्द कह कर भी बाधा न डालता। जीवन ने रमाकान्त को बताया : वह असाधारण सुन्दरी है। मैं नित्य देखता था, पर आज मैंने उसके अन्तस सौन्दर्य को भी देखा है। उसके मन प्राण अत्यन्त ही कोमल और स्नेह भरे हैं। उसमें अभिमान नहीं। उसके पिता करोड़पती हैं। हीरे-जवाहरातों का व्यापार करते हैं। सारी रियासतों में उनकी रसद है। राजा-महाराजाओं और सेठ-साहूकारोंसे ही वास्ता पड़ता है। पर सरिता को अपने पिता के वैभव का कतई अभिमान नहीं।

जीवन के लौट जाने पर रमाकान्त की पत्नी ने कहा, "तुम्हारे मित्र को प्यार हो गया है।"

"तुम सुन रही थीं"···रमाकान्त ने हंस कर पूछा।

वह मुसकरा कर बोली, "अगर कोई धीरे से बोलना ही न जाने तो सुनने वाले का दोष ?"

इस पर दोनों पति-पत्नी कितनी ही देर तक हँसते रहे। फिर रमाकान्त बोला, "मुझे एक बात का डर है।"

"क्या ?" पत्नी ने पूछा।

वह बोला, "दोनों की सामाजिक परिस्थितियों में इतना अन्तर है कि कहीं जीवन को बाद में रोना न पड़े।"

"वह लड़की भी प्यार करती है ?" पत्नी की जिज्ञासा थी।

"कौन जाने उसके मन में क्या है।" रमाकान्त ने कहा, "मुझे तो शक ही है कि वह जीवन को प्यार कर सकेगी।"

"तब तुम स्त्री का मन नहीं जानते।" पत्नी ने ईषत् गर्व के साथ कहा।

रमाकान्त स्वीकार करते हुए बोला, "सच तो यह है कि पुरुष अपना ही मन नहीं जानता, वह स्त्री को तो क्या जानेगा। पुरुष बहुत सरल होता है।"

पत्नी ने विनोद पूर्वक कहा, "अधिक तारीफ न करो।"

"क्या झूठ है।" उसने पूछा।

पत्नी ने वार्ता को विराम लगाते हुए कह दिया, "तुम मूर्खता को सरलता समझते हो।"

रमाकान्त अपनी इस मधुर पराजय पर कितनी ही देर तक हँसता रहा। उसकी हँसी का कारण न समझ पा कर नन्हीं बच्ची मधु अपनी टेर लगा बैठी, "बाबू जी आज अम्मा ने मुझे मारा था।"

रमाकान्त बोला, "अब इसे अपनी बातों में शामिल कर लो, नहीं तो थोड़ी देर में तुम से कहेगी, बाबू जी बुरे हैं।"

इतना कह कर उन्होंने बच्ची को गोद में उठा लिया। पत्नी सास की आहट पाकर भीतर चली गयी।

दो चार दिन बाद जीवन ने आकर रमाकान्त को एक और सन्देशा दिया। वह खुश था और खुशी उसके मनोगत भाव को गुप्त न रख पा रही थी। जीवन ने आते ही कहा, "भाई रमा, आज तो कोई बढ़िया-सी चीज खिलवाओ।"

भीतर से रमाकान्त की पत्नी ने आ कर कहा, "बढ़िया चीजों की कमी क्या ? पहले कोई खुशखबरी सुनाओ तो।"

रमाकान्त बोला, "यह क्या कम खुशखबरी है कि आज जीवन आते ही चहकने लगा।"

पत्नी बोली, "चहकने की भी तो कोई वजह होनी चाहिये। क्यों जीवन भैया ?"

जीवन कुछ ऐसे झेंपा जैसे उसका रहस्य सब पर प्रकट हो गया हो। वह चुप ही रहा। भाभी बोली, "आज मालूम पड़ता है सरिता···· ·।"

उन्होंने वाक्य अधूरा जान कर छोड़ दिया ! जीवन विचलित हो उठा। रमाकान्त की ओर वह परेशान निगाहों से देखने लगा। उस दृष्टि का आशय था कि सरिता का नाम इन तक कैसे पहुँचा। रमाकान्त समझ कर बोला, "मुझे अपराधी न समझना जीवन ! जब पिछली बार तुम आए थे तो खुद ही अपनी भाभी को सब कुछ बता गये थे।"

"मैं" वह अचरज के साथ बोला, "मैंने तो उस दिन इन्हें देखा तक नहीं था ?"

भाभी बोलीं, "पर मैंने बातें सुन ली थी। जब कोई जोर से बोलता है तो उसका मतलब मैं यही लेती हूँ कि आस-पास के सभी लोग सुनें और दिलचस्पी लें ! खैर आज की बात बताओ।"

जीवन के तो मुँह में जैसे जुबान ही नहीं रह गयी थी। भाभी हँसती हुई बोली, "अच्छा तो तुम बातें करो अपने दोस्त से मैं तो चली। पर यह तो बता दो कि क्या बढ़िया चीज़ बनाऊँ !"

जीवन ने झेंप उतारते हुए कहा, "भाभी तुम्हारे हाथ की तो हर चीज बढ़िया होती है।"

भाभी ने जाते-जाते फिर वार किया, "पर यह हर किसी से न कहना, नहीं तो कलह मच जायगी !"

भाभी चली गयी। जीवन और झेंप गया। रमाकान्त मुक्त कंठ से खिल-खिला कर हँस पड़ा। हँसते-हँसते बोला, "भाग्यवान हो जीवन जो तुम्हें

भाभी हर जगह मिल जाती है। तुम्हारे भाग्य को सिर्फ मैं समझ सकता हूँ क्योंकि मेरी कोई भाभी नहीं।"

पर उस समय जीवन तो सरिता के ही विचारों में मग्न था। भाभी अब सरिता से बहुत पीछे जा पड़ी थी। अब तो वह किसी भी सुख या माधुर्य की कल्पना सरिता के बिना कर ही नहीं पाता था।

जीवन चाहता था कि रमाकान्त उत्सुकता दिखा कर वह जो कहना चाहता है उससे जान ले! पर रमाकान्त के शान्त जीवन में उत्सुकता कदाचित् किसी भी बात के लिये न थी। वह मुसकुरा-मुसकुरा कर और और बातें करता रहा। अन्त में जीवन ने ही कहा, "तुमने पूछा नहीं कि मैं आज खुश क्यों हूँ।"

"बताओ," रमाकान्त ने कहा।

"तुम्हें क्या बताऊँ जब तुम कोई दिलचस्पी नहीं लेते," जीवन किसी तरह अपनी कहने की इच्छा का निरोध कर रहा था।"

रमाकान्त बोला, "मेरी दिलचस्पी तुम्हारी हर बात में है। दिखाने की जरूरत नहीं। कहो तो।"

जीवन प्रकट हो गया, "कल इतवार है। सरिता ने मुझे अपने घर बुलाया है।"

जीवन ने शुभकामना की, "ईश्वर करे यह घर तुम्हारा सदा के लिये हो जाय।"

"ऐसा मत कहो," जीवन ने उस मनचीती बात के मिथ्या विरोध में कहा।

रमाकान्त बोला, "शुभकामना का हर मित्र का अधिकार होता है।"

उस दिन भाभी ने जीवन को बहुत बढ़िया भोजन कराया। उसकी रुचि की कई चीजें बनवाईं। खाते समय बोली, "मेस का खाते हो। घर का खाना मिले तो वही नियामत! आज की दावत इसी आशा में है कि अब जल्दी ही तुम्हें घर का खाना मिलने लगे।"

भाभी की आशा पर अपनी आशा का स्वर्ग रचता हुआ जीवन वहाँ से लौटा। चलते-चलते रमाकान्त ने कहा, "कल की रिपोर्ट देना न भूलना।"

भाभी ने कहा, "अच्छी खबर दोगे तो अच्छी चीजें मिलेंगी।"

कल आया। शाम आयी। जीवन भी आया। वह सचमुच ही बेहद खुश था। आज वह मधु के लिये कितने ही सारे खिलौने भी लाया था। मधु 'चाचा 'चाचा' कह कर घर को सिर पर उठाने लगी! भाभी उतावली के साथ बोली, "भैया, अब तो मुँह मीठा करने वाली खबर सुना दो।"

जीवन ने प्रसन्नता न छिपा कर कहा "भाभी तुम तो बहुत तंग करने लगीं!"

भाभी बोली, "यह तो मेरे रिश्ते का हक़ है। अच्छा तो अब जल्दी से बता डालो।"

"कुछ बात भी तो हो," जीवन ने कहा।

रमाकान्त दोनों की बातों का धीमे-धीमे मुसकुरा कर रस ले रहा था। भाभी बोली, "मधु अपने चाचा से पूछो कि इतने सारे खिलौने किस लिये लाये।"

मधु अपने खिलौनों में व्यस्त थी। उसे खिलौने मिल गये थे। कारण जानने की उसे जरूरत नहीं थी। जीवन ने कहा, "कह दो मधु नहीं पूछेंग।"

मधु ने मैना की तरह कह दिया, "नहीं पूछेंगे।"

भाभी ने पूछा, "हाँ तो वहाँ आज कैसी खातिरदारी हुई।"

जीवन रमाकान्त की ओर देखते हुए कृत्रिम रोष के साथ बोला, "तुमने यह बात भी इन्हें बता दी।"

रमाकान्त हँसता रहा। भाभी ने कहा, "कह दूँगी उससे कि ये पत्नी से बातें छिपाने के हिमायती हैं।"

जीवन के कान तक लाल हो गये। बोला, "भाभी तुम तो सीमा नहीं देखती।

भाभी ने चुटकी लेकर कहा, "सीमा की बात अभी-अभी कर रहे हो। बाद में तो···"

"लो भाभी मैं जाता हूँ···" जीवन ने उठने का कोई प्रयास न करते हुए कहा, "तुम तो तंग करने लगीं!"

भाभी बोलीं, "अपने मन से पूछो !"

भाभी देवर का संवाद समाप्त न होता अगर भीतर से सास ने बहू को रसोई में न बुला लिया होता। भाभी के जाने पर जीवन के दम में दम आया। रमाकान्त के पूछे बिना ही उसने सरिता के घर की बातें करनी शुरू कर दीं। हर बात में तारीफ। कोठी की तारीफ। कार की तारीफ। घर के नौकर-चाकरों की तारीफ। माँ तो बिलकुल माँ है। पिता जी तो जाने कैसे हीरों का सौदा करते हैं। उतना सीधा आदमी तो कोई हो ही नहीं सकता। सरिता उनकी इकलौती लड़की है। राजकुमारियों की तरह रहती है। मा-बाप उसे आँखों की पुतली से भी ज्यादा सम्हाल कर रखते हैं। उसने यह भी बताया कि मा ने उसके घर के एक-एक आदमी के बारे में पूछा और अन्त में बराबर आते रहने को भी कहा। वहाँ घंटों रहा। बात की बात में सारा वक्त बीत गया। सरिता ने अपना बागीचा भी दिखाया। ऐसे-ऐसे प्यारे फूल हैं उस बागीचे में कि क्या कहूँ।

कभी माँ, कभी पिता, कभी सरिता, कभी बगीचा इसी तरह वह हर विषय पर घूम फिर कर बार-बार आता रहा। एक की बात कहते-कहते दूसरे की कहने लगता। किसी नयी बात पर पहुँच जाता और फिर पुरानी बात पकड़ लेता। उसने यह भी बताया कि माँ ने उसकी कहानियाँ भी पढ़ी हैं। तारीफ करती थीं। पूछ रही थीं, "तू यह सब कैसे लिख लेता है।

उस समय रमाकान्त भी यही सोच रहा था कि यह जीवन कैसे लिख लेता है कहानियाँ। यह कितना बच्चा है कितनी आसानी से यह खुश हो सकता है। मन में इसके इतनी भी जगह नहीं कि एक छोटी-सी बात भी अपने तक रख सके। कैसे यह ऐसी सृष्टियाँ कर लेता है। क्या वह जीवन इस जीवन से पृथक है जो कहानियों की सृष्टि करता है। आज कल तो वह स्वयं एक कहानी का नायक बन रहा है। जाने उस कहानी का अन्त क्या होगा। दुखद या सुखद। रमाकान्त का मन अज्ञात पीड़ा से भर उठा। उसे लगा कि जीवन अपने चारों ओर मोह के एक ऐसे जाल की सृष्टि कर रहा है जो जितना कसता जाएगा उतनी ही उसे पीड़ा देगा।

जीवन सरिता और उसके परिवार की चर्चा में इतना व्यस्त था कि

रमाकान्त की स्पष्ट वेदना भी वह न समझ सका। वह कहता गया—मैं सोचता था कि सुन्दरता को अलंकरण की जरूरत है। पर सरिता को देख कर मुझे लगता है कि अलंकारों को सरिता जैसे सुन्दर अंगों की जरूरत है। रमाकान्त, कोई स्त्री इतनी सुन्दर हो सकती है यह उसे देख कर ही पता चलता है। वह गाती भी है। ईश्वर ने उसे रूप गुण दोनों हाथों लुटाए हैं। मैंने उसके बनाए चित्र भी देखे हैं। जैसे वह सभी कलाओं का संगम है। कविता भी करती है। रमा, सरिता दुनिया की सब से सुन्दर, सब से कलामयी और सब से अच्छी लड़की है।

रमाकान्त ने मान लिया कि जीवन को सरिता से सचमुच ही प्यार हो गया है। जब प्रेमी प्रशंसा करता है अपनी प्रेयसि की तो उसे हर बात की सीमा अपनी प्रियतमा ही तो जान पड़ती है।

सरिता और जीवन की घनिष्टता बढ़ती गयी अब दोनों घर पर ही साथ-साथ पढ़ने की योजना बनाने लगे। सरिता के माँ-बाप को जीवन जैसे सरल और निरीह युवक को अपनी पुत्री से मिलने देने में कोई दोष नहीं जान पड़ा। माँ तो और भी प्यार देने लगी! वे जान ही नहीं सकी कि जीवन की इस निरीह मुखाकृति के पीछे कितनी बड़ी लालसा बल पकड़ रही है।

पढ़ते-पढ़ते जीवन जब सरिता को कुछ बताने लगता तो वह उसके मुँह की ओर कुछ ऐसे भाव से देखती जिससे स्पष्ट पता लगता कि उसका ध्यान चाहे कहीं हो, पढ़ाई में तो अवश्य ही नहीं है। जीवन पूछता, "सुनती नहीं हो सरिता !"

सरिता कहती, "सुनने के लिए क्या कान तुम्हारे मुँह से लगा दूँ।"

कभी जीवन कहता, "पुस्तक की ओर देखो।"

तब सरिता का उत्तर होता, "पुस्तक को तो बाद में भी देख सकती हूँ। इस समय तो सुनने दो।"

'सुनने दो' कह कर वह 'देखने दो' की ही ध्वनि करती। पर जीवन सहसा विश्वास ही नहीं कर पाता कि सरिता-सी सुन्दर लड़की के लिए जीवन जैसे साधारण युवक में भी कुछ दर्शनीय हो सकता है।

कभी सरिता पढ़ते-पढ़ते सिर से मफलर कुछ अजीब ढँग से बाँध लेती।

अपनी द्विवेणी को दोनों कँधों पर से आगे वक्ष पर डाल लेती। जीवन को छुरे-चाकू बेचने वाली ईरानी लड़कियाँ याद आ जातीं। उसे वह सब कुछ अतिशय अच्छा लगता। फिर भी कहता, "तुम पढ़ती क्यों नहीं।"

धीरे-धीरे जीवन को यह विश्वास होने लगा कि सरिता के लिए वह विशेष अर्थ रखता हैं। सरिता पढ़ते-पढ़ते उसे छेड़ती भी रहती। एक मेज़ पर वे दोनों आमने-सामने बैठे रहते और सरिता का पाँव हठात् उसके पाँव पर जा पड़ता और तब वह कहती, "ऊँह, पैर भी कहाँ जा पड़ता हैं। या तो आप ही पैर मेज़ से बाहर रखिए, या मैं ही रखूँ।"

तब वह अपने ही पैर मेज़ से बाहर रखने का फैसला करती, जो बरबस ही फिर यथास्थान पहुँच कर जीवन को चंचल करने लगते। उसकी इन प्रवृत्तियों को जीवन रमाकान्त से भी छिपाता, पर एकान्त में उन पर खूब चिन्तन करता। अब उसका मन पुस्तकों में नहीं लगता। सरिता शब्द कहीं भी, किसी भी प्रसंग में क्यों न लिखा हो उसे बहुत प्यारा लगता। वह स्वयं कोरे कागजों पर कभी-कभी सरिता सहस्र नाम लिख डालता। इन तीन अक्षरों में उसके लिए दिव्य संगीत था। सरिता का संक्षेप 'सरि' उसे और भी प्रिय लगता और अपने एकान्त में जाने किसे सुनाने के लिए वह पुकार उठता 'सरि'।

शब्द कोष में भी जहाँ सरिता शब्द था उसने उसके यथार्थ अर्थ को काट कर लिख दिया था 'मेरी कामना'। उसका अनुराग अभिव्यक्ति के लिए पीड़ित हो उठा था, पर साहस के नितान्त अभाव ने उसे गुंफित ही रखा। सरिता उसके जाते ही जैसे उसे भूल जाती थी पर वह सरिता के परोक्ष में स्वयं को ही भूला रहता। अब एक दिन भी सरिता को न देख पाता तो विकल हो जाता। छुट्टियों का स्वागत सभी छात्र करते हैं, पर उसे वे छुट्टियाँ पसन्द न थी जिनमें वह सरिता को देख भी न पाए।

सरिता जीवन की कामना का सब से बड़ा विषय हो गयी। उसी की चिन्ता, उसी की चर्चा सुख देती। उसी की याद, उसी की उपेक्षा उसे पीड़ा देती। जैसे समस्त सुख का अर्थ था—सरिता। जैसे समस्त पीड़ा का भी अर्थ था—सरिता। एक शब्द में यदि उसे सर्वस्व की अभिव्यक्ति करनी

होती तो वह कह सकता था—सरिता। और वह सरिता इतनी समीप होने पर भी कितनी दूर थी !

इस दूरी का पता नित्य किसी न किसी व्यवहार में चल जाता था, और वही व्यवहार समीपता का द्योतक होने के कारण जीवन को उलझन में डाल जाता था। जीवन को प्रयाग आए दो मास बीत गए थे। घर के समाचार अच्छे न थे। बड़े भैया भी निरन्तर बीमार रहते थे। कब क्या हो जाए, किसी को पता न था ! कालेज में लड़के जीवन से ईर्ष्या करते। उसे सरिता के साथ देख कर बगल से कहते निकल जाते, 'गुडलक'। इसका अर्थ यही होता कि जिसके योग्य तुम नहीं हो उसको तुम ने पाया है। जीवन सुन कर जो हँसी हँसता उसमें कहीं क्षोभ भी होता। पर इसकी प्रतिक्रिया में सरिता के अधरों पर जो मुस्कान खेलती उसमें गर्व होता।

एक दिन जीवन को मामूली-सा ज्वर हो आया। वह ज्वर में दो-चार रोज तो कालेज जाता रहा, पर धीरे-धीरे ज्वर ने इतना बल पा लिया कि उसे खाट से लगा दिया। फलत: उसका कालेज जाना बन्द हो गया। अब एकान्त कमरे में शैया पर पड़े-पड़े उसे चिन्ता के अतिरिक्त कोई काम न था। कभी उन लड़कों की चिन्ता करता जिन्हें वह पढ़ाने जाता था। कभी किसी पत्र आदि को लेख भेजने की चिन्ता करता। पर ये समस्त चिन्ताएँ भी अधिक काल तक उसे व्यस्त न रख सकीं। फिर वह खाली हो जाता और तब सरिता की चिन्ता ही उसके खाली पन को मिटाती।

उसे सरिता की प्रतीक्षा थी। उसे आशा थी कि सरिता उसे देखने अवश्य आएगी। उसे विश्वास था कि वह अवश्य ही व्यग्र हो उठी होगी और अब आने ही वाली होगी। कदाचित् इसी आशा के मोह में उसने साधारण से ज्वर से तीव्र ज्वर की कामना की थी। उसने ज्वराक्रान्त अवस्था में यह तक सोच डाला कि सरिता के चिन्ताव्यक्त करने पर वह कैसे मुसकुरा कर कहेगा कि तुम नाहक घबड़ाती हो। मामूली बुखार ही तो है। चार डिग्री ज्वर को तो मैं ज्वर समझता ही नहीं। तुम आ गयी हो। अब मैं अच्छा हो जाऊँगा।

हर पदचाप उसे सरिता की लगती। हर आहट उसे सरिता के आगमन

की आशा दिलाती। हर सरसराहट में उसे सरिता की साड़ी की ध्वनि सुनाई देती और दिन में जाने वह कितनी बार ऐसी आशाओं से भर उठता।

पर सरिता नहीं आयी उसे देखने और वह बिना उसके आय ही अच्छा हो गया। अच्छा वह हो रहा था और उसी अनुपात में उसकी उदासी भी बढ़ रही थी। फिर वह दिन भी आया जब वह नहा-धो कर कालेज भी जा पहुँचा। सरिता से मिला।

सरिता ने उसे देख कर कहा, "काफी दुबले हो गये हो।"

जीवन ने उसकी सहानुभूति पाने को कहा, "बच गया यही बहुत समझो।"

सरिता ने बिना द्रवित हुए कहा, "मैंने तो सुना था कि तुम्हें मामूली बुखार भर है!"

जीवन को बुरा लगा। कहा, "एक सौ चार-पाँच डिग्री से तो कम होता ही न था।"

सरिता बोली, "मलेरिया में ऐसा ही होता है। जब आता है तो दनदना कर चढ़ता है। मौसम ही आजकल कुछ ऐसा है। जिसे देखो उसी को शिकायत।"

सरिता ने न आँसू बहाए, न यह कहा कि तुम बीमार पड़ा करोगे तो मैं मर जाऊँगी और न इसी बात का इशारा किया कि इतने दिनों तुम नहीं आए तो कालेज में मेरा मन ही नहीं लगा।

जीवन ने प्रसंग बदल दिया, "मैं तो क्लास लेक्चर्स में काफी पिछड़ गया हूँ। तुम ने तो नोट्स लिखे होंगे।"

"हाँ," सरिता ने कहा ?

"मुझे दोगी।" उसने पूछा।

सरिता ने तत्काल दे दिये। जीवन उन कापियों को लेकर अपने कमरे में आया। वे कापियाँ उसे अतिशय सुख दे रही थीं। वह उन्हें उसी कोमलता से छूता जिस कोमलता से प्रेमी प्रेयसि का स्पर्श करता है। उन्हें देखते रहने में भी उसे अपूर्व रस मिलता। उसने उन्हें कितनी ही देर तक खोला भी नहीं। कालेज से लौट कर वह थक गया था। उसने उन कापियों को अपने सिरहाने रखा और तकिये से दबा कर लेट गया। फिर निकाला।

बगल में लिए लेटा रहा। कुछ देर वे उसकी छाती पर पड़ी रहीं और उसी अवस्था में वह कुछ देर के लिये निद्रा के वश में चला गया।

खाना खाया न था। मेस के नौकर ने आ कर जगाया। उसने कापियों को दुलरा कर एक ओर को रख दिया। मुँह हाथ धो कर भोजन किया। फिर उन कापियों में व्यस्त हो गया। सरिता के अक्षर देखता। उसे मोतियों से भी खूबसूरत लगते। तभी वह एक-एक पन्ना पलटने लगा।

पन्ने पलटते-पलटते वह कई जगह रम जाता। कहीं किसी स्त्री की सुन्दर आँखें बनी हुई थीं, तो कहीं नृत्य-मुद्रा में हाथ की अंगुलियाँ। कहीं शृङ्गारपूर्ण वेणी चित्रित थी तो कहीं उन्नत पयोधर। कहीं-कहीं कार्टून बने थे और उनके नीचे व्यंग लिखे थे। उन कापियों में कविताएँ सभी प्रेम विषयक थीं। जीवन उनकी ध्वनियों के विशेष अर्थ खोजने लगा। वह विकलता पूर्वक ऐसी अभिव्यक्ति की खोज में था जिसका संकेत उसकी ओर हो। कापी में प्रेम विषयक कुछ उद्‌गार भी थे। कहीं जीवन के प्रति घोर निराशा भी व्यक्त की गई थी। एक जगह लिखा था, "मेरा प्रिय नहीं जानता कि मैं उसे प्यार करती हूँ। जाने क्यों जब वह सामने होता है तो मैं व्यक्त नहीं हो पाती।" इस वाक्य पर चिन्तन उसने सब से अधिक किया। उसे लगता कि यह वाक्य उसी की ओर इंगित करता है। वह सरिता जो मेरे पिता की मृत्यु पर मेरे लिये रो पड़ी थी, जो मुझे अचानक पा कर कह उठती थी कि मैं याद ही कर रही थी, अवश्य ही आजकल इसलिये निर्मम हो उठती है कि वह अपने प्यार को मुखरित नहीं कर पाती।

यह सोच कर वह सरिता के प्रति और अधिक प्यार और आभार से भर गया। उसे आत्म ग्लानि भी हुई जो उसने अनुरागमयी सरिता को ग़लत समझा। वह उसके लिये प्यार में कितनी विकल है।

उस वाक्य के बाद अगले ही पृष्ठ पर लिखा था···'प्यार का अर्थ आँसू है। प्यार का अर्थ पीड़ा है। प्यार का अर्थ आत्मा का बन्धन है। मुझे नहीं चाहिए ऐसा प्यार। मैं मुस्कान चाहती हूँ। मैं उल्लास चाहती हूँ। मैं मुक्ति चाहती हूँ।'

यह वाक्य जीवन को अच्छा न लगा। वह फिर उलझन में पड़ गया। उसने कापी बन्द कर दी। कुछ देर आखें बन्द किये पीड़ा को भोगता हुआ पड़ा रहा। फिर आँखें खोली। फिर उन प्रिय अक्षरों को देखने लगा। पर प्रिय अक्षरों का अर्थ सर्व-प्रिय न था। उसने और भी पन्ने उल्टे। यत्र-तत्र और भी अनेक निरर्थक वाक्य लिखे थे। वे निरर्थक वाक्य उसे अधिक सुखकारी लगे। कारण कि उनका अर्थ वह मनोनीत कर सकता था। बस एक क्षण उसे लगता कि सरिता उसे अनन्य अनुराग करती है, दूसरे क्षण लगता नहीं यह सब मृग मरीचिका है!

जब जीवन केवल सरिता में ही सुख-दुख की परिभाषा खोज रहा था तभी घर से एक और बुरा समाचार आया। भाई साहब की मृत्यु हो गयी! यह तार पढ़ कर वह सन्न रह गया। भाभी की वैधव्य मूर्ति सामने आ गयी। उसे अपना बचपना भी याद आया जब उसे इन भाई साहब से चिढ़ थी। भाभी का प्यार पाने में वे उसके सब से बड़े शत्रु थे। वह चाहता था कि वह किसी तरह इतनी दूर चले जाएं कि उसकी भाभी का शासन करने कभी न आ पाएँ। आज वह इतनी ही दूर जा चुके थे। पर अब जीवन वह सब कुछ न चाहता था। वह तख्त पर औंधा लेट कर रोने लगा। वह अपने कमरे में अकेला था। कालेज जाने की तैयारी कर ही रहा था कि डाकिया तार दे गया। किसी ने उसके कान में कहा, "जीवन रोओ मत। भाई साहब के बाद घर का भार तुम पर है। अब तुम घर के बड़े हो। घर चलो और भाभी के आँसू पोंछो।"

यह जीवन का सबल मन था। उसकी आवाज सुन कर उसने सिर उठाया। गर्दन तानी। बाहर से भी उस बड़प्पन को अनुभव करना चाहा। पर दो-चार मिनट से अधिक वह उस दायित्व का निर्वाह न कर सका। उसका गाम्भीर्य लुप्त हो गया। उसका आत्म-विश्वास डोल गया। वह फिर घर के छोटे बच्चे की तरह रोने लगा।

गाड़ी का वक्त निकल चुका था। अब वह कल ही जा सकता था। कालेज जाने को उसका मन न कर रहा था। सरिता को वह देखना चाहता था, पर अपनी विपदा उससे छिपाना चाहता था। सुन कर भी कहीं

वह चुप रही तो जीवन सम्हल न पाएगा। जिस सरिता से वह भरपूर संवेदना की अपेक्षा करता हो वही जब कृपण हो जाए ?

वह कितनी ही देर तक अनिश्चय की अवस्था में रहा। अन्त में वह रमाकान्त के घर चल दिया। लॉ कॉलेज सुवह के वक्त लगता था। वह कालेज की पढ़ाई कर सीधा घर पहुँच जाता था ! जीवन ने घड़ी देखी। 'रमा घर पहुँच गया होगा' उसने ध्वनि हीन होठों को हिला कर अपने आप से कहा।

अक्टूबर का अन्त था। धूप में तेजी न थी। पर वह अपने भीतर की आग से झुलस रहा था। उसने सायकिल उठाई और मूक वधिर-सा रमाकान्त के घर की तरफ चल दिया।

वह आधे रास्ते भी न जा पाया था कि उसे कालेज जाती हुई सरिता मिल गयी। सरिता अपनी कार में ही थी। उसने कार धीमी कर जीवन को आवाज दी। जीवन जो वेसुध-सा सायकिल पर जा रहा था उस आवाज के सम्मोहन से बन्ध कर रुक गया। वह कार के पास आया और बिना बोले ही कार के दरवाजे पर एक हाथ टेक कर खड़ा हो गया।

सरिता ने पूछा, "कहाँ जा रहे हो।"

"रमाकान्त के घर," उसने कहा।

"कालेज बन्द है क्या ?" सरिता ने पूछा।

"नहीं तो," जीवन ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया। उसकी आवाज़ भर्राने लगी थी।

"तो कालेज क्यों नहीं गए," सरिता ने जिज्ञासा की।

जीवन ने कह दिया, "मेरी तबियत ठीक नहीं।"

सरिता स्नेह के साथ बिगड़ कर बोली, "धूप में सायकिल चलाने को तबियत ठीक है। देखूँ, तुम्हारा माथा। बुखार तो नहीं बुला लिया फिर।"

अपराधी बालक की तरह जीवन चुपचाप खड़ा रहा। सरिता ने माथा छुआ। बोली, "तप तो रहा है। तुम फिर बीमार पड़ोगे। ईश्वर ने एक तो तुम्हें वैसे ही बहुत तन्दुरुस्ती दी है। तिस पर तुम्हारी यह लापरवाही। बुखार था तो अपने कमरे में क्यों नहीं रहे।"

जीवन को अपनी बीमारी याद आई। वह कमरे में ही तो बन्द रहा। किसी की प्रतीक्षा करता रहा। पर किसने सुध ली। उसके मन में आया कि कह डाले कि वहाँ तीमारदारी करने क्या वह खुद आएगी। पर चुप रहा। सरिता कह रही थी, "आज मुझे कालेज जाने में देर हो गई। अच्छा ही हुआ। तुम मिल गए। नहीं तो पता भी न चलता। सायकिल कार के पीछे बँधवा लेती हूँ। तुम मेरे साथ चलो।"

"कहाँ," जीवन ने गूढ़ अचरज के साथ पूछा।

बोली, "तुम रमाकान्त के घर इसीलिये तो जा रहे हो कि वहाँ तुम्हारी अच्छी तरह देखभाल हो सकेगी। मैं तुम्हें अपने घर ले जाऊँगी। वहाँ भी कोई कसर न रहेगी। मीठी-मीठी बातें करने वाली भाभी तो न रहेगी, पर कड़ुवी दवा-सी मैं जरूर मौजूद रहूँगी।"

जीवन का प्यार मचल उठा। उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि इसी क्षण उसे निमोनिया कर दे, टायफाइड कर दे और वह फिर कभी अच्छा न हो। यह कड़ुवी दवा उसे सदा मिलती रहे। पर यह कैसे हो। भाई साहब की मृत्यु हो गयी है। जाने संस्कार किस ने किया होगा। तत्काल घर जाना जरूरी है। उसने कह दिया मेरी तबियत तो ठीक है। पर······"

"पर क्या?" कड़ुवी दवा ने पूछा।

"मुझे कल घर जाना है," उसकी आँखें दगा दे गई। आँसू छलछला आए थे।

सरिता ने विकलता से पूछा, "क्या हुआ जीवन।"

"भाई साहब नहीं रहे," जीवन कह कर बच्चे की तरह रो दिया।" उसका माथा कार के दरवाज़े पर टिक गया।"

उसके आँसू देख कर सरिता ने अपने आँसू थाम लिये। प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरती रही। कितने ही क्षण बीत गए। सरिता ने ड्राइवर से कहा, "बाबू, साहब की सायकिल पीछे बाँध लो। फिर उसने कार का दरवाजा खुद खोला और जीवन का हाथ पकड़ कर अपने पास ही भीतर बैठा लिया। जीवन आँसुओं को थामने का निष्फल प्रयास करता रहा।"

ड्राईवर ने सायकिल बाँध ली। सरिता ने कहा, "घर चलो।"

गाड़ी चल दी। सरिता जीवन को देख-देख कर करुणा से द्रवित होती जा रही थी। कई बार बोलने की चेष्टा के विफल प्रयास के बाद किसी तरह बोली, "जीवन, जाने ईश्वर क्यों उन्हीं को अधिक मुसीबतें देता है, जो अच्छे और निर्दोष होते हैं।"

जीवन चुप रहा सरिता कहती गयी, "जीवन, मेरा ही भाग्य खोटा है। जिसे मैं अपना समझने लगती हूँ उसी का भाग्य धोखा देने लगता है। तुम्हारा मेरा परिचय न हुआ होता, तो ऐसा कभी न होता।"

जीवन ने आँसू पीते हुए कहा, "ऐसा मत कहो सरिता। इन मुसीबतों में भी मैं तुम्हें देख कर ही तो जी रहा हूँ।"

जाने जीवन कैसे इतनी स्पष्ट उक्ति कर गया था। सरिता ने प्यार विह्वल स्वर में पूछा, "सच जीवन।"

जीवन ने मूक स्वीकार किया। सरिता उमग कर बोली, "तब मैं तुम्हारे भाग्य को बदल दूँगी, मैं तुम्हारे भाग्य को बदल दूँगी। जीवन तुम इस धरती के सब से भाग्यवान व्यक्ति हो कर जीओगे।"

जीवन का प्यार कृतज्ञ हो उठा।

उस दिन सरिता भी कालेज न गयी। वह जीवन का मन बहलाने में ही लगी रही। माँ भी जीवन के पास बीच-बीच में आ जाती और आँखों में आँसू भर कर लौट जाती। सरिता ने हठ कर के जीवन को भोजन कराया। उसे सोने के लिए विवश किया। जीवन आज्ञाकारी बालक-सा सरिता के समस्त निर्देशों का पालन करता रहा। शाम हो गई। दोनों फिर बाहर लान पर जा बैठे। जीवन भविष्यत को मनोरम सपनों में कल्पित कर रहा था। सरिता कुछ उदास थी। जीवन बात करना चाहता, पर बात का कोई सूत्र न निकाल पाता। आखिर उसने पूछा, "एम. ए. पास कर के तुम क्या करोगी।

सरिता बोली, "क्या करूँगी, खुद नहीं जानती। क्या करने से क्या होगा…यह भी मुझे पता नहीं। कभी सोचती हूँ कि रिसर्च कर लूँ। पर पिता जी कहते हैं, क्या फायदा। काफी पढ़ लीं। तुम्हें नौकरी नहीं करनी है। मैं भी सोचती हूँ कि नौकरी नहीं करनी है। पिता की इतनी सारी

सम्पत्ति आखिर किस की है। मेरी ही तो है। और नौकरी का प्रयोजन भी क्या ?"

जीवन ने पूछा, "और शादी ?"

"शादी" सरिता ने गहरी साँस ली। बोली, "शादी ही करके क्या होगा। मैं एक अच्छी पत्नी नहीं बन सकती। जीवन मुझ में कहीं कोई ऐसी त्रुटि है कि मैं कभी अच्छी पत्नी न बन सकूँगी। किसी को अपना पति मान ही न सकूँगी।"

जीवन के सपनों भरे मन को दुख छू गया। बोला, "ऐसा तुम क्यों कहती हो। तुम्हें पाने वाला धरती का सब से सौभाग्य शाली व्यक्ति होगा।"

सरिता बोली, "यह सब हो सकता था। यह सच हो सकता है···पर ···पर ?···जीवन कोई और चर्चा करो। मुझे यह सब कुछ नहीं सुहाता। मुझे दुखी मत करो। जीवन···"

सरिता आवेश में भर कर वहाँ से चली गयी। जीवन की समझ में कुछ न आया। आखिर सब तरह से सम्पन्न सरिता का दर्द क्या है। इस दर्द को लेकर वह कैसे किसी को धरती का सब से सौभाग्य-शाली व्यक्ति बना सकेगी।

जीवन इस 'क्या' की दिशा में सोचने को प्रस्तुत न था। उस ओर उसे मृत्यु से भी गहरा अन्धकार दिखाई देता था।

जीवन अगले ही दिन चला गया। भाभी की वैधव्य-मूर्ति देख कर वह विचलित हो उठा। सुहाग का कोई विशेष सुख नहीं भोगा था उन्होंने फिर भी सुहागिन का रूप तो था। कोई १५ दिन में ही जीवन शोक के वातावरण से घबड़ा उठा। वह भाभी की उस विषाद भरी मूर्ति से कहीं दूर चला जाना चाहता था। १६ वें दिन भाभी अपने भाई के साथ चली गयी। और उसी दिन वह प्रयाग के लिए गाड़ी में बैठ गया। गाड़ी में बैठ कर जैसे उसने मान लिया था कि उसके जीवन के समस्त दुख अब पीछे ही छूट जाएँगे।

पर दुख का सम्बन्ध तन से भी अधिक मन से है। तन के दुख सर्वथा मिट जाते हैं। पर मन के दुख आदमी का छायावत पीछा करते हैं। जीवन अपने घर को तो छोड़ कर आया, पर दुख को न छोड़ सका।

सरिता को भी वह मानसिक संताप की अवस्था में छोड़ कर गया था। इस अवधि में उसका वह संताप कितना बढ़ गया होगा यह सोच कर वह सहम उठता। कालेज पहुँचा तो वहाँ भी सरिता न मिली। उसके मन को विश्वास हो गया कि वह अवश्य ही अत्यधिक पीड़ित हो कर अस्वस्थ हो गयी होगी। उसकी इच्छा भी हुई कि उसे घर जा कर देख आए। पर वह किसी भी प्रकार की पीड़ा से कुछ काल के लिए दूर रहना चाहता था। सरिता जो बाहर से प्रचुर शौभाग्य शालिनी है भीतर ही भीतर अनन्त दाह बटोरे है इसका उसे पता चल गया था। अन्त में कालेज से वह सीधा रमाकान्त के घर जा पहुँचा।

रमाकान्त से वह इस बार भी जाते वक्त न मिल सका था। पर कनखल से पत्र लिख कर उसने उसे समस्त समाचार सूचित कर दिये थे। जब दोनों एक दूसरे से मिले तो दोनों भरे-भरे थे। दोनों ही कोई दुखद चर्चा करते हुए डर रहे थे। जीवन चाहता था कि रमा वैसा कोई प्रश्न न करे। रमा भी चाहता था कि जीवन उस चर्चा को न छेड़ दे। दोनों इधर-उधर की बातें करते रहे। पर बातें जैसे उन्हें खास नहीं मिल रही थीं। मौसम पर बातें की। पढ़ाई पर बातें की। रमाकान्त, गृहस्थी है। उसने महंगाई पर भी बातें की। थोड़ी-सी राजनीति की भी चर्चा हो गयी। दर्शन भी अछूता न रहा। फिर भी उनके बीच का वह खालीपन न भरा जिसे वह शोक की चर्चा किये बिना भर डालना चाहते थे। इतने में भाभी आ गयीं। उन्होंने कुछ बातें करनी चाहीं पर रमाकन्त का संकेत समझ कर होठ बुदबुदा कर ही रह गयीं। आग भरी बदली-सी वे चुपचाप थिर हो गयीं। भाभी के पीछे-पीछे मधु आ गयी। उसके हाथ में एक छोटी-सी रेल थी। वह आते ही चिल्लाने लगी, "पापा, पापा, रेल चला दो।"

पापा ने कहा, "चाचा से कहो। चाचा अभी-अभी रेल से आए हैं।"

मधु ने चाचा की तरफ देखा। चाचा ने कहा, "बेटा तुम्हारी रेल की पटरियाँ तो हैं ही नहीं।"

मधु ने मचलते हुए कहा, "हम नहीं जानते। चाचा रेल चलाओ।"

"रेल," इस शब्द की आवृत्ति ने जीवन के सिर पर हथौड़ा-सा मारा। उसे अपनी रेल की यात्रा याद आयी। यह रेल क्या है आखिर। इस का ईजाद न होता तो कितना अच्छा था। घर से इतनी दूर जाने की कभी नौबत न आती। किसी का सुख-दुख इतना व्यापक नहीं होता। एक सीमा में ही व्यक्ति पूर्णता पा लेता। पर अब भटकता है।

"क्या सोचने लगे भैया।" भाभी ने पूछा।

जीवन अपने चिन्तन के उसी प्रवाह में कहने लगा, "भाभी, रेल का ईजाद अच्छा नहीं हुआ। देखो न, इसके साथ-साथ आदमी का सुख-दुख कितना बढ़ गया है। मैं आप से पाँच सौ मील दूर रहता हूँ। पर मेरा दुख फिर भी इसके जरिये आप तक पहुँच गया है। मेरे बड़े भैया जाते रहे। मैं उनकी मौत पर मौजूद भी न रह सका। इसीलिए न कि इसने मुझे इतनी दूर ला पटका था।"

जीवन का गला भर आया। वह प्रसंग जो दबा पड़ा था उभर आया।

आँसू टपक पड़े। फिर भी बोलता रहा, "देखो तो भाई साहब भी चले गए। इसी तरह और लोग भी जा सकते हैं। क्या सब चले जाएँगे। भाभी, मृत्यु जब ध्रुव है तो इतनी पीड़क क्यों है।"

अब जीवन के आँसुओं ने स्वर भी पा लिया था। भाभी चुप रहीं पर आँसू न थाम सकीं। मधु रेल भूल कर असमंजस में पड़ गयी थी। रमाकान्त ने ठंडी साँस ली। कुछ कहना चाहा। पर हरबार उसे लगा कि शब्द से आगे आँसू आ रहे हैं। वह उठ कर बाहर आँगन में चला गया। थोड़ी देर बाद उसने वहीं से आवाज दी, "जीवन तुम ने यह नयी चीज देखी।"

भाभी उस आवाज को सुन कर भी स्वयं को सम्हालने के लिए घर के भीतर चली गयी। जीवन आँसू पोछ कर बाहर आया। रमाकान्त ने उसे मकान में कुछ फेर बदल दिखाई। बताया, "यह छज्जा मैंने अभी बढ़वाया है, और ये खिड़कियाँ भी अभी निकलवायी हैं। इस कमरे में दिन में भी अन्धेरा

रहता था। अब यह उठने-बैठने लायक हो गया है। छज्जा बरसात में बहुत काम देगा। रात को पानी बरसते रहने पर भी इसके नीचे आराम से सोया जा सकेगा।

जीवन ने भी छज्जे और खिड़कियों में व्यस्तता दिखायी। वे फिर अपने आपको इधर-उधर की बातें कर के बहकाने लगे। कलकत्ते बम्बई के मकानों की चर्चा हुई। लन्दन पेरिस भी न बचे। अमरीका के सौ-सौ मंजिले मकानों की भी बातें कीं। फिर जीने से वे लिफ्ट की चर्चा पर आए। पर सारी दुनियाँ में घूम आ कर भी वे अपने दुख से पिंड न छुटा सके। अब घरों में दिये जल उठे थे। भाभी भी एक दिया ले कर आयी। आँगन में तुलसा चौरे पर उसे जला कर रखा। तुलसी जी की परिक्रमा की और आँखें बन्द कर हाथ जोड़ प्रार्थना की।

रमाकान्त ने मकानों की चर्चा से थक कर अपनी पत्नी को विषय बनाया। बोला, "जीवन, बताओ तो इस समय तुम्हारी भाभी क्या प्रार्थना कर रही है।"

रमाकान्त ने बात मुसकुरा कर कही थी, जिससे जीवन कोई विनोद का सूत्र ढूँढ़ सके। जीवन सहश चेष्टा कर बोला, "भाभी ने एक दर्जन लड़कियाँ माँगी हैं।"

भाभी के नेत्र बन्द थे। पर कान खुले। शब्द पहुँचे। वे अपनी सलज्ज हँसी रोक न सकीं और न चुप ही रह सकीं, "तुम बहुत बुरे हो जीवन भैया!"

"हाँ जीवन तुम बहुत बुरे हो। तुम्हारी भाभी तो तुलसा मैया से यह वर माँग रही थीं कि अगले जन्म में मुझे ऐसा पति न मिले।" रमाकान्त परिहास की सृष्टि में सफल हो रहा था।

भाभी बिगड़ीं, "तुम बड़े निर्लज्ज हो। ऐसा कहते किसी का भय भी नहीं मानते।"

रमाकान्त बोला, "भय तो सिर्फ एक तुम्हारा मानता हूँ। पर जब तुम मुझ से अच्छा पति माँगो तो तुम्हारा भी भय क्यों मानूँ। क्यों जीवन।"

जीवन बोला, "तुम ने भाभी को ग़लत समझा। असल में भाभी तो

तुलसा मैया से यह वर माँग रही थीं कि अब तुलसा में मंजरी के बजाय आम का बौर लगने लगे और उन्हें खूब आम मिलें।"

इस पर भाभी खिलखिला कर हँस पड़ीं। बोलीं, "जीवन भैया, विवाह होने के बाद अपनी पत्नी से पूछना कि वह तुलसा जी से क्या माँगा करती हैं।"

रमाकान्त ने हँस कर कहा, "जीवन भूल कर भी ऐसी स्त्री से ब्याह न करना। वह सदा तुम्हारी लम्बी उम्र चाहेगी और खुद जल्दी मरना। बुढ़ापे में उसका नाम ले ले कर तड़पा करोगे। हिन्दुस्तान की हर औरत की यह सब से बड़ी बुराई है कि पति के लिए अमरता माँगती है।"

भाभी इस आरोप पर प्रसन्न हुईं। मुदित मन बोलीं, "पुरुष को ईश्वर ने अक्ल ही कम दी, कोई करे क्या?"

जीवन चुप था। वह ब्याह की चर्चा से कहीं अन्यत्र पहुँच गया था। भाभी ने चुटकी ली, "क्यों जीवन बाबू, पत्नी की खोज में चले गये क्या।"

रमाकान्त ने कहा, "वह तो खोजी-खोजायी है।"

जीवन को याद आया कि सरिता को विवाह से वितृष्णा है। यह विनोद-वार्ता भी उसके लिए पीड़क हो उठी। कह दिया, "भाभी, भला मुझे भी कोई प्यार कर सकता है।"

भाभी ने कहा, "तुम्हें सिर्फ प्यार ही किया जा सकता है।"

रमाकान्त ने हँस कर कहा, "जीवन देखो मुझे तुम से ईर्ष्या हो रही है। मुझ से तो ये लड़ती भी खूब हैं।"

जीवन चुप रहा। भाभी ने ही कहा, "वे तो सब से अधिक भाग्यशाली हैं जिनकी पत्नियाँ लड़ती हैं और प्यार भी करती हैं। यह लड़ाई भाग्यवानों को ही मिलती है।"

रमाकान्त ने भी मन ही मन अपने भाग्य पर गर्व किया। यदि जीवन वहाँ न होता तो वह इतनी मधुर बात कहने वाले होठों को चूम लेता। तभी जीवन बोला, "मैं जाऊँ भाभी।"

इतना कह कर वह स्वीकृति की अपेक्षा किये बिना ही चला गया। उसे जाते देख कर भाभी ने लम्बी साँस ले कर कहा, "अभागा है।"

रमाकान्त बोला, "बहुत बड़ा। अभी से दुख के आवर्त्त में फँस गया।"

पत्नी ने कहा, "तुम्हारा दोस्त है। तुम्हारी ही जैसी किस्मत पाई है।"

रमाकान्त ने पत्नी की स्पर्श सीमा में आ कर कहा, "ऐसा क्यों कहती हो। मैं तो अत्यन्त भाग्यशाली हूँ। मेरी मुसीबतों में तो तुम सदा मेरे साथ रहीं। घर में कई मौतें हुयीं पर तुम्हें देख कर ही मैंने सब को सह लिया।"

भाभी ने कृतज्ञता से भर कर पति को देखा। उनका मुख अनुराग से दीप्त हो कर अत्यन्त शोभामय हो उठा था। पति को लगा कि उसकी पत्नी से सुन्दर इस धरती पर कोई नहीं। उसने पत्नी को खींच कर छाती से लगा लिया। तब आकाश में तारे खिले थे। तुलसा-चौरे पर घी का दीपक साधना की लौ में जल रहा था। तुलसा-मैया मंजरियों में सुरभित हो रही थीं। उन्होंने परस्पर प्यार करने वाले पति-पत्नियों को मंद हवा से डोलती हुयी मंजरियों के मिस जैसे अनन्त आशिर्वाद दिये। रमाकान्त पत्नी को वक्ष से लगाए सोच रहा था, "सभी मेरे जैसे भाग्यशाली क्यों नहीं ?"

जीवन की सरिता से कालेज में मुलाकात हुई। मिलते ही दोनों ने एक दूसरे से प्रश्न किये। सरिता ने पूछा, "तुम आ गए।"

जीवन ने पूछा, "तुम कल कहाँ थी ?"

सरिता ने कहा, "तुम नहीं आए थे, इसलिए कालेज अच्छा नहीं लग रहा था। फिर भी आ रही थी। कल आने को मन ही नहीं किया।"

आज मन कर आया था, "जीवन के स्वर में प्रच्छन्न कटुता थी।"

सरिता ने बुरा न मानते हुए कह दिया, "आज तुम मिलोगे इसका मुझे विश्वास था।"

तभी अध्यापक आ गए। पढ़ाई शुरू हो गयी। जब-सब लेक्चर खत्म हो गए तो सरिता ने कहा, "चलो माँ से मिल आओ। तुम्हें याद करती थीं।"

"आज मुझे कुछ काम है," काम न रहते हुए भी जीवन ने कह दिया। उसने यह झूठ क्यों बोला, उसकी समझ में न आ रहा था। सरिता के प्रति उसके मन में रोष क्यों है, यह भी वह ठीक-ठीक न समझ पा रहा था।

सरिता ने मुसकुराते हुए कहा, "जब मैं कहूँ तो तुम्हें अपना हर काम छोड़ देना होगा।"

जीवन की इच्छा हुई कि चिल्ला कर कह दे, "क्यों छोड़ देना पड़ेगा ? तुम मेरी होती कौन हो ? तुम्हें मेरे सुख-दुख से लेना भी क्या ?"

जीवन फिर भूल गया कि उसके जीवन में कभी कोई दुख भी आया है। सरिता का आकर्षण नित्य बढ़ता गया। नित्य उसकी कल्पना सृष्टि अधिकाधिक मनोरम होती गयी। नित्य वे अधिक घुल मिल कर बातें करते। अधिक समय साथ रहते। अधिक आत्मीयता बरतते। सरिता कहती, "अगर छुट्टी के दिन मुझे यह विश्वास न हो कि तुम आओगे, तो मैं सुबह उठते ही रो पड़ूँ।"

जीवन कृतार्थ हो जाता। कभी सरिता कहती, "मुझे सब पुरुषों से नफरत है। जिनसे नहीं वे सिर्फ दो हैं···एक तुम, एक मेरे पिता।"

जीवन का स्वर्ग धरती पर उतर आता। दोनों अधिक मधुर होकर बातें करने लगते। सरिता उसे जाने क्या-क्या सुनाया करती। उन मामूली बातों में भी जीवन अत्यधिक रस लेता और अपूर्व तृप्ति का अनुभव करता। जीवन को भाभी की याद भी न आती। पत्र लिखना तक भूल जाता। उसे अपने सुख से फुर्सत ही न थी।

पर सुख स्थिरता में बासी हो जाता है। शायद इसी से दुखों का आविर्भाव उनके पुनर्जन्म के लिए होता है। पर वे भाग्यशाली हैं जिनके सुख दुखों के मार्गों से बढ़ कर महत्तम सुख प्रमाणित होते हैं। जीवन के सुख की इस सृष्टि पर फिर एक बार पाला पड़ा। सरिता के घर में उसका अबाध संचार हो चला था। वह घर के व्यक्ति की तरह आने जाने के सम्बन्ध में कुछ अधिकार मान बैठा था। एक दिन पहुँचा तो उसने देखा कि सरिता अपने कमरे में पलंग पर पड़ी रो रही है। तकिये में उसने मुँह छिपा रखा था जो आँसुओं को पीने में अब असमर्थता दिखा रहा था। जीवन उसे रोती हुई देख कर कुछ क्षण तो असमंजस में ही पड़ा रहा। सरिता सुवासित फ़ूलों की ढेरी-सी पड़ी थी। अपने उत्पीड़न में भी वह कितनी मनोहर थी। उसकी इच्छा हुई कि धीरे से सरिता का सिर उठा कर अपनी गोद में रख लें। उसके हाथ उसके लहरीले बालों को छूने को मचल उठे। पर हाथ पास तक पहुँच कर लौट आये। उसने प्रणय विह्वल स्वर में पूछा, "सरिता !"

सरिता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उसने फिर कहा, "सरिता रो रही हो।"

सरिता का मन्द रुदन कुछ तीव्र हो उठा। जीवन संयम न कर सका। उसने सरिता को अंक में ले लिया। सरिता रोती रही। जीवन ने पुचकार कर कहा, "मत रोओ सरिता।"

सरिता रोती-रोती बोली, "मुझे रोने दो जीवन। मुझे रोते रहने दो जीवन। मेरे मन के दुख का जहर आँसुओं की राह गल जाने दो। नहीं तो मैं पागल हो जाऊँगी।"

"सरिता," जीवन ने स्वर को प्यार की समस्त माधुरी देकर कहा।

सरिता कहती गई, यह रोना ही मुझे जीवित रखे हैं। मैं न रोऊँ तो मर जाऊँ। तुम्हारी गोद में रोने में मुझे सुख मिल रहा है। कोई मेरे आँसुओं को समझ सके तो मैं निहाल हो जाऊँ।"

जीवन पर नशा छा गया। आज सरिता ने उसे अनन्य आत्मीयता की निकटतम परिधि में ले लिया था। भावुकता के तीव्र प्रवाह में बहते हुए उसने कहा, "तुम रोओ सरिता तुम्हारे आँसू मेरे लिए गंगा यमुना से भी अधिक पवित्र हैं। मुझे आज्ञा दो कि मैं इन आँसुओं को पीकर सागर बन जाऊँ। मेरी सरिता, देखो सागर में ज्वार आ रहा है।"

प्रणय शायद कविता में ही बोलता है। देह की भूख रखते हुए भी प्रणय यथार्थवादी कभी नहीं हो पाता। जीवन सरिता को आश्वासन देने में कविता ही करता रहा और सरिता उस कविता के नशे में बेहोशी को बुलाती रही।

अन्त में कुछ स्वस्थ हो कर सरिता ने बताया, "जीवन मेरे माँ-बाप मेरा ब्याह कर डालना चाहते हैं।"

"तो इसमें रोने की बात क्या," जीवन ने स्वप्न देखते हुए कहा।

"आज से चार वर्ष पूर्व यह प्रस्ताव होता तो रोने की बात न होती। पर······आज मैं ऐसी कोई कल्पना भी नहीं कर सकती।" सरिता कहते कहते आर्द्र हो गई थी।

जीवन का मन दुख गया। पूछा, "ऐसा हठ क्यों सरिता।"

वह बोली, "हठ···दूसरों को यह हठ ही लगता है जीवन। बताओ तो कि कोई स्त्री कितनी बार ब्याह कर सकती है।"

जीवन की समझ में प्रश्न ही नहीं आया बोला, "इस प्रश्न का तुम से सम्बन्ध ही क्या ?"

सरिता ने क्षुब्ध स्वर में कहा, "इसका हर नारी से सम्बन्ध है। तुम विवाह को जाने क्या समझते हो। पर स्त्री के लिए विवाह कुछ पवित्र और अलौकिक भी है। उसका विवाह तो तभी सम्पन्न हो जाता है जब वह किसी को अपना हृदय हार देती है।"

सरिता कहते-कहते हाँफ उठी थी। क्षण भर चुप रह कर बोली,' 'मेरा विवाह हो चुका है जीवन। मेरी आत्मा का दुल्हा निश्चित हो चुका है। अब मैं किसी दूसरे पुरुष की उस रूप में कल्पना भी नहीं कर सकती।"

जीवन आशा निराशा के बीच झूलने लगा। सरिता का वह काम्य पुरुष कौन है ? यह प्रश्न उसके मन में बार-बार उभरता। कभी इसका उत्तर वह स्वयं को मान लेता तो कभी···और तब वह टूटने लगता। सरिता कह रही थी, "जीवन तुम तो लेखक हो। बोलो, मेरी पीड़ा के लिए तुम्हारे पास भी आदर है या नहीं।"

जीवन ने कह दिया, "मैं तुम्हें प्यार करता हूँ सरिता !"

सरिता बोली, "मैं जानती हूँ। इतना मैं समझ सकती हूँ। पर मैं तुम्हें प्यार न करती होऊँ, बोलो तब भी तुम मुझे प्यार करोगे।"

जीवन को ऐसा लगा जैसे साफ-सुथरी सड़क पर चलते-चलते अचानक किसी अदृश्य उभार से ठोकर लग गई हो। उसके पास इसका उत्तर न था। चुप ही रहा। सरिता कहती गयी, "मैं प्यार करती हूँ। पर जिसे मैं प्यार करती हूँ वह मुझे प्यार नहीं करता। ओः जीवन जो प्यार का प्रतिदान न दे सके ऐसे व्यक्ति से प्यार हो ही क्यों जाता है।"

जीवन को प्रत्यय न हुआ। वह विश्वास ही नहीं कर पा रहा था कि ऐसा भी कोई व्यक्ति हो सकता है जो सरिता के प्यार करने पर उसे प्यार न करे। उसने वेदना के साथ कहा, "वह कोई अभागा ही हो सकता है सरि जो तुम्हारे प्यार के उत्तर में पत्थर ही बना रहे।"

"हाँ वह अभागा ही है," सरिता ने दीप्त विश्वास के साथ कहा, पर जीवन अब तो उसकी याद ही मेरा अभाग्य बन गयी है। ओ: कैसी निठुर याद है। मेरा दिल टुकड़े-टुकड़े होने लगता है। जीवन, तुम इस वेदना को शायद अभी न समझो।"

जीवन ने कहना चाहा कि इस क्षण वह ऐसी ही वेदना भोग रहा है। पर कह न सका। मूर्ख आदर्शवादी की तरह बोला, "मुझे बताओ उस व्यक्ति को सरिता। मैं दूँगा तुम्हें तुम्हारा प्रिय।"

सरिता ने जीवन को देखा। जीवन का यह कथन उसे आह्लाद दे रहा था, पर विश्वास वह नहीं कर पा रही थी। बोली, "जीवन अब तो भगवान भी मुझे उसे नहीं दे सकता। उसके बीबी है, बच्चे हैं, वह उन्हें प्यार करता है।"

जीवन ने पूछा, "जब तुम ने उसे प्यार किया तब भी उसके पत्नी थी। बच्चे थे।"

सरिता ने कह दिया, "हाँ जीवन। मुझे जाने इसमें कुछ भी अनुचित क्यों न लगा। ओ: जीवन उस व्यक्ति से सुन्दर इस धरती पर कोई नहीं। उसे देख कर मुझे लगा कि मेरा आराध्य वही है। उसकी पत्नी, उसके बच्चे मेरी पूजा में बाधक नहीं हो सकते। पर वह भीरु निकला। जीवन, वह मुझे प्यार नहीं करता। जीवन मैं मर जाऊँगी। बोलो मैं क्या करूँ। मेरे माता-पिता मेरा अन्य से विवाह करना चाहते हैं। लड़का विलायत पास है। सम्पन्न है। सुन्दर स्वस्थ है, पर जीवन, इस देह को पति रूप में अन्य कोई नहीं छू सकता। मैं तत्काल भस्म हो जाऊँगी।"

उसकी पीठ को सहलाता हुआ जीवन का हाथ रुक गया। उसे लगा जैसे अंगारों की ढेरी उसकी गोद में पड़ी हो। फूल अंगार हो गए थे। उसे वह भी क्षण याद आया जब उसने जीवन से कहा था कि उसे दुनिया भर के पुरुषों से नफरत है। एक जीवन से नहीं, एक अपने पिता से नहीं, बाकी सब से हैं। सब से हैं। पर आज···उसे वह भी दिन याद आया जब सरिता ने उस से कहा था कि "मैं तुम्हारे भाग्य को बदल दूँगी मैं तुम्हारे भाग्य को बदल दूँगी। तुम इस धरती के सब से भाग्यवान पुरुष होगे।"

सरिता उसके लिए जटिल हो उठी।

सरिता ने जीवन का उदास मुख देखा। उसके उन अंगों को जो उसका स्पर्श कर रहे थे सिकुड़ते देखा। बोली, अब भी करोगे प्यार। बोलो जब कि मैं दूसरे के लिए रोती हूँ, तब भी करोगे प्यार।"

जीवन चुप रहा। सरिता बोली, "तुम प्यार नहीं कर सकते। पुरुष ने कभी प्यार नहीं किया। पुरुष ने प्यार करना सीखा नहीं। प्यार में देना होता है। तुम सब लेने वाले माँगने वाले हो। ओः काश मैं उस व्यक्ति को भूल सकती। यही सोच कर भूल सकती कि उसके पत्नी है, बच्चे हैं। पर जीवन, प्यार नहीं भूलने देता। मैं क्या करूँ। अगर मैं उसके सिवा अन्य किसी को प्यार नहीं कर सकती तो मैं क्या करूँ।"

जीवन ने वेदना के साथ कहा, "मैं भ्रम में था।"

सरिता बोली, "तुम्हारा भ्रम झूठा न होगा। जीवन तुम मुझे अच्छे लगते हो। तुम्हें भी मैं प्यार करती हूँ। तुम से बातें करने को तुम्हारे पास बैठे रहने को जी करता है। तुम अच्छी-अच्छी बातें करो और मैं सुनूँ। पर मैं तुम्हारी पत्नी नहीं बन सकती। मुझे मित्र बना सकते हो। पर··· ओः इस से अधिक नहीं। जीवन मैं उस व्यक्ति की दासी बन कर भी जी सकती हूँ। पर अन्य पुरुष की स्वामिनी बन कर भी मर जाऊँगी। जीवन·· ···।"

और सरिता फिर रो पड़ी। रोते-रोते बोली तुम भी जाओ जीवन। इस समय तुम भी चले जाओ। मैं तुम्हें प्यार नहीं करती। मैं किसी को नहीं करती। मुझे अकेली छोड़ दो।

जीवन वहाँ से वैसे ही वेग से चला आया जिस वेग से पर्वत से प्रपात। उस क्षण उसे कुछ नहीं सूझ रहा था। कैसे उसने सायकिल उठायी। कैसे वह होस्टल पहुँचा। उसे कुछ पता न था। वह बिस्तर में जा कर समा गया। उस समय उसकी यही कामना थी कि कमरे की छत टूट कर गिर पड़े या धरती ही उसे निगल ले।

सरिता अगले दिन भी कॉलेज नहीं आयी पर जीवन के पास पत्र आया। नौकर दे गया था। विशेष कुछ नहीं लिखा था। बुलाया भर था। कितनी

ही देर तक जीवन असमंजस में पड़ा रहा। कभी वह न जाने का संकल्प करता तो कभी जाने की तैयारी। सरिता किसी और को प्यार करती है यह याद आते ही उसके पाँव बँध जाते। पर सरिता बुला रही है, यह सोचते ही वह तत्काल वहाँ पहुँच जाना चाहता। आखिर उस से रहा न गया। सायकिल पर वह सरिता के घर की ओर चल दिया।

सरिता आज पूर्ण प्रसन्न थी। कल की सरिता से आज की सरिता जीवन को सर्वथा भिन्न लगी। शाम का वक्त था। वह उसे बगीचे में ले गयी। मीठी-मीठी बातें करती हुई घूमती रही। कई फूल तोड़ कर उसने उसे दिये। एक फूल को उसने जीवन को देकर अपनी वेणी में लगाने को कहा। उसने उसे कोई गीत भी सुनाया। बार-बार वह उसे छू भी लेती। जीवन स्पृहा से भर-भर उठता। कल की समस्त बातें उसे स्वप्न लगने लगीं। जीवन स्वयं को धरती का परम भाग्यशाली जन समझने लगा। सरिता सोच रही थी ! कैसा शिशु है। कितनी जल्दी रो पड़ता है, कितनी जल्दी हँस पड़ता है।

इसी तरह हँसते-बोलते वे एक कदम्ब के पेड़ के नीचे पहुँचे। उसके स्कन्ध से एक अनफूली लता लिपटी थी। सरिता बोली, "हर लता को एक स्कन्ध चाहिए।"

जीवन ने भी कहा, "हर सरिता को एक सागर चाहिए।"

सरिता के मन में कहीं गहरे वेदना की लहर उठी जो तत्काल वहीं दब कर डूब गयी। उसने लता को देखते हुए कहा, "सरिता को सागर न मिले तो वह अनन्त काल तक बहती ही चली जाएगी, तब तक बहती ही रहेगी जब तक कि कोई मरु न सोख ले।"

"मरु सरस हो उठेगा," जीवन ने उत्साह के साथ कहा।

"पर सरिता तो मिट जाएगी," सरिता का स्वर फिर गिरने लगा था। उसने स्वयं को सम्हाला और विषय बदल दिया, "कदम्ब से कितनी मनोहर स्मृतियाँ जुड़ी हैं हम लोगों की !"

जीवन ने भी समर्थन किया, "कृष्ण की रासलीला का यह अन्यतम सखा रहा है।"

सरिता बोली, "जाने क्यों कृष्ण को कदम्ब की डार के तले ही बाँसुरी बजाना प्रिय था।"

जीवन ने योग दिया, "तभी तो राधा कदम्ब की डार थामे कृष्ण की प्रतीक्षा किया करती थी।"

"प्रतीक्षा सदा स्त्री ही कर सकती है," वेदना फिर सरिता को छू रही थी।

पर जीवन को यह सत्य न लगा। उसने कहा, "स्त्री भी करती है, पुरुष भी करता है। अपना-अपना भाग्य है। जिसके भाग्य में यह प्रतीक्षा आ जाए।"

सरिता को लगा कि जीवन अपनी कह रहा है। पूछा, "तुमने की कभी किसी की प्रतीक्षा ?"

जीवन ने कह दिया, "तुम्हें क्या बताऊँ सरिता।"

"मैंने जान लिया," सरिता हँस पड़ी, "अच्छी लगती है न यह प्रतीक्षा। मीठा-मीठा दर्द होता होगा। आँखें भर-भर आती होंगी। विलम्ब होने पर मौत प्यारी लगती होगी।"

जीवन बोला, "शायद प्रणय की वेदना में स्त्री-पुरुष की अनुभूति समान है।"

सरिता ने कहा, "स्वरूप में शायद हो। परिणाम में नहीं। स्त्री अधिक घुलती है। स्त्री अधिक जलती है। तुम नहीं समझोगे।"

इसके बाद दोनों कमरे में आए। फूलों से किताबों की चर्चा होने लगी। इम्तिहान करीब था। पर किताबों की चर्चा जल्दी ही खत्म हो गयी। फिर दोनों सपनों की बातें करने लगे। इतने में नौकर आया। सरिता से कह गया कि मा जी बुला रही हैं।"

सरिता चली गयी। जीवन प्रतीक्षा करने लगा कितनी ही देर हो गयी। जब लौटी तो सरिता उदास थी। जीवन ने व्यग्रता से पूछा, "क्या बात है। सरिता ?"

सरिता चुप रही। जीवन ने आग्रह किया। सरिता बोली, "मेरी हँसी को लोग ठीक नहीं समझते ?"

"क्या कारण ?" जीवन ने न समझते हुए पूछा।

"मत पूछो जीवन। तुम्हें तकलीफ होगी।" सरिता ने टालना चाहा।

पर जीवन ने हठ ऊपर रखा। सरिता को कहना पड़ा, "मेरा तुम्हारे साथ इतना हँसना, बातें करना, एकान्त में रहना बाबू जी को पसन्द नहीं। मा से कहा कि पढ़ाई का यह कौन-सा ढंग है।"

जीवन को पीड़ा हुई। न पूछता तो अच्छा था। सरिता ने कहा, "बुरा, न मानना जीवन। जब से मैंने विवाह का निषेध किया बाबू जी असंतुष्ट हो उठे है। भाभी प्रसन्न नहीं। तुम पर लोग संदेह करते हैं। मा तुम्हें अच्छा समझती हैं, पर मुँह बोले बेटे से अधिक अधिकार वे भी नहीं दे सकतीं। मेरे पिता के लिए जीवन में वैभव सर्वोपरि है। तुम से घनिष्ठता उन्हें कभी नहीं भाई। मा को तुम अच्छे लगते थे। इसी से सह रहे थे। जीवन, अब तुम कभी यहाँ मत आना। तुम आओ और तुम्हारा सम्मान हो तो मुझे प्रिय है। नहीं तो नहीं।"

जीवन के पास इसके उत्तर में कहने को कुछ न था। उसे लगा कि वह सुख की नगरी से निष्कासित कर दिया गया है। अब दुनिया में उसके लिए कहीं कुछ नहीं रह गया। वह बिना बोले चलने को उद्यत हुआ। सरिता फिर बोली, "जीवन मुझे गलत न समझना। तुम्हें देख कर तुम से बातें कर के मुझे सुख मिलता है। मैं अपनी पीड़ा भूल जाती हूँ पर···।"

पर से आगे वह कुछ न कह सकी। जीवन लुटे व्यवसायी-सा बाहर चला आया।

उसके दो-चार दिन बाद ही कालेज इम्तिहान की तैयारी की छुट्टियों में बन्द हो गया। सरिता से कालेज में मिलने की भी संभावना जाती रही। जीवन एकान्त से बचता हुआ इधर-उधर भागता फिरता। रात को ढंग से सो न पाता। उसे किसी तरह चैन न थी। रमाकान्त के घर भी उसका मन न लगता। उसे यह अनुभव हो रहा था कि एक शहर में ही रह कर वह सरिता को देखे बिना नहीं रह सकता। इम्तिहान खत्म हो और वह वहाँ से किसी तरह भाग सके यही उसे अभीष्ट था। बीच-बीच में कभी-कभी सरिता का नौकर आ जाता। उसके द्वारा वह दो-चार पंक्तियाँ लिख भेजती। कभी

कोई पुस्तक मँगा लेती, कभी कोई पुस्तक भेज देती। सरिता से अधिक सरिता का नौकर जीवन की प्रतिक्षा का विषय हो गया।

फिर इम्तिहान। किसी तरह जीवन ने पर्चे पूरे किये। पास हो जाएगा। इस से अधिक वह आशा नहीं करता था।

आखिरी पर्चा करने के बाद वे दोनों परीक्षा भवन के बाहर मिले। पर अधिक बातें न कर सके। सरिता बोली, "बाबू जी लेने आए हैं। चलूँ। तुम कब जा रहे हो घर ?"

जीवन ने उपेक्षा भाव से कह दिया, "कल। उससे पहले कोई गाड़ी नहीं।"

"पर तुम जाने से पहले मुझ से मिलोगे। घर आना जरूर। आना।" सरिता ने आग्रह से कहा।

जीवन ने बिषाद से कहा, "पर बाबू जी···।"

सरिता असहिष्णु की भाँति बोली, "वहम मत करो जीवन। मैं अधिक देर रुक नहीं सकती। जाने से पहले तुम अवश्य मिलोगे। मत भूलो कि अब हम जाने कब मिलेंगे।"

सरिता चली गयी। जीवन बर्फ-सा जम कर वहीं रहा गया। बग़ल से एक शैतान लड़के ने निकलते हुए कहा, "विदाई का अफसोस मत करो प्यारे। कालेज की रंगीनी तो चार ही दिन की होती है।"

जीवन की गर्दन क्रोध से तन गयी। उसकी इच्छा हुई कि कहने वाले के दाँत तोड़ दे। पर उसका क्रोध उसी को खाकार रह गया। वह धीमे-धीमे होस्टल की तरफ चल दिया।

इम्तिहान सुबह ही निबट जाते थे। दोपहर को वह सोने की व्यर्थ चेष्टा करता रहा। फिर उसने अपना सामान बाँधा। शाम हुई सरिता के घर चला। पर रास्ते में से ही रमाकान्त की तरफ मुड़ चला। रात तक वहीं रहा। अन्त में बिदाई ली। रमाकान्त ने बिछुड़ते हुए मित्र को कस कर छाती से लगाया। भाभी ने मधुर आशीर्वाद के रूप में कहा, "तुम्हारे घर में रानी आए जीवन भैया।" जीवन ने आँसुओं को छिपाने के लिए मधु को गोद में उठा लिया और उसका मुँह चूमने लगा। मधु कह रही थी, "चाचा जल्दी आना।"

भाभी ने कहा, "कहो बेटा कि चाची के साथ आना।"

मधु ने दोनों हाथों से तालियाँ बजाते हुए कहा, "चाचा चाची के साथ आना।"

वेदना विद्ध जीवन कुछ न कह सका। वहाँ से विदा हो अपने होस्टल में आया और अगले दिन सरिता से मिले बिना ही गाड़ी पर सवार हो गया। जब गाड़ी चल दी तो उसका मन किया कि जंजीर खींच कर गाड़ी रोक दे। वह सरिता से हठात् दूर जा रहा था, पर उसके मन और प्राण, सरिता की ही दिशा में दौड़ रहे थे। संगीत सम्मोहन में बद्ध बिद्ध मृग से।

मृग जल

सुषमा कुछ दिन भाई के यहाँ रह कर फिर कनखल लौट आयी थी। धूमकेतु से वैधव्य का स्वागत कहीं नहीं होता। भाई के घर में भी न हुआ। अन्त में उसने उसी घर में लौट आने का निश्चय किया जिस घर में उसके सुहाग की होली जली थी। जीवन के आधार के लिए कुछ न था। निरे स्वाभिमान से क्या होगा, यह सोचे बिना ही वह अपने दुख के कोटर में लौट आयी थी।

एक दिन अचानक ही उसने जीवन को घर आया देखा। जीवन भाभी के चरण छू रहा था और भाभी स्नेह विगलित स्वर में पूछ रही थी, "खबर भी नहीं दी आने की भैया।"

जीवन चुप ही रहा। सुषमा उसके दुबले शरीर और मलिन मुख को देखकर बोली, "यह तुम्हें क्या हो गया भैया? क्या वहाँ भोजन ही छोड़ बैठे थे?"

जीवन रोगियों की तरह हँस पड़ा। बोला, "पढ़ाई का जोर था न भाभी।"

उसी रात को जीवन ने मूर्तिमति दरिद्रता-सी भाभी से कहा, "मैं कल ही बाहर चला जाऊँगा भाभी।"

सुषमा ने अचरज के साथ कहा, "कल ही? इतनी जल्दी ऐसा कहाँ जाना है भैया?"

जीवन बोला, "एक बात तो बताओ भाभी कि जिन्दगी में सब से अधिक महत्व किस बात का है?"

सुषमा बोली, "विधवा भाभी के लिये तुम्हारे जैसे देवर का?"

उसके स्वर में विनोद भी था, वेदना भी थी। पर जीवन ने उस पर ध्यान दिए विना ही कहा, "नहीं भाभी, कीमती पत्थरों का।"

सुषमा अचरज से भर कर चुप रही। जीवन ने स्पष्ट किया, "नहीं

समझीं। दुनिया की आँखों में महत्व है उस पत्थर का जिसे वह हीरा कहती है। मैं हीरों के देश में जाऊँगा जहाँ से लौटूँ तो कुबेर होकर और तब मैं इच्छा भर कर के हर जीच को पा सकूँगा।"

सुषमा नहीं समझी कि जीवन अपनी हार को जीत में बदलना चाहता है। उसने उससे सिर्फ इतना कहा था जिस देश में भी जाना चाहो, चले जाना भैया पर अपनी भाभी के पास लौट कर आना न भूलना। मैं उन हीरों को तो नहीं जानती जिनसे सब कुछ खरीदा जा सकता है। जानती अपनी इस पारस पथरी को हूँ जिसके सहारे अपने दुर्भाग्य के लोहे को भी सोना बनाने का स्वप्न देखती हूँ। तुम मेरे इस पारस को कहीं खो न देना।

जीवन की आँखों में आँसू भर आये। सुषमा ने सोचा यह उसके स्नेह का मूल्य है पर जीवन सोच रहा था कि अभी तो वह दुनिया के लिये ठीकरा ही है। उसके ये आँसू अपने ही प्रति हमदर्दी के थे।

अगले ही दिन जीवन रात की गाड़ी से दिल्ली रवाना हो गया था। दिल्ली से उसने बम्बई की गाड़ी पकड़ी। भीड़ से ठसाठस भरी गाड़ी में एक कोने में सामान पर बैठा जीवन कल्पना लोक में उड़ता हुआ यह सोच ही नहीं पा रहा था कि जब वह कुबेर होकर लौटेगा तो सरिता तब तक न जाने कहाँ होगी।

गाड़ी छूटने में अब थोड़ी ही देर थी। जिन लोगों को आराम की जगह मिल गयी थी और जिन्होंने अपने बिस्तर खोल कर जमा लिये थे उन्हें दूसरे मुसाफिर ईर्ष्या से भर कर देख रहे थे। कोई-कोई दबी जबान से कह भी बैठता, "तीसरा दर्जा है। बैठने की जगह मिलती है। सोना हो तो सेकेन्ड फर्स्ट में क्यों नहीं जाते लोग।"

इस पर दूसरा कहता, "दिन में तो वहाँ भी सोने की जगह नहीं मिलती।"

तीसरा कहता, "इन्साफ ही नहीं। सब कोई अपना आराम देखते हैं।"

इस पर वह साहब जिन्होंने बिस्तर खोल रखा था अपने सामने वाले को सुनाते हुए बोले, "गाड़ी में एक हफ्ते से सफर कर रहा हूँ। अभी बम्बई जाना है। ३६ घंटे का सफर है। आदमी सोए नहीं तो क्या करे!"

दूसरे साहब ने कहा, "मेरी तो तबीयत खराब है। रेल में बैठ कर जा ही नहीं सकता।"

इस तरह लेटने वालों का एक दल अलग से बन गया।

तभी बाहर से कुछ लोगों ने खिड़की की राह अन्दर घुसने की कोशिश की। पहले उन्होंने सामान धंसाना चाहा। सामान न धंसा सके तो खुद घुसने का उपक्रम किया। बाहर के इस आक्रमण पर भीतर वाले सब सन्नद्ध हो गये। वे मिल कर उन्हें बाहर ही रोकने की चेष्टा करने लगे। क्या लेटे, क्या बैठे, और क्या खड़े सब एक स्वर में चिल्लाने लगे, "यहाँ जगह नहीं, दूसरे डिब्बे सब खाली पड़े हैं।"

बाहर वाला कहता, "हम सब देख आए हैं।"

भीतर से जवाब मिलता, "देख आए तो वहीं क्यों नहीं घुस गए।"

जीवन दरवाजे की खिड़की के पास ही बैठा था। पीठ उसकी पाखाने के दरवाजे से लगी थी। तभी बाहर से एक नौजवान ने कहा, "भाई साहब, माफ करें। मुझे भीतर सिर्फ पाँव रखने की जगह दे दें तो बड़ा एहसान हो।"

जीवन ने आरम्भ में कुछ अनिच्छा दिखायी। युवक ने फिर अनुरोध किया "मेरे पास सामान भी बिल्कुल कम है। बस एक बिस्तरभर। आपका बड़ा एहसान होगा।"

अब जीवन से टाला न गया। उसने उसका बिस्तर थाम लिया और बोला, "चले आइए।"

इस पर भीतर वालों में खलबली मच गयी। एक साहब जो आराम से लेटे हुए थे बोले, "हैं हैं यह आप क्या कर रहे हैं। यहाँ पहले ही दम घुट रहा है। आप हैं कि लोगों को भीतर घुसाए जा रहे हैं।"

उसी की बगल वाली सीट पर एक पंजाबी ने बिस्तर जमा रखा था। उसने जीवन को धोती-कुर्ते और साँवले रंग की वजह से बंगाली समझा। बोला, "ऐ बंगाली बाबू, मैं तेरा भी सामान बाहर फेंक दूँगा।"

इस पर जीवन से चुप न रहा गया। पंजाबी वह भी बिल्कुल पंजाबी जैसी बोल लेता था। पंजाबी में ही जवाब दिया, "मैं बंगाली नहीं हूँ। मेरा सामान बाहर फेंकने से पहले अपना बिस्तर लपेटना होगा।"

अब तक युवक भीतर आ गया था। वह शरीर का मजबूत था। पंजाबी को ऐंठते देख कर बोला, "लेटे-लेटे जाना चाहते हो तो चुप रहो, झगड़ा मत करो, नहीं तो रोटी हम भी खाते हैं।"

इस पर पंजाबी ठंडा पड़ गया और चिकनी चुपड़ी बातें करने लगा, "भाई जी आओ, तुसी हमारे सिर पर बैठो। साड्डा मतलब तो······"

वह बहुत कुछ कहता गया। युवक ने फिर उसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। वह जीवन के आग्रह पर उसी के बिस्तर पर जीवन से सट कर बैठ गया। अपने समय से गाड़ी भी खुली। गाड़ी चलते ही हवा के कुछ झोंके आए। आराम से बैठे हुओं को अब अपनी जगह न छिनने का इतमीनान हुआ। गाड़ी धीरे-धीरे रफ्तार बढ़ाने लगी।

गाड़ी के चलने के थोड़ी ही देर बाद जीवन और युवक में बातें होने लगीं। उसने अपना नाम दिनेश बताया। रहने वाला वह दिल्ली का ही था। बम्बई जा रहा था।

रेल में धीरे-धीरे दोनों में घनिष्टता बढ़ती गयी। दिनेश ने दोपहर को एक स्टेशन पर से कुछ खाने को लिया। उसने हठ कर के जीवन को भी खिलाया। वे बैठने को एक बेहतर जगह पा चुके थे। धीरे-धीरे शाम हुई। रात आयी। अब दोनों को कोने वाली सीट मिल गयी थी। सीट के बीचों-बीच दोनों ने अपना सामान जमा दिया। जीवन ऊँघ रहा था। दिनेश ने उसे ऊँघते देख कर कहा, "आप सो जाइए। आप दूर से आ रहे हैं।"

जीवन थोड़ा-सा संकोच दिखा कर किसी तरह पैर मोड़-तोड़ कर सामान जमाकर बनाई जगह में लेट गया। थोड़ी रात बीतने पर कुछ और भीड़ हल्की हुई। दिनेश मौका पाकर ऊपर की सीट पर जम गया। उसे भी अब सोने लायक जगह मिल गयी थी। अगले दिन सुबह दोनों की आँखें भुसावल स्टेशन पर खुलीं। रात्रि के शयन से जीवन की तबीयत कुछ हल्की हो गयी थी। दोनों ने एक दूसरे का अभिनन्दन मुस्कुरा कर किया।

दिनेश ने ऊपर बैठे-बैठे पूछा, "कौन स्टेशन है ?"

जीवन ने बाहर झाँकते हुए बताया, "भुसावल।"

दिनेश नीचे उतर आया। बोला, "यहाँ तो गाड़ी काफी देर रुकेगी

निबट लेना चाहिये। फिर कुछ खा-पी लिया जाए। रात को तो हम ऐसे ही सो गए थे।"

जीवन ने भुसावल नाम पहली ही बार सुना था। बोला, "नाम इधर के स्टेशनों के बड़े अजीब हैं। भुसावल में तो मुझे अजीब ही ध्वनि लगती है।"

दिनेश ने हँस कर कहा, "जनाब नाम में ध्वनि चाहे भुसकी हो पर यह केलों का देश है।"

जब गाड़ी भुसावल से चली तो दोनों निबट चुके थे। जीवन के मन का कुतूहल बढ़ रहा था। दिनेश वहाँ क्या करता है यह जानना उसके लिए आवश्यक-सा हो गया था। आखिर उसे भी तो वहाँ कोई और चाहिए। दिनेश काफी काम का आदमी है। पूछा, "माफ करना भाई, क्या मैं पूछ सकता हूँ कि तुम वहाँ क्या करते हो?"

दिनेश ने बिना हिचक के कह दिया, "फिल्म में हूँ।"

जीवन को प्रत्यय नहीं हुआ। वह तो यह सोचता था कि फिल्म वालों के पास तो अपार धन होता है। एक-एक रोल का उन्हें हजारों-लाखों मिलता है। उसने फिर पूछा, "फिल्म में क्या काम करते हो?"

वह बोला, "एक्ट भी करता हूँ और गीत भी लिखता हूँ। अब सोचता हूँ कि डायलाग भी लिखने लगूँ।"

"तब तो तुम्हारी खासी आमदनी होगी," जीवन न चाहते हुए भी पूछ बैठा।

दिनेश ने कहा, "आमदनी की कौन परवाह करता है। यह तो शौक की बात है।"

फिर मौन छा गया। अब दिनेश की बारी थी। उसने पूछा, "तुम तो वहाँ पहली ही बार जा रहे हो?"

"हाँ," जीवन ने कहा।

"क्या इरादा है?" उसने पूछा।

"रोज़ी," जीवन ने छोटा-सा जवाब दिया।

दिनेश खुद रोजी के लिये बम्बई भागा था। शौक की बात तो झूठ थी। उसे वे दिन याद आए जब आज से तीन साल पहले वह अकेला अनजान बम्बई में पहुँचा था। पूछा, "वहाँ किसी को जानते हो?"

जीवन ने विनोद पूर्वक कहा, "हाँ, वहाँ मेरे एक मित्र हैं फिल्म में काड़ी करते हैं।"

दिनेश ने कुतूहल के साथ पूछा, 'कौन हैं ? क्या नाम है ?"

जीवन ने मुस्कुरा कर कह दिया, "श्री दिनेश।"

इस पर दोनों खिलखिला कर हँस पड़े। कितनी ही देर तक हँसते रहे। दिनेश ने हँसते-हँसते कहा, "अच्छा तो तुम स्टेशन से अपने उन्हीं दोस्त के यहाँ जाना। अनजान शहर में जल्दी से और कोई ठिकाना नहीं बना पाओगे।"

जीवन जो चाहता था वही हुआ। उसने कृतज्ञता से भर कर दिनेश की ओर देखा। बोला, "तुम बहुत अच्छे हो।"

दिनेश ने फक्कड़ की तरह कहा, "यार बुरा कोई नहीं होता। जरूरत खुद अच्छा बनने की है। तुमने मुझे डिब्बे में जगह दी मै तुम्हें बम्बई में जगह दूंगा। यह तो तुम्हारी अच्छाई का बदला भर है।"

जीवन ने कहना चाहा कि मैंने तो कोई अच्छाई नहीं की। तुम जबरदस्ती भी घुस आ सकते थे। पर कह न पाया। इसी बीच में कोई और स्टेशन आ गया और दिनेश खाने का प्रस्ताव कर रहा था।

इस समय डिब्बा सारे भारत का प्रतिनिधित्व कर रहा था। गुजराती, मराठी, सिन्धी, पंजाबी, मद्रासी, उत्तरप्रदेशी यहाँ तक कि बंगाली मुसाफिर भी उस डिब्बे में थे। सब अपनी-अपनी भाषा में निरापद हो कर बोल रहे थे। किसी की अन्य किसी में कोई दिलचस्पी न थी। पहनावे का अन्तर भी उल्लेखनीय था। पारसी अपनी गोल ऊँची टोपी में विशिष्ट था तो गुजराती अपनी पतली लम्बी टोपी और काठियावाड़ी पगड़ी में। मद्रासी अपनी लुँगी में ही गौरव का अनुभव कर रहा था और पंजाबी तड़क-भड़क के कारण अलग दिखाई दे रहा था। सिन्धी को उसके साथ की स्त्री की नथनी और फ्राक पहनी हुई जवान लड़की से समझ लिया जा सकता था। बंगाली अपने ढीले कुर्ते और धोती में ही यह घोषित कर रहा था कि वह रवीन्द्र के प्रदेश का है। जीवन दिलचस्पी के साथ उन सब की वेषभूषा का अध्ययन कर रहा था। दिनेश ने उसके कुतूहल को जान कर कहा, "यही बम्बई है।

मेरी राय में बम्बई भारत का सब से बड़ा कासमोपालीटन नगर है। इस पर कोई एक भाषाभाषी या धर्म वाला दावा नहीं कर सकता।"

अब गाड़ी टनलों में से होकर गुजर रही थी। इसी तरह एक के बाद एक टनल पार करती हुई स्टेशनों को पीछे छोड़ती हुई गाड़ी बम्बई के बोरीबन्दर पर रुकी। दिनेश ने कहा, "अपना-अपना सामान हम खुद ही उठा लें। कुली यहाँ तंग करेंगे।"

"ऐसा क्यों? रेट तो यहाँ भी होगा।" जीवन ने कहा।

दिनेश बोला, "वह सब जगह होता है। पर सब जगह माना नहीं जाता। नम्बर वाला कुली तुम्हारा थोड़ा-सा सामान छूना पसन्द न करेगा। बेनम्बर का बाहर निकल कर दो रुपये माँगेगा और तुम चार आठ आने दोगे तो लड़ने मरने को तैयार रहेगा।"

स्टेशन की विशालता और भीड़ को देख कर जीवन की तबीयत घबड़ा चली थी। वह सोच रहा था कि इतने बड़े शहर में आखिर लोग रहते कैसे हैं। प्लैटफार्म से निकलते हुए जीवन ने पूछा, "अब तुम्हारी जगह कितनी दूर है।"

"यही कोई १५-२० मील," दिनेश ने सहज भाव से कह दिया।

"१५-२० मील," जीवन अचरज में पड़ गया? "इतनी दूर कैसे जाएँगे?"

दिनेश ने कहा, "रेल से।"

"रेल" जीवन ने ऊब कर कहा। रेल से उसका मन भर उठा था। इतनी लम्बी रेल यात्रा उसने इससे पहले कभी न की थी।

दिनेश बोला, "किस सोच में पड़ गए। जल्दी करो।"

जीवन अचरज से उसकी तरफ देख रहा था। वह बोला, "यह बम्बई है। अभी तुम नहीं समझोगे। जैसे दिल्ली कलकत्ते में ट्रामें हैं, वैसे यहां बिजली की रेलें हैं।"

मेन प्लेटफार्म से वे दोनों लोकल प्लेटफार्म पर आए। दिनेश दौड़ कर दो टिकट ले आया। पर प्लेटफार्म पर पहुँचते ही गाड़ी छूट चुकी थी। दिनेश ने दौड़ कर पकड़ने की चेष्टा की और सफल भी हो जाता पर जीवन

की विवशता जान कर रुक गया। हाँफते हुए बोला, "यार तुमने गाड़ी छुड़वा दी।"

जीवन ने कहा, "भला चलती गाड़ी में कैसे चढ़ जाता।"

वह बोला, "चढ़ने लगोगे। बम्बई में चलती गाड़ी पर चढ़ना, दौड़ती हुई ट्रामों से उतरना, दौड़ लगा कर बस पकड़ना, ये सब बातें निहायत जरूरी हैं। यहाँ सुस्ती हवा में जरूर है। दफ्तर में बैठ कर जितना ऊँघना हो भले ही ऊँघ ले कोई, पर जब रेल, ट्राम या बस पकड़नी हो तो बन्दर से भी अधिक फुर्ती दिखानी होगी।"

जीवन बोला, "इस गाड़ी में तो चढ़ना वैसे भी नामुमकिन था। लोग लटके जा रहे थे।"

"यह भी जरूरी है," दिनेश बोला। अभी तो एकाध ही लटका हुआ था, पर दफ्तरों के वक्त पर तो हर गाड़ी में ढेरों लोग लटके रहते हैं। खैर, दो-चार रोज में खुद समझ जाओगे। चलो अब देखें कि अगली गाड़ी में कितनी देर है।

इतना कह कर दिनेश इन्डीकेटर के पास आया। जीवन साथ-साथ था। देख कर बोला, "अब तो अगली गाड़ी आध घंटे में मिलेगी। फिर दादर में जा कर अन्धेरी के लिये बदलनी होगी। चलो चर्चगेट चलें।"

"चर्च गेट। वहाँ क्या है?" जीवन ने पूछा।

"बस जैसी चीज़ तो यहाँ सब जगह है," दिनेश ने बताया, "चर्चगेट से हमें दूसरी लोकल गाड़ियाँ मिलेंगी। वहाँ से अन्धेरी सीधे पहुँच सकेंगे।"

जीवन उलझन में पड़ गया था। आखिर यह कैसी बम्बई है। दिनेश ने हँस कर कहा, "तुम तो चक्कर में पड़ गए यार। मैं न होता तो जाने क्या हालत होती।"

प्लैटफार्म से निकल कर दोनों सड़क पर आए। जीवन को बम्बई की झलक मिली। उसे लगा कि इस सुन्दर शहर में रहने वाल लोग कितने भाग्यशाली हैं। उसने यह भी सोचा कि दिनेश का घर भी किसी ऐसी ही ऊँची बिल्डिंग में होगा। तभी दिनेश ने कहा, "अच्छा चलो आज थोड़ी-सी रईसी कर लें। इतना कह कर उसने सी-सी की-सी ध्वनि की जिसे सुन कर

पास जाती हुई एक विक्टोरिया गाड़ी रुक गयी। जीवन उसके संकेत पर हँस पड़ा। बहुत से लोग मुड़ कर देखने लगे। दिनेश बोला, "यहाँ इस सी-सी का बड़ा उपयोग है यार। एक आदमी ने सी सी की नहीं कि पचास आदमी उससे अपना सम्बन्ध जोड़ कर पीछे घूम कर देखने लगते हैं। मुझे तो बड़ा मजा आता है।"

विक्टोरिया में सवार हो कर वे चर्चगेट की तरफ चले। जीवन ने अचरज से बोरीबन्दर का ट्रामों की लाइनों का जाल देख, बसों के अड्डों को देखा, भरी-भरी सड़कों और रौनकदार दुकानों को देखा। ज्यों-ज्यों गाड़ी चर्चगेट की तरफ जा रही थी और खूबसूरत मकान मिलते जा रहे थे। जीवन मन ही मन सोचने लगा, "क्यों न सारे हिन्दुस्तान को बम्बई बना दिया जाए। कितना अच्छा शहर है। शहरों के नाम पर हमने गन्दी आबादियाँ बसा रखी हैं। उन सब को उजाड़ देना चाहिए।

इतने में चर्चगेट भी आ गया। दोनों उतरे। फिर नये टिकट लिए। गाड़ी तैयार थी। छूटने में अब कोई देर न थी। दोनों आराम से बैठ गए। ठीक समय से गाड़ी चल दी। हर पाँच-सात मिनट बाद गाड़ी चलते-चलते रुक जाती थी। जितने लोग उतरते उनसे ज्यादा चढ़ने का इरादा रखते। जीवन की समझ में न आ रहा था कि आखिर ये गाड़ियाँ हर वक्त इतने आदमियों को ढोती रहती हैं, तो क्या इन आदमियों को इधर-उधर जाने के सिवा और कोई काम नहीं। उसने दिनेश से पूछा, "अन्धेरी अब कितनी दूर है ?"

उसने कहा, "अभी तो कम से कम ६, ७ स्टेशन और हैं।"

जीवन बोला, "बड़ी जल्दी-जल्दी रुकती हैं ये गाड़ियाँ।"

"रुक कर उतनी ही जल्दी चल भी देती हैं," दिनेश ने मुस्करा कर कहा, "लोकल गाड़ियों के स्टेशन कदम-कदम पर होते हैं। फिर यह फास्ट गाड़ी नहीं है। कुछ गाड़ियाँ फास्ट होती हैं जो सिर्फ खास-खास स्टेशनों पर रुकती है। बोरीविली, विरार जाने वाली गाड़ियाँ अक्सर फास्ट होती हैं।"

बम्बई की चहल-पहल देख कर कभी तो जीवन उस ओर आकृष्ट होता और कभी उसकी जटिलताएँ देख कर परेशान। अभी तो उसने बम्बई की

जमीन पर पैर ही रखा था। पर उसे लग रहा था कि यहाँ रहना आसान बात नहीं। आदमी को बहुत होशियार होना चाहिए। यह बम्बई भूलभुलैया है। यहाँ की तो हर बात अजीब है।

लोकल गाड़ियों के स्टेशनों के नाम भी अजीब थे। दादर नाम पर उसे दादुर भी याद आ गया और दादरा भी। ठुमरी दादरा तो बनारस की खास चीज है। इसी तरह उसे माँटुंगा, खार, शान्ताक्रुज़, वीलेपार्ले, बोरीबिली, कैन्डीबिली जैसे नाम भी अजीब लगे। दिनेश ने उसे सारे लोकल स्टेशनों के नाम अन्धेरी पहुँचते-पहुँचते बता दिये थे। गोरेगाँव नाम से साहबी नाम कोई मेल नहीं खाते थे। जीवन मान गया कि बम्बई हर मामले में अजीब है। यहाँ की हर चीज खिचड़ी है। नाम, गाम भाषा, पहनावा, लोग सभी कुछ।

अन्धेरी स्टेशन पर जब जीवन दिनेश के साथ उतरा तो उसे थोड़ी-सी निराशा हुई। जिस मनचली बम्बई का स्वप्न उसने देखा था और जिसकी थोड़ी-सी झलक चर्चगेट आते वक्त पा भी ली थी वह अन्धेरी से दूर जान पड़ती थी। दिनेश ने उसे यह भी तो बताया था कि फिल्म वाले तो दादर और उससे आगे अन्धेरी की तरफ ही अधिक बसे हुए हैं। इधर ही उनके स्टूडियो हैं। इससे जीवन ने और मान लिया था कि तब तो यह हिस्सा और भी खूबसूरत होगा।

स्टेशन पर उतरते ही दिनेश ने बताया, "देखो, एक बात को अच्छी तरह समझ लो। यहाँ सुबर्ब की प्रायः सभी बस्तियाँ स्टेशन के दोनों ओर बसी हैं। ईस्ट और वेस्ट के नाम से ये हिस्से पुकारे जाते हैं। जैसे ईस्ट अन्धेरी वेस्ट अन्धेरी। मेरा मकान ईस्ट में है।"

जीवन परेशान था कि किस-किस चीज को याद रखे। यहाँ तो एक ऐसी डाइरेक्टरी होनी चाहिए जिसमें बम्बई की तमाम बातें हों। स्टेशन से बाहर आते ही उसका सपना टूट गया। अन्धेरी में नाम के अनुरूप ही अन्धेरा था। उसे वहाँ गन्दगी भी जान पड़ी और दिनेश तो उसे बिल्कुल बियाबान इलाके की तरफ ले जा रहा था। कोई साफ सीधी सड़क भी नहीं थी। ऊबड़-खाबड़ मैदान पार करना पड़ रहा था। बीच-बीच में कीचड़ जिससे बच कर निकलना एकदम असंभव था।

जीवन ने पूछा, "किधर ले चल रहे हो दिनेश ?"

उसका स्वर सहमा हुआ था। दिनेश हँस कर बोला, "घबड़ाओ नहीं तुम्हारे साथ धोखा नहीं करूँगा।"

"नहीं, मेरा मतलब था कि···" जीवन स्वयं ही पूरी बात न कह सका।

दिनेश उसी तरह हँसते हुए बोला, "मेरा मतलब भी यही था कि असली बम्बई यही है। तुमने चर्चगेट को देख कर मान लिया कि बम्बई तो और भी अजीबोगरीब है।"

जीवन ने पूछा, "क्या अन्धेरी ऐसी ही है ?"

दिनेश ने कहा, "हाँ ऐसी भी है और नहीं भी है। यहाँ बस्ती भी है उजाड़ भी है। अपने राम तो उधर नारियल के पेड़ों का जो झुरमुट दिखाई देता है वहाँ रहते हैं।"

"वहाँ मकान है," उसने पूछा।

"देख कर जान लोगे," उसने बताया।

यात्रा की थकान, नयी जगह, न समझ में आने वाली सैकड़ों बातें, कीचड़ भरा रास्ता, कन्धे पर लदा सामान। जीवन इस बम्बई से मन ही मन तोबा बोल गया। आगे चल कर रास्ता कुछ बेहतर मिला। वहाँ पेड़ों के नीचे कुछ कंजर डेरा डाले हुए थे। दिनेश ने बताया कि वह जाने कब से इन्हें यहाँ इसी तरह रहते देख रहा है। बरसात में भी ये लोग यहीं जमे रहते हैं। कैसे गुजर करते हैं समझ में नहीं आता। थोड़ी-सी सिरकियाँ हैं इन लोगों के पास। बस उन्हीं में सब औरत-बच्चे बसर कर लेते हैं।

जीवन को याद आया कि खार रेलवे स्टेशन के पास तो उसने चलती गाड़ी से ही एक और भी गन्दी बस्ती देखी थी। जैसे कूड़े के ढेर में ही आदमी उग रहे थे। उसकी समझ में बम्बई की यह विषमता नहीं आयी। इतना वैभव इतनी दरिद्रता।

कँजर पीछे छूट गये। फिर जीवन की नाक में गाय-भैंसों के गोबर-पेशाव की गन्ध आयी। दिखाई कुछ नहीं दिया। दिनेश ने बताया, उधर जो नारियल के पेड़ हैं उनके पीछे एक तबेला है।"

"तबेला क्या ?" जीवन इस शब्द से परिचीत न था।

"तुम अपनी तसल्ली के लिये उसे गोशाला समझ लो। इतना कह कर वह हँस पड़ा और बोला, "वहाँ भैया लोग रहते हैं। गाय-भैंस पालते हैं। और दूध का धन्धा करते हैं। ये लोग न हों तो बम्बई में शायद सिर्फ डब्बे का दूध ही रह जाए।"

जीवन ने पूछा, "ये भैया कौन हैं ?"

दिनेश कटुता के साथ बोला, "तुम हम और हमारे जैसे लोग।"

जीवन फिर भी नहीं समझा। बोला, "भैया तो अच्छा शब्द है। मैं तो इसमें प्यार और मिठास पाता हूँ।"

"पर यहाँ इसमें लुच्चापन, गुंडापन, कमीनापन समझा जाता है," दिनेश ने कहा, "उत्तर प्रदेश से आकर बसे लोगों को यहाँ भैया कहा जाता है। शुरू-शुरू में पूरब के गाँवों के गरीब लोग आए। ठाकुर, ब्राह्मण सभी। उनमें से कुछ ने तो सेठों की पेढ़ियों में चपरासगिरी कर ली और कुछ ने दूध का धन्धा शुरू कर दिया। ये लोग स्वभाव के अक्खड़ और निर्भीक होते ही हैं। सेठ अपने उस पुरबिये नौकर से पहरेदारी, अर्दली, किराया वसूल करने जैसे काम लेता। कुछ लोगों से रूपया वसूल करने के लिये जोर जबरदस्ती भी करनी पड़ती है। ये लोग करते हैं। पेट की खातिर इस तरह बदनाम होते गए। शुरू में भैया किसी ने इनके लट्ठ से डर कर कहा होगा, पर अब तो भैया का अर्थ चपरासी, मजूरा, ग्वाला सभी कुछ है।"

जीवन को भी यह बुरा लगा। दिनेश कहता गया, "जो लोग हमारी तरफ से आए, वे सब गरीब थे। साथ ही अशिक्षित भी। छोटे-मोटे काम ही उनके पल्ले पड़े। आज उनकी तादाद काफी है। पर हालत खराब ही। कुछ अजीब बातें भी हैं इनमें। एक ओर तो ईमानदार इतने है कि मारवाड़ी सेठ की लाखों की नकदी को बैंक से निकालते और जमा करते हैं पर फर्क पाई का नहीं पड़ता। दूसरी ओर ऐसे कि दूध में पानी इतना मिलाते हैं कि पानी ही दूध के भाव बिकता है।"

इतने में नारियल का वह झुरमुट भी आ गया था जहाँ दिनेश का भवन था। जीवन ने उस अधकच्चे एकखने मकान को देखा। नीची-नीची छतें वह भी सिमेंट की चादरों से छाई हुई। छोटी-छोटी कोठरियाँ। चारों ओर

काफी कीचड़ बदबू, पास ही गन्दा पाखाना। गोबर मूत्र की दुर्गन्ध। घुटता हुआ धुँआ। जीवन सोच ही नहीं पा रहा था कि वह इस जगह कैसे रह सकेगा। दिनेश ने एक कोठरी के दरवाजे पर सामान रखा। फिर पीछे जाकर ताली लाया। ताला खोला, बोला, "भीतर आओ जीवन भैया। यह मेरा घर है। यहाँ तुम मेरे मेहमान हो।"

जीवन ने सरल भाव से पूछा, "यहाँ और कितनी जगह है तुम्हारे पास ?"

"यह मत पूछो," वह बोला, "बम्बई में जगह सिर्फ बैंकों की तिजोरियों में है जहाँ कितना भी रुपया रखा जा सकता है। इन्सान के लिये जगह यहाँ बहुत कम है। मेरे पास सिर्फ यही कोठरी है साथ में एक दोस्त भी रहता है·· राजन। अभी गया हुआ है। हमारी कोठरी के ताले की चाबी एक ही है। जब कहीं जाते हैं तो मकान मालिक को दे जाते हैं या चौखट की किसी दरार में छिपा जाते हैं।"

"मकान मालिक कौन है ?" जीवन ने पूछा।

उसने कहा, "वह भी एक भैया है। दूध बेचता है। दस-पाँच भैंसें पिछले हिस्से में पाल रखी हैं। इसी के भाई का वह बड़ा तबेला है।"

जीवन ने पूछा, "तुम्हें और कोई जगह नहीं मिली।"

वह बोला, "यही मिल गई क्या कम है। इस कोठरी के लिये भी मुझे १०० रुपये पगड़ी देनी पड़ी।"

"पगड़ी क्या ?" जीवन नहीं जानता था।

दिनेश ने कहा, "मारवाड़ी की पगड़ी, पारसी की पगड़ी। काठियाबाड़ी की पगड़ी, ये तो तुमने सुनी हैं। एक होती है मकान मालिक की पगड़ी।" बम्बई का यह रिवाज है। मकान मालिक जगह तब देगा जब पहले पगड़ी ले ले। जितने अधिक किराये का मकान होगा उतनी ही अधिक पगड़ी होगी।"

जीवन ने पूछा, "मकानों की क्या इतनी कमी है यहाँ ?"

दिनेश ने कहा, "जितने यहाँ मकान हैं उससे कहीं ज्यादा आदमी। इसके अलावा बहुत से मकानों में तो सिर्फ फाइलें रहती हैं। तुम नहीं समझे। मेरा मतलब दफ्तरों से है। खास बम्बई तो दफ्तरों का शहर है। फोर्ट में

दुनिया भर के दफ्तर हैं। कालबादेवी में मारवाड़ी सेठों की पैड़ियाँ हैं। उन दफ्तरों और पैड़ियों में काम करने के लिये इधर से हजारों लोग रोज जाते हैं, आते हैं। कभा-कभी मैं सोचता हूँ कि ये रेलें, बसें, ट्रामें न होतीं तो ये बम्बई इतना खराब शहर न होता। थोड़े लोग होते और थोड़ी जगह में आराम से रहते। पर अब तो······"

दिनेश के मन की कटुता मुखर हो गयी थी। जीवन दीवाल से लगा खड़ा था। उसे कनखल का अपना घर याद आ रहा था। बड़े-बड़े कमरे। साफ सुथरा, लम्बा-चौड़ा आँगन। सोच में था कि यहाँ वह कैसे रहेगा, यहाँ इतने लोग कैसे रह लेते हैं। वह दिनेश से पूछ बैठा, "तुम यहाँ कैसे रह लेते हो ?"

दिनेश बोला, "तुम भी रहने लगोगे। बम्बई की खाक छान लेने के बाद आराम से रहने लगोगे। अभी तुमने असली बम्बई नहीं देखी। असली बम्बई सड़कों पर बसी है, जहाँ बेघरबार लोग रहते हैं। तुम्हें पता होना चाहिए कि बम्बई वह है जहाँ दस लाख सड़क पर सोते हैं।"

कुबेरों का देश

अन्धेरी की उस कोठरी में जीवन की मनोरम कल्पना रो पड़ी। किसी तरह उसने स्वयं को ढाढस बँधाया, "इससे क्या ? वह तो कमाने आया है। उसे रोजी मिल सके तो यह कोठरी भी महल हो जाएगी।"

इसके बाद वह दिनेश के निर्देशों का पालन करता रहा। नल वहाँ था नहीं। कुएँ से पानी खींचा। नहाया। तबीयत कुछ हल्की हुई। कोठरी में घुसने को मन नहीं कर रहा था। वह बाहर ही घूमता रहा। उसे घर याद आ रहा था। अभावों में भी वह वहाँ सुखी था। चारों ओर की ऊबड़-खाबड़ जमीन को देखता, नारियल के पेड़ों को देखता। नाक में उसके गोबर और मूत्र की दुर्गन्ध जबरदस्ती घुसने का प्रयत्न करती। मच्छर

संघबद्ध हो कर उस पर हमला करते। आसमान रात के स्वागत की तैयारी करने लगा। उसने धरती पर का सारा प्रकाश समेट लिया। फिर कज्जल की वर्षा करने लगी। तभी कोठरी के भीतर से दिनेश ने पुकारा, "जीवन ?"

जीवन कोठरी की ओर चल दिया। छोटे से दरवाजे वाली नीची छत की छोटी-सी कोठरी में अस्तव्यस्त सामान के बीच बैठा हुआ दिनेश मोमबत्ती के मद्धिम प्रकाश में बाल संवार रहा था। मोमबत्ती को देख कर जीवन को बड़ा अचजर हुआ। पूछा, "यहाँ बिजली नहीं है ?"

दिनेश मुस्कुरा भर दिया।

जीवन कल्पना ही नहीं कर सकता था कि बम्बई में भी ऐसी कोई जगह हो सकती है जहाँ बिजली न हो। बाल सँवार कर दिनेश बोला, "अब तो भूख लग आई होगी। चाय बनाऊँ।"

इससे पहले कि जीवन कुछ कहे वह खुद ही बोला, "पर कैसे बन सकती है। स्टोव में तेल तो शायद ही हो। राजन तो इन सब चीजों की फिक्र नहीं करता।"

जीवन ने कह दिया, "चाय मुझे अच्छी भी नहीं लगती।"

"चाय अच्छी नहीं लगती," दिनेश ने अचरज से पूछा, "तब तो प्यारे बम्बई तुम्हें कभी पसन्द नहीं आएगी। यहाँ गुजराती चाय के अलावा रक्खा ही क्या है ?"

इतने में मोमबत्ती समाप्त हो गयी। कभी की बचीबचाई जरा-सी तो थी ही। दिनेश का शृंगार भी पूरा नहीं हो पाया कि धोखा दे गयी। उसके मुंह से निकला, "धत्तेरे की। ऐन वक्त पर धोखा दिया।"

जीवन ने कहा, "बताओ मोमबत्ती कहाँ रखी है। मैं जलाऊँ।"

"अब मोमबत्ती भी कहाँ होगी यार," वह बोला।

जीवन ने कहा, "तुम्हारे पास और कोई इन्तजाम भी नहीं।"

"जरूरत ही क्या ? मोमबत्ती काफी है।" वह बोला।

"रात को पढ़ना लिखना या···" जीवन कहते-कहते रुक गया।

दिनेश की हँसी उस अन्धकार में उसके कानों में भर उठी। वह कह रहा था, "तुम अभी स्कूल कालेज की आदतें नहीं छोड़ पाए। यहाँ पढ़ने का

सवाल उठता ही नहीं। दिन भर तो हम एक स्टूडियो से दूसरे स्टूडियो में जूतियाँ चटकाते फिरते हैं और जब लौटते हैं तो कहीं आधी रात को। अक्सर दूसरों के यहाँ की रोशनी में ही हमारी पहली रातें कट जाती हैं। यहाँ आ कर तो सिर्फ सोना बाकी रहता है। जब आए पड़ कर सो गए। दो-चार मिनट के लिये रोशनी की जरूरत हुई तो मोमबत्ती काफी। अच्छा चलो अब चलें।"

दिनेश ने किवाड़ बन्द कर के कोठरी में ताला डाल दिया। चौखट के नीचे एक जगह खोखर-सी बनी थी। ताली उसी में रख दी। बोला, "चलो।"

दिनेश आगे-आगे चलने लगा और जीवन उसके पीछे-पीछे। चलते-चलते उसने कहा, "जहाँ-जहाँ मैं पैर रखूं वहीं-वहीं पैर रखना। नहीं तो इस अन्धेरे में या तो ठोकर खा जाओगे और या कीचड़ में धँस जाओगे।"

जीवन ने सरल भाव से पूछा, "यहाँ इतना कीचड़ क्यों है?"

दिनेश मन ही मन मुस्कुराया। फिर कह दिया, "कीचड़ होने पर भी यहाँ कमल नहीं, मुझे इसी बात का अफसोफ है। कम्बख्त बारिश भी इतनी बरसती है कि कुछ ठीक नहीं। अभी तो बरसात दूर है।"

चलते-चलते वे उस जगह पहुँच गए थे जहाँ से तबेले के गोबर मूत्र की प्रखर गन्ध आती थी। लोकल गाड़ी की आवाज भी सुनाई दी। वह सपेरी पटरी पर दनदनाती हुई दौड़ रही थी। जीवन ने उधर निगाह डाली नहीं कि इधर पैर चूका और कीचड़ में जा पड़ा। छप से आवाज हुई। कुछ छींटे उड़ कर दिनेश के ऊपर भी जा पड़े। उसे समझते देर न लगी। बोला, "आखिर चूक गए। घबड़ाओ मत आगे कहीं पानी मिलेगा तो धो लेना। मैं बम्बई का जब गवर्नर हो जाऊँगा तो इस सड़क को कन्करीट की बनवाऊँगा और गैस की बत्तियाँ भी लगवा दूंगा।"

उसने यह बात कुछ ऐसे ढंग से कहीं कि जीवन हँस पड़ा। दिनेश भी हँस पड़ा। हँसते-हँसते बोला, "मुझे खुशी हुई कि तुम हँस पड़े। तुम हँसना जानते हो यह बहुत बड़ी बात है। हमारे जैसे लोगों को हँसना आना बहुत जरूरी है। जब कोई मुसीबत आए या अप्रिय बात हो तो हमें हँस पड़ना

चाहिए। हमारे बस में अगर और कुछ नहीं तो इतना जरूर है कि हम परेशानी में भी हँस लें। अगर तुम परेशानी में भी हँसना सीख गए तो इस दुनिया के बादशाह हो जाओगे।"

दिनेश के इस कथन में कहीं सचाई भी थी और कुछ व्यंग्य भी था। कंजरों का भी डेरा आ गया और उससे कुछ ही आगे अन्धेरी के बाजार की बत्तियाँ दिखाई दे रहीं थीं।

बाजार में आकर दिनेश बोला, "अच्छा, यह बताओ कि कैसा खाना खाओगे ?"

जीवन ने कहा, "मैं तो वेजीटेरियन हूँ, वही खाऊँगा।"

दिनेश हँस कर बोला, "जनाब मेरा मतलब वह नहीं। अपने राम भी जानवरों को मार कर खाने में यक़ीन नहीं करते। मेरा मतलब यह था कि ईरानी रेस्टोरां में चलें कि मारवाड़ी बासे में। यहाँ गुजराती, मराठी सभी तरह के धावे हैं। इडली दोसा भी मिलेगा। जीभ को चटपटेपन का शौक हो तो सिंधी के यहाँ चलें। ऐसी खस्ता चीजें बनाता है कि कुछ कहने नहीं।"

जीवन खाने के बारे में कभी विशेष रुचि नहीं रखता था। बोला, "कहीं भी चले चलो।"

दिनेश ने कहा, "तुम भी तो कहीं राय दे दिया करो भले आदमी। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि ईरानी रेस्टोरां बम्बई की एक खास चीज है। खास चीच इस मामले में कि सब से ज्यादा तादाद शायद इन्हीं की है। चाय टोस्ट से पेट भरना हो तो वहीं चलें। मिर्चों का शौक हो तो मारवाड़ी बासे का मुकाबिला कोई नहीं कर सकता। तेल का खाना-खाना हो तो गुजराती बासे में चलो। चने की दाल का चाव हो तो यशवन्त सिंह मराठे का होटल यहीं है। इमली की खटाई और उड़द की दाल की चटनी प्रिय हो तो फिर मद्रासी की ही मेहमानी करें। देखो मैंने तुम्हें सभी की खासियतें बता दीं।"

जीवन ने इस पर भी कोई राय जाहिर नहीं की तो वह बोला, "अच्छा चलो तो सिंधी के यहाँ चलें। आज तुम मेहमान हो। कल से तुम हमारे साथी हो जाओगे। इसलिये आज तो तुम्हारी लजीज खाने से खातिर करनी ही चाहिये।"

इसके बाद दोनों सिंधी के यहाँ पहुँचे। वहाँ अच्छी खासी भीड़ थी। दिनेश ने हँस कर कहा, "दोस्त क्यू लगाओ।"

जीवन क्यू का व्यंग्य न समझा तो दिनेश ने बताया, "प्यारे बम्बई में हर बात में क्यू लगा करता है। रेल का टिकट लो तो क्यू, सिनेमा का टिकट लो तो क्यू, राशन लेना हो तो क्यू। राजन कहा करता है कि यहाँ तो मरने के लिये भी क्यू लगाना पड़ता है। इसी से उसका विश्वास है कि अभी वह मर नहीं सकता, क्योंकि वह क्यू में बहुत पीछे है।"

जीवन भी अब तक चुप था. हँस पड़ा। बोला, "राजन के प्रति मेरे मन में बहुत-सा कुतूहल जमा हो गया है।"

"यह तुम्हारी गल्ती है," दिनेश ने कहा, "उसे देखते ही कुतूहल मिट जाएगा। राजन कुछ ऐसा है कि उसे देख कर प्यार भी किया जा सकता है, नफरत भी की जा सकती है। वह कहीं देवता है और कहीं शैतान। मैंने तुम्हें पहले से ही इसलिये बता दिया जिससे उसे समझने में धोखा न खाओ।"

तभी सिंधी के बेंच पर एक जगह खाली हुई। दिनेश ने फुर्ती दिखाई और दन से जा बैठा। दूसरा आदमी ताकता रह गया। जीवन भले आदमी की तरह जहाँ का तहाँ खड़ा था। दिनेश ने उसे इशारे से पास बुलाया और उठते हुए बोला, "यहाँ तुम बैठो। जगह पानी हो तो चूकना न चाहिए। मुरौव्वत और शराफत दूर रखनी चाहिए। तुम्हें बम्बई में रहने के लिये बम्बइया बनना होगा। मतलब यह कि जिसे तुम कान्शेन्स कहते हो उसे मार देना होगा। रेल में जब चढ़ो तो परवाह मत करो कि तुम्हारे चढ़ने से दूसरा गिर कर मर सकता है। नहीं तो तुम कभी नहीं चढ़ पाओगे। यह उसूल यहाँ सब जगह लागू करना होगा, तभी जम पाओगे।"

जीवन चुपचाप उस जगह बैठ गया। दो-चार मिनट में ही दिनेश ने वहीं अपने लिये भी जगह बना ली। जीवन सोच रहा था कि क्यू के रहते हुए भी यहाँ अवसर को पकड़ने की बात पहली है। उसे लगा कि वह क्यू में खड़ा हो कर तो सब्र से बरसों इन्तजार कर सकता है, पर अवसर को झपट कर पकड़ नहीं सकता। तभी एक मैला-सा लड़का कुछ पूछने को आया। गन्दी सूरत। उससे भी गन्दे कपड़े। बार-बार उसका हाथ नाक पर

जाता, बालों पर जाता। वही सब को खाना परस रहा था। दिनेश ने आर्डर दिया। थोड़ी देर में चाट का पत्ता, फूली-फूली पूरियाँ, छोले सामने आ गए। दिनेश ने मीठी चटनी और अचार खास करके मंगवाया। बैठने की जगह भी गन्दी थी और आस-पास बैठे हुए लोग भी गन्दे। जीवन की खाने में प्रवृत्ति ही नहीं हो रही थी। दिनेश ने एक कौर मुँह में रख भी लिया था। चबाते हुए बोला, "अब शुरू भी करो यार।"

रात का कोई ९ बज चुका था। खाना खा कर वे दोनों अपने ठिकाने की ओर चले। दिनेश ने बैटरी का सेल और दो सिगरेट भी खरीदीं। जीवन ने पूछा, तुम सिगरेट भी पीते हो।"

दिनेश ने कहा, "पी लेता हूँ। तुमने देखा होगा कि मैंने रेल में कतई नहीं पी। बढ़िया खाना खाने के बाद मेरी इच्छा या तो चाय की होती है या सिगरेट की। बस एक ही पीऊँगा दूसरी रख छोड़ूँगा। रात को राजन आएगा। उसके हाथ लग गयी तो वह मुझे धन्यवाद देता हुआ मजे ले ले कर पिएगा।"

अब वे उसी गन्दे अन्धेरे रास्ते से लौट रहे थे। दिनेश जरा मस्ती में था। फिल्म का कोई गीत बीच-बीच में गुनगुना उठा। फिर आप ही कह उठा, "यह फिल्मी दुनिया भी निराली है। पर्दे पर यह जितनी खूबसूरत है असलियत में उतनी ही घिनौनी। पर इसका मजा भी निराला है। जिसे चस्का लग गया वह दिनेश और राजन की तरह इसे छोड़ कर कहीं नहीं जा सकता।"

जीवन फिल्म में ही प्रवेश की योजना बना रहा था। दिनेश की इस बात से उसे कुछ निराशा हुई। दिनेश कह रहा था, "घर जब जाता हूँ तो मेरे परिचित लोग मुझ से ईर्ष्या करते हैं। फिल्म के बारे में अजीब-अजीब सवाल पूछते हैं। फलाँ एक्ट्रेस कैसी है। क्या उम्र है, शादी हुई कि नहीं। हिन्दू है या मुसलमान। उसका पति हिन्दू है या मुसलमान। बच्चे हैं कि नहीं। तीसरा पति है या चौथा। तुम्हें कौन पसन्द है। रुपया तो तुम खूब कमाते होगे। बड़े ठाट से रहते होगे। कोठी होगी। और मैं उनके हर सवाल का जवाब हां में दे कर खुश हो लेता हूँ।"

जीवन को भी चित्र-लोक स्वप्न-लोकसा लगता था। उसने भी उसे परियों, शहद और शराब की नदियों, सोने चांदी के पहाड़ों, मस्ती और परस्ती की दुनिया मान रखा था। दिनेश कुछ और ही चित्र पेश कर रहा था। उसने मन ही मन सोचा, "पर यह जब इतने पर भी नहीं छोड़ पाता तो कोई जादू अवश्य है। इस जादू को जरूर देखूंगा।"

यथा समय वे अपनी कोठरी में जा पहुँचे। कोठरी में एक छोटी-सी खिड़की थी। पर उससे उमस में कोई कमी न थी। दरवाजा खोलते ही भभका उठा। दिनेश ने बैटरी ढूंढ निकाली और सेल डाल कर जलाई। रोशनी कर के बोला, "यार मोमबत्ती तो लानी भूल गए। खैर, बैटरी काफी है। अब तुम अपना बिस्तर जमा लो। वह कोना तो राजन का है। मैं उसी के पास सो जाऊँगा। तुम इधर दरवाजे के सामने कर लो। यहाँ हवा लगती रहेगी।"

जीवन ने कहा, "बाहर सोया जाए तो कैसा ?"

"बाहर ?" दिनेश ने कहा, "भले आदमी घर की आदतें भुला दो। यहीं सोओ। बिना खाट के बाहर कैसे सोओगे। कच्ची जमीन है। गीली है। कीड़े-मकोड़ों का डर। रात को कब राजा इन्द्र का मटका फूट जाए कौन जाने। मच्छर भी खूब होंगे। यही जगह ठीक है।"

इतना कह कर वह एक दरी बिछा कर मैले कपड़ों का तकिया बना कर बिना कपड़े बदले लेट गया। जीवन कुछ देर असमंजस में रहा। ऐसे भी सोया जा सकता है उसकी समझ में नहीं आ रहा था। पर और कोई चारा न होने की वजह से उसने दिनेश के कहे मुताबिक किया। बक्स एक तरफ कर के बिस्तर बिछा दिया। बिस्तर खोलते-खोलते भाभी याद आई। उन्होंने ही तो बिस्तर भेजा था। कहीं वह ऐसे ही चल देता तो इस बम्बई में कैसी बीतती। भाभी की स्मृति ने उसे घर के लिये विकल कर दिया।

उसे गुमसुम देख कर दिनेश ने कहा, "तुम किस सोच में पड़ गए हो। अब बस करो। सो जाओ। टार्च अपने ही पास रख लो। रात बिरात में तुम्हें जरूरत पड़ सकती है। अपने राम को तो एक बार नींद आई कि रात गई।

जीवन ने वैसा ही किया। नींद उसे भी आ रही थी। रेल की थकान भी कम न थी पर वह सो न सका। सोने की जितनी कोशिश करता नींद उतनी ही दूर भागने लगती। मच्छर भी तंग करने लगे थे। वह करवटें लेता रहा। कभी उसे भाभी याद आतीं, तो कभी सरिता। सरिता का उसे कुछ पता न था। कोई पत्र व्यवहार भी नहीं हुआ था। सरिता उसके लिये नक्षत्र लोक की ज्योति थी जिसे वह अधिक से अधिक मन में कल्पित कर सकता था। उसने सरिता को भुला कर कहीं और मन ले जाना चाहा। पर मन सब जगह से लौट-लौट कर वहीं आ जाता। उसकी बेचैनी बढ़ चली। कई बार वह उठ कर कोठरी के बाहर आया। फिर भीतर गया। सोने का उद्यम किया। असफल रहा। सरिता ने जैसे उसकी नींद भी चुरा ली थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि बम्बई में भी वह इतनी याद क्यों आ रही है। दूरी से वह दूर क्यों नहीं पड़ जाती।

इसी तरह चिन्ता करते-करते घंटों बाद उसे झपकी आई। सोते-सोते भी वह बुरे-बुरे सपनों से ग्रस्त रहा। भयानक आकृतियाँ उसे घेर लेतीं। उसे लगा जैसे कोई दैत्य उसके शरीर में सुईयाँ चुभो रहा हो। वह विकल हो उठा। दैत्य का दंशन न सहा गया। घबड़ा कर जाग बैठा। बदन में अभी भी आग-सी लग रही थी। जैसे पिस्सुओं ने खा डाला हो। थोड़ी देर बैठे रहने के बाद उसने फिर सोने की कोशिश की। इस बार बिस्तर पर सुरसुराहट मालूम पड़ी। फिर कहीं आग-सी लगी। तब उसने टार्च जलाई। जलाते ही वह सन्न रह गया। जाने कहाँ से आ कर खटमलों की सेनाओं ने उस पर हमला कर दिया था। सारे बिस्तर भर खटमल छाए हुए थे। उसने दिनेश के बिस्तर पर रोशनी डाली। वह मजे की नींद ले रहा था। खटमल भी मजे से उसका खून पी रहे थे। राजन का बिस्तर खाली ही पड़ा था। जमीन पर भी खटमल पीछा नहीं छोड़ते यह उसका पहला ही अनुभव था। कई बार होस्टल के तखत में खटमल हो जाने से वह आराम से जमीन पर सोया था। पर अब क्या करे। उसने इधर-उधर टार्च की रोशनी डाली। देखा दीवालों पर भी खटमलों की कतारें धीमें-धीमें चल रही थीं। उसकी समझ में नहीं आया कि इतने सारे खटमल कहाँ से

आ गए। अब वह भीतर सो न सकता था। उसने अपना बिस्तर उठाया। खूब झाड़ा और बाहर की गीली जमीन पर बिछा कर लेट गया।

जीवन को बाहर जल्दी ही नींद आ गयी। मच्छर वहाँ भी थे। फिर भी वह किसी तरह सो गया। बुरे-बुरे सपने देखता रहा। काफी देर से सोने पर भी जल्दी ही उसकी आँखें खुल गयीं। दिनेश सोया पड़ा था। राजन भी जाने कब आ गया था और गहरी नींद ले रहा था। खटमल अब अधिक अन्धकार वाले कोनों में भागने लगे थे। मच्छर भी रात्रि जागरण से थक कर अब विश्राम कर रहे थे। दिनेश का व्यक्तित्व रुचिकर था। शयनावस्था में वह और भी सौम्य लग रहा था। राजन दिनेश से भी कद्दावर और स्वस्थ जान पड़ता था। पर उसकी आकृति की रेखाओं में खलत्व जान पड़ता था। सोते हुए भी उसके भीतर की वक्र वृत्तियाँ और अभाव मुख पर उभर रहे थे। लम्बे रूखे बाल अस्तव्यस्त हो चले थे। कपड़े मलिन थे। मुख पर रंग लगा था जो छुटाने के प्रयत्नों के बावजूद भी पूरी तरह पुछ न पाया था।

जीवन निष्प्रयोजन-सा कोठरी के भीतर खड़ा इधर-उधर देखता रहा। फिर बाहर आया। भैया गाय भैंसों को दुह कर दूध बेचने जा चुका था। वह रात रहते ही गाय भैंसों को चारा देकर दुह लिया करता था। दूर-दूर तक फैले हुए नारियल के पेड़ सुबह के सुहावने आसमान के नीचे बड़े भले लग रहे थे। हवा में नमी थी। जीवन का सारा बदन गर्मी न होने पर भी चिपचिपा रहा था। बदन में वह दर्द भी अनुभव कर रहा था। उसका हर जोड दुख रहा था। बाहर सोना अनुकूल न पड़ा था। उसने जमुहाई ली। शरीर तोड़ा और फिर निरुद्देश्य आस-पास टहलने लगा। कर्म और उद्योग की नगरी बम्बई में उसे इस समय कुछ भी करने को न दीख रहा था। वह कोठरी में वापिस लौटा। वहाँ से एक लोटा लिया। भैया के डोल रस्सी से पानी खींचा और डिब्बा भर कर पाखाने चला गया। पाखाना कोठरी से कोई बीस गज की दूरी पर हट कर बना हुआ था। उसके पास पहुँचते ही अजीब बदबू आ रही थी। वैसी ही बदबू जो शहरों में अक्सर मैलागाड़ी के पास से गुजरने पर आती है। कई दिनों का मैला वहाँ

सड़ रहा था। फिर भी जीवन हिम्मत करके भीतर गया। पर भीतर जो दृश्य देखा उससे उसकी तबीयत घबड़ा उठी। लम्बे-लम्बे सफेद कीड़े हजारों की तादाद में सब जगह कुलबुला रहे थे। पाँव रखने तक की जगह न थी। पेट का दर्द भी बढ़ रहा था। जीवन से न बैठते बन रहा था न हटते। आखिर उसने थोड़ा-सा पानी गिरा कर किसी तरह पैर रखने की जगह से कीड़े हटाए और बैठ गया। पर कीड़े उसके बैठते ही फिर उसके पाँवों पर चढ़ने का उद्यम करने लगे। जीवन उन घिनौने कीड़ों के सम्पर्क से कुलबुला उठा। वह जल्दी से बाहर आया। खुली हवा में आकर उसने साँस ली। उन कीड़ों के ध्यान मात्र से उसका शरीर अजीब सिहरन से भर उठता। कुएँ पर आकर उसने हाथ माँजे। लोटा साफ किया। घुटनों तक पांवों को खूब रगड़-रगड़ कर धोया। पर मन से ग्लानि दूर नहीं हुई। उसे अपने तन पर के कपड़े भी दूषित जान पड़ते थे। दाँत साफ करने को भी उसके पास कुछ न था। कोठरी में भी कहीं कुछ नहीं था। उसने अंगुली से रगड़-रगड़ कर दाँत साफ किए। फिर स्नान किया। नहा कर उसके मन को थोड़ी-सी निवृत्ति मिली।

अब फिर उसके पास करने को कुछ न रह गया था। सूर्यदेव की किरणें कण-कण को चूमने लगी थीं। वह कोठरी के भीतर चला आया। राजन की नींद में अभी कोई अन्तर न दिखायी दे रहा था। दिनेश करवटें ले रहा था जैसे फिर सोने के उद्योग में हो। पर वह सोया नहीं। जमुहाई लेता हुआ उठ बैठा। उसकी दृष्टि सबसे पहले जीवन पर पड़ी। अचरज के साथ बोला, "अरे, पंडित जी आप तो लगता है पूजापाठ करके कहीं जाने को तैयार हैं।"

उसने बात कुछ ऐसे ढंग से कही थी कि उसे हँसी आ गई। जीवन ने कहा, "तुम लोग बड़ी देर तक सोते हो।"

"क्या बताऊँ," दिनेश बोला। रात भर तो ये खटमल मच्छर खून पीते रहते हैं। ढंग की नींद आती ही नहीं। बस सुबह जितना कोई सो ले।

जीवन फिर बोला, "ये राजन हैं शायद। ये हजरत ऐसा कब तक सोयेंगे।"

दिनेश ने कहा, "हाँ राजन ही है। इसके सोने के बारे में कुछ मत पूछो। अगर इसे जगाया न जाय तो यह दोपहर से पहले कभी नहीं उठेगा। अगर कोई इसे सोते से जगा दे तो उसकी जान को ही आ जाता है।"

जीवन ने अचरज के साथ कहा, "पर इतना यह सो कैसे लेता है?"

दिनेश बोला, "यह उसी से पूछना। कहता है कि सोना भी एक कला है। यह कला हर किसी को नहीं आती।"

जीवन ने हँसते हुए कहा, "तब तो ये कुम्भकर्णवादी ही हैं।"

जीवन कुछ देर बाद फिर बोला, "मैंने तो सुना था कि बम्बई में सब जगह फ्लश है। पर यहाँ तो···"

"तुमने सुना तो यह भी होगा कि बम्बई में सड़कें भी सोने चाँदी की हैं।" दिनेश ने बात काट कर कहा, "प्यारे बम्बई क्या है, यह कम ही लोग जानते हैं। कुछ लोग फ़ोर्ट, गेट वे आफ इंडिया: मेरीनलाइन्स, चौपाटी और जुहू को ही देखकर समझते हैं कि यह बम्बई है। पर बम्बई इससे बहुत बड़ी है। उसमें फारस रोड जैसी बदनाम सड़कें, मजदूरों, भिखमंगों, और कंजरों की बस्तियाँ, तमाम गरीब और हमारे जैसे लोग भी आते हैं।

इसके बाद दिनेश भी निवटने चला गया। उस पाखाने से जैसे उसे कोई शिकायत नहीं थी। आराम से गया। काफी देर लगा कर लौटा। भैया के यहाँ से उपले की राख ले आया। उससे दाँत माँज लिए। बोला, "चलो अब तुम्हें चाय पिला लाएँ।"

जीवन ने कहा, "चाय की मेरी इच्छा नहीं। तुम पी आओ।"

दिनेश बोला, "अपने राम भी गुलाम किसी आदत के नहीं हैं।"

फिर सहसा पूछा, "अरे हाँ रात नींद तो ठीक आई?"

जीवन ने कहा, भीतर खटमल परेशान कर रहे थे, इसलिए बाहर लेट गया था। वहीं कुछ झपकी आ गयी थी।"

दिनेश स्नेह पूर्वक बोला, "ऐसा अब मत करना। बाहर सोओगे तो बीमार पड़ जाओगे। खटमल थोड़ा बहुत खून पी लें सो बुरा नहीं। फिर अब तो तुम्हें सब तरह की आदतें डालनी होंगी। यह बम्बई है न। यहाँ

खून पीने वाले खटमल बहुत हैं। इसलिये इतनी साधना तो करनी ही होगी। अच्छा, अब तुम अपना इरादा बताओ।"

जीवन ने जमीन में आँखें गड़ा कर कहा, "मैं रोजी की तलाश में आया हूँ, यह तुम जानते ही हो।"

"तो क्या करना चाहते हो," उसने पूछा।

"कुछ भी" जीवन ने कहा, "वैसे मैं साहित्यकार भी हूँ। सोचता हूँ कि फिल्म में प्रवेश पा सकूं तो कैसा ?"

दिनेश की आँखों में निराशा चमकी। पर वह जीवन को शुरू से ही निराश नहीं करना चाहता था। बोला, "ठीक तो है। कोशिश करनी चाहिए।"

जीवन उसका भाव ताड़ गया, "तुम्हें मेरी बात जंची नहीं। सच-सच कहो। मैं यहाँ के बारे में कुछ नहीं जानता। तुम यहाँ की हर चीज से परिचित हो। तुम्हारी सलाह मेरे फायदे की होगी।"

दिनेश ने कुछ हिचकिचा कर कहा, "तुम कहते हो कि तुम साहित्यकार हो। तब तो मैं समझता हूँ कि तुम बेकाम हो।" वह कहता गया, "तुम नहीं समझोगे अभी मेरी बात। मुझे पहले तो यह बताओ कि प्रेम की कहानी है तुम्हारे पास ? उसमें एक खल नायक भी है ? ९ गानें और पाँच डाँस फिट किये जा सकते हैं उसमें ? उसमें चमत्कार लाने वाली बीस घटनाएँ हैं ? बोलो, अगर हाँ तो मेरे साथ चलो तुम्हारी कहानी तुरन्त बिक जाएगी।"

तभी राजन ने करवट ली। आंख बन्द किए बोला, "यह किस से मगज मार रहे हो दिनेश। सो क्यों नहीं जाते। तुम्हारी जल्दी उठने की आदत बेहद खराब है।"

इतना कह कर राजन फिर खुर्राटें भरने लगा। जीवन ने पूछा, "राजन फिर सो गया क्या ?"

"हाँ," दिनेश ने कहा, "कहा न कि सोने की कला का यह आचार्य है।"

जीवन फिर कहानी के विषय पर आ गया, "तब तो यही अच्छा है कि मैं किसी और काम की तलाश करूँ।"

दिनेश बोला, "शायद अच्छा वही हो। पर एक बार तुम्हें इस ओर भी कोशिश कर देखनी चाहिए। प्रेमचन्द जैसे उपन्यासकार यहाँ आकर असफलता के श्रेय के साथ लौट चुके हैं। फिर भी मैं कहूँगा कि तुम भी एक बार कोशिश तो करो।"

जीवन दुविधा में पड़ गया। दिनेश निराशा की बातें भी करता है और कोशिश करने को भी कहता है। वह चुप ही रहा। दिनेश बोला, "अच्छा, अभी आराम करो। मैं भैया के यहाँ जाकर चाय का इन्तजाम कर लूं। तुम्हारे लिये दूध लेआऊँगा। राजन को थोड़ी देर और सोने दो; उसके बाद इससे सलाह ली जाएगी।"

जीवन ने दूध पिया और दिनेश के बिस्तर पर ही लेट गया। जल्दी ही उसे झपकी आगयी। रात की अधूरी नींद और मन की निराशा की वजह वह बीमारों जैसा सो गया। इसी तरह दोपहर होगई। राजन जाग गया। जीवन सोया ही पड़ा था। दिनेश दिवाल से पीठ लगाए किसी फिल्मी धुन को गुनगुना रहा था। राजन ने आँखें मलते हुए जीवन को देखा। बोला, "अरे यार, तू तो मेरे किसी निद्रा-गुरू को लेआया लगता है। रात को यह बाहर पड़ा सोरहा था; अब देखता हूँ, यहाँ जम कर नींद ले रहा है। कौन है यह?"

दिनेश ने परिचय दिया। फिर कहा, "रात को सो न सका। इसी से फिर आँख लग गई। मैं इसे उठाता हूँ। हम लोग तुम्हारे उठने का ही इन्तजार कर रहे थे।"

इतना कह कर दिनेश ने जीवन को उठाया। जीवन ने आँख खोलते ही राजन को हाथ जोड़ दिए। राजन ने उसकी 'नमस्ते' का कोई जवाब न देते हुए कहा, "दिनेश, चाय-वाय हो तो दो यार।"

दिनेश ने कहा, "रखी तो है पर अब तो वह पानी हो चुकी होगी।"

राजन बोला, "तो यह साला भैया किस काम आएगा। जा यार, गरम तो कर ला।"

"दूसरी बना दूं?" दिनेश ने पूछा।

राजन हँस कर बोला, "मेरी आदत मत खराब करो। यह चाय क्या साला झाबरमल पीने आएगा।"

झाबरमल उस कम्पनी का फाइनेन्सर था जिसमें आज कल राजन एक्सट्रा का काम करता था। वह दिन में दो-चार बार झाबरमल को गाली देकर खुश हो लिया करता था। दिनेश चाय गरम करलाया। राजन ने बिना मुँह-हाथ धोए पीली। फिर जीवन की ओर देख कर बोला, "प्यारे, फिल्म से इश्क चर्राया है। अच्छा, पहले यह बताओ कि कौन-सी सूरत तुम्हें यहाँ खींच लाई है।"

शर्म के मारे जीवन के कान तक लाल होगए। उसके सवाल का जवाब उसे सूझ न रहा था। वह कहता गया, "छिपाओ मत यार। हसीनों से मुहब्बत हो ही जाती है। पर बड़े जालिम होते हैं ये हुस्न वाले। ईंजानिब के दिल से पूछो कि कितने वार सहे बैठे हैं। जमीन तैयार करते हैं पर कभी कोई साला डायरेक्टर हाथ मार देता है, तो कभी फाइनेन्सर। कभी हीरो के हत्थे चढ़ जाती है वह। पर कसम उन हसीनों की, हम भी हारना नहीं जानते। हमेशा कोई न कोई नई चिड़िया मिल ही जाती है।"

जीवन का मन उसकी बात सुन कर ग्लानि से भर उठा। उसकी तरफ देखने को भी उसका मन नहीं किया। वह सोचने लगा कि क्या फिल्म ऐसे ही लोगों की दुनिया है। उसकी तबीयत घबड़ा उठी। कहाँ आ कर फँस गया! पर, दिनेश को देख कर कुछ तसल्ली हुई। दिनेश बोला, "यार, तुम सबको एक ही डंडे से क्यों हाँकते हो? फिल्म में कोई आए तो तुम उसका दूसरा मतलब ही नहीं लगा पाते।"

"लगाऊँ कैसे?" उसने दृढ़ स्वर में कहा, "मैं रोज जो देखता हूँ, वही कहता हूँ। एक-एक एक्ट्रेस के पास ढेरों चिट्ठियाँ आती हैं। ऐसे ही लोग तो लिखते हैं। फिर फिल्म में औरत को छोड़ कर धरा भी क्या है। एक शराब थी, वह तो सरकार ने छीन ली। अब दिल बहलाने के लिये सिर्फ ये खूबसूरत शक्लें ही तो रह गई हैं। हर डाइरेक्टर, एक्टर, प्रोड्यूसर, फाइनेन्सर इन्हीं में तो मजा लेता है।"

दिनेश ने कहा, "खैर यह तो तुम्हारा सदा का इल्जाम है। अब सवाल

यह है कि ये जिस काम के लिए आये हैं वह होना चाहिए। बढ़िया कहानियाँ लिखते हैं। तुम कहीं इनका सिप्पा बैठाओ।"

राजन ने जीवन को कुछ ऐसी निगाहों से देखा जैसे उसका बदन उघाड़-उघाड़ कर देख रहा हो। फिर हँसते हुए बोला, "वाकई तुम कहानी लिखते हो यार कि यूँ ही? कहानी लिखने से पहले किसी से इश्क भी किया है? यहाँ तो इश्किया कहानी चाहिए, इश्किया!"

जीवन चुप हो रहा। दिनेश ने कुछ बिगड़ कर कहा, "राजन, कभी तो भले आदमियों की तरह बात कर लिया करो। तुम्हें इससे क्या मतलब कि कैसी कहानी लिखते हैं, कैसी नहीं? तुम इन्हें किसी काम के आदमी से मिला दो। बाद में ये खुद समझ लेंगे।"

राजन ने मस्ती के साथ कहा, "जो हुक्म! आज इन्हें झाला भाई से मिला दूँगा। नया प्रोड्यूसर बना है। बड़ा पैसा है। बढ़िया कहानी के फेर में है। कई फिल्में एक साथ बनायेगा। उसने एक लेखकों का बोर्ड बनाया है। उससे मिला देना मेरा काम है। बाकी इनके हाथ की बात है। अच्छा प्यारे, इसी बात पर एक सिगरेट पिला दो।"

दिनेश ने चिढ़ कर कहा, "राजन, तुम पक्के बेईमान हो। सिगरेट जैसी चीज़ तुम से भला बचे भी तो! तुम ने रात को आखिर मेरी सिगरेट मार ही दी।"

राजन हँस कर बोला, "क्या करूँ यार। नाक ही कुछ ऐसी पाई है कि सिगरेट की गन्ध छिप नहीं पाती। अच्छा देखूँ भैया के यहाँ बीड़ी या हुक्का हो तो उसी में दम मारूँ। बिना उसके तो यहाँ दिन ही नहीं खुलने का।"

इतना कह कर वह बाहर चला गया। जीवन असमंजस में पड़ा था। राजन उसे अच्छा न लगा था। वह उसके साथ कहीं जाते भी डरता था। बोला, "तुम नहीं चलोगे मेरे साथ।"

दिनेश समझ गया। बोला, "मैं भी चलूँगा। राजन की दया पर अभी तुम्हें छोड़ा नहीं जा सकता।"

लेकिन उस दिन काफी धक्के खाने पर भी राजन किसी से भी जीवन की मुलाकात न करा सका। दोपहर के निकले तीनों काफी रात को वापस लौटे।

तीनों काफी थके थे। जीवन बम्बई से एक ही दिन में घबड़ा गया था। दिनेश और राजन तो इन सब बातों के अभ्यासी थे। खाली जूते चटखाते फिरना तो उनकी फिल्म-कला का अंग ही थी। काफी गर्मी थी। रात को ग्यारह बज जाने पर भी तीनों काफी देर तक कोठरी के बाहर ही कच्ची जमीन पर बैठे रहे। तारे टिमटिमा रहे थे। चाँद जाने कहाँ था, दिखाई न दे रहा था। नमकीन समुद्री हवा बह रही थी। तीनों खामोश थे। राजन सिगरेट के लिये जेबें टटोल रहा था। टटोलते-टटोलते आप ही बोला, "जिस चीज की जब जरूरत होती है, नहीं मिलती। इस साली सिगरेट को ही लो। अगर वक्त-बेवक्त इधर-उधर पड़ी मिल जाय तो क्या हर्ज ?"

और कोई मौका होता तो उसकी इस बात पर सब लोग हँस पड़ते पर आज चुप बैठे रहे। फिर दिनेश कुछ गम्भीर हो कर बोला, "जीवन, तुम एक मंथली पास बनवालो रेल का। मेरी राय में मलाड और दादर का पास बनवा लो। रोज-रोज टिकट लेने से बहुत खर्च पड़ेगा।"

जीवन ने इसका केवल यही अभिप्राय समझा कि काम जल्दी से मिलना आसान नहीं। वह चिन्ता में पड़ गया। तब उसकी गुजर कैसे होगी ? रुपये भी तो इतने नहीं हैं।

उधर राजन कह रहा था, "दिनेश, तुम बहुत फिजूलखर्च हो। मुझे पास-वास में पैसा फूँकना कतई पसन्द नहीं। तुम जानते हो कि मैं कभी टिकट नहीं खरीदता और न मेरे पास पास ही है। बिना टिकट के चलने की तरकीब मैं बता दूँगा, जीवन।"

दिनेश ने कुछ चिढ़कर कहा, "अपनी नेक सलाह तुम हर किसी को न दिया करो, राजन। हमारे बस की बात नहीं है बिना टिकट चलना।"

जीवन हँस कर बोला, "खरगोश का दिल पाया है। इसके लिये शेर का कलेजा चाहिए ! अच्छा, उसके आधे पैसे मुझे दिला दो। बाकी जिम्मा मैं लेता हूँ इसका।"

"और यह हर वक्त तुम्हारे पीछे बंधा रहे। क्यों, है न यही बात ?" दिनेश ने कुछ कटु हो कर कहा।

राजन ने बात का पहलू बदल दिया। जीवन से बोला, "यार, किस

अफसोस में पड़े हो ? काम के लिये तो अभी न जाने कितनी टक्करें खानी पड़ेंगीं।"

जीवन ने सीधे भाव से कहा, "यदि मुझे जल्दी काम नहीं मिला तो फाके की नौबत आजायेगी।"

राजन बोला, "घबड़ाओ मत। राजन के रहते फाकों की नौबत कभी न आने पाएगी।"

यह कहने के साथ ही राजन की आँखों में शरारत चमक उठी। बोला, "ये बिजली की रेलें चला कर सरकार ने मुझ जैसे आदमियों का बड़ा भला किया। सवारी की सवारी; रोजी की रोजी।"

जीवन उसके संकेत पर सहम गया। दिनेश ने क्षोभ के साथ मुँह फेर लिया।"

इसी तरह दिन बीतने लगे। जीवन धीरे-धीरे फिल्म वालों के ठिकानों से परिचित हो चला था। अब वह कभी अकेला चक्कर लगा आता तो कभी दिनेश या राजन के साथ। पर उसका हिसाब कहीं नहीं बैठ रहा था। दिन बीत रहे थे। हर नया दिन निराशा को बढ़ा जाता और पास के पैसे कम कर जाता। अब उसके पास मुश्किल से पाँच रुपये रह गये थे। फलतः उसने एक वक्त का खाना बन्द कर दिया। पर ये पाँच-सात रुपये ज्यादा से ज्यादा दस बारह दिन का काम चला सकते थे। जीवन की चिन्ता जटिल हो उठी। अब वह किसी से मिलने के पहले ही उसकी ओर से निराश हो उठता। कोई प्रोड्यूसर बाहर से ही टाल देता। कोई सूरत देख कर उपेक्षा कर देता। कोई फिर आना कह कर 'फिर' को ही कभी आने न देता।

सहसा एक दिन जीवन को आशा की किरण दिखायी दी। वह एक नये प्रोड्यूसर-डायरेक्टर से मिला। नाम था धीरू भाई। धीरू भाई की यह विशेषता थी कि वे डायरेक्टर, प्रोड्यूसर, राइटर और एक्टर सभी कुछ थे। अभी जो फिल्म बनाई थी उसका निर्देशन भी उन्होंने खुद किया था। हीरो भी आप ही बने थे। कहानी और डायलाग भी उन्हीं के थे। सिर्फ जो चीज उनकी नहीं थी वह था रुपया। रुपये के लिये सेठ किशोरीमल कापड़िया

मिल गया था। थोड़ी ही उम्र का लड़का था। बाप करोड़ों की सम्पत्ति छोड़ कर मरा था। बेटे को फिल्म का शौक चर्राया। मुलाकात हो गई धीरू भाई से। धीरू भाई कल तक एक्सट्रा में काम और एक्सट्रा की सप्लाई किया करता था। पर कापड़िया पर कुछ ऐसा रंग चढ़ाया कि उसने पहली मुलाकात के बाद ही एक लाख रुपये की पूँजी उसे दे दी। फिल्म बन गई पर चली नहीं। कोई डिस्ट्रीब्यूटर लेने को तैयार ही नहीं हो रहा था। कापड़िया को घाटे की परवाह न थी। पर किसी ने उसके कान भर दिये। उसने धीरू भाई को खूब खरी-खोटी सुनाई और कहा कि वह हीरो न बनता तो फिल्म पास हो जाती। धीरू भाई ने विरोध किया; कहा कि अगर सेठ अपनी पसन्द की हीरोइन न रखवाता तो फिल्म शर्तिया पास हो जाती। सेठ ने कहा, दूसरी कमजोरी कहानी की थी। धीरू भाई के पास उसका भी जवाब था। कह दिया, कहानी हीरोइन की पसन्द की थी।

इसी तरह बहुत-सा झगड़ा हुआ और अन्त में यह तय हुआ कि अबकी वार नयी हीरोइन रखी जाय पर उसे पसन्द सेठ ही करेगा। कहानी किसी दूसरे से लिखाई जाय पर पास सेठ ही करेगा। धीरू भाई देंगे सिर्फ डायरेक्शन।

जब धीरू भाई को कहानी की तलाश थी तभी उससे जीवन टकरा गया। उन्हें जीवन शक्ल से सीधा, यानी बेवकूफ, लगा। उन्होंने उससे बड़ी मीठी-मीठी बातें कीं और कह दिया कि कहानी छोड़ जाओ, एक हफ्ते बाद आना। इस बीच में फैसला करके बता देंगे। जीवन ने अपने लिखे पुलिंदे में से एक बढ़िया-सी कहानी उसे दे दी। जब वह अन्धेरी अपने ठहरने की जगह लौटा तो खुश था। अभी तक दिनेश या राजन में से कोई लौटा नहीं था। उसने चौखट की खोखर में से चाबी निकाली और कोठरी खोल कर आराम करने लगा। उसे पूरा विश्वास हो गया था कि अब जल्दी ही उसकी कहानी पर्दे पर आजायगी। दुनिया भर में उसके नाम की शोहरत होने में अब देर नहीं। सरिता भी सुनेगी। इस फिल्म को देखेगी और तब उसे प्यार से भर कर याद करेगी, थोड़े ही दिनों में वह मालामाल हो जायगा। बड़ा आदमी गिना जाने लगेगा। पैसा होगा, सब कुछ होगा, और तब मैं···

इसी स्वर्ण-कल्पना में जीवन बिना खाए ही सोगया। अभी रात का

नौ ही बजा था। मच्छर काटते रहे पर वह सोता रहा और जब आँखें खुलीं तो प्रभात हो चुका था। दिनेश उससे पहले ही उठ कर बाहर जाने को तैयार बैठा था। राजन कल से लौटा ही नहीं था।

नित्य ही जीवन निराशा से भारी मन ले कर उठता था। पर आज वह उत्फुल्ल था। दिनेश ने उसे खुश देख कर उत्साह से पूछा, "कल कुछ काम बना ?"

"हाँ," जीवन ने कहा, "धीरू भाई ने कहानी लेली है। बस, समझ लो, मंजूर भी कर लेगा। एक, हफ्ते की बात है।"

दिनेश धीरू भाई को न जानता था। पूछा, "कौन है यह धीरू भाई ?"

जीवन बोला, "वाह भैया। इतने दिन हो गये और तुम्हें पता भी नहीं चला। वही जिसने 'बेरहम पिया' पिक्चर बनाई थी।"

"मुझे याद नहीं पड़ता। राजन जानता होगा," यह कह कर दिनेश चिन्ता में पड़ गया।

जीवन उसकी उदासी ताड़ कर बोला, "क्या बात है ? तुम किस सोच में पड़ गये ?"

दिनेश ने कहा, "कुछ नहीं, यहाँ चोरी बड़ी होती है। कहीं तुम्हारी कहानी ही न मार बैठे।"

"ऐसा कैसे हो सकता है ?" जीवन ने कहा, "फिर उसकी नकल भी तो मेरे पास है।"

दिनेश बोला, "हुआ करे ! वह तुम्हारी कहानी हफ्ते भर बाद तुम्हें लौटा तो देगा परन्तु उसमें कुछ इधर-उधर करके ही वह दूसरी फिल्म बना डालेगा।"

जीवन ने विरोध किया, "नहीं भाई, ऐसी बात नहीं। धीरू भाई बहुत भला आदमी लगा। प्रोड्यूसर होकर भी ऐसे प्रेम से बातें कीं कि क्या बताऊँ ?"

दिनेश ने कहा, "तब तो और भी खतरा है।"

जीवन बोला, "ऐसी बात नहीं है भाई। आदमी को थोड़ा तो मैं भी समझता हूँ।"

दिनेश ने कुछ कटुता के साथ कहा, "आदमी को तो तुम समझ सकते हो

पर फिल्म में आदमी आदमी नहीं रह जाता। वह तमाम चीजों की नकल करता है—ढोंग करता है। वह तुम्हें अपने सामने बिठा कर तुम्हरा खाली पेट होते हुए भी तुम्हें लखपति होने के स्वप्न दिखा सकता है।"

पर जीवन आज किसी भी अविश्वास को अपने मन में स्थान देने को तैयार न था। वह तो सम्पन्नता और प्रतिष्ठा का स्वप्न देख रहा था। अन्त में दिनेश ने कहा, "ईश्वर करे, तुम्हारी कल्पना सत्य निकले। मेरा अनुभव तो कुछ और है। जिस गीत का दूसरा एक हजार लेता है, उसके मुझे दस रुपये देते हुए भी लोग रोते हैं। कई एक ने सौ-पचास देकर मुझ से मेरे गीत ले लिये और अपने नाम से देदिये। मुझ से कहा कि अभी तुम्हारा नाम नहीं है इसलिए गीत तुम्हारे नाम से नहीं दिये जा सकते। फिल्म के बिकने में बाधा होगी। जब वे गीत पसन्द किये जाते हैं, तारीफें होती हैं, सुनने वाले झूम उठते हैं, और फिल्म खूब चलती भी है तब भी मुझे कोई नहीं पूछता। प्रोड्यूसर ने खूब कमाया पर मुझे जो मिला, मैं ही जानता हूँ। इसीसे कहता हूँ कि ये सब बेईमान हैं। इनसे सम्हल कर व्यवहार करना चाहिए।"

जीवन आदर्शवादी की तरह बोला, "पर सब को बेईमान मान लेने से काम तो नहीं चलता। व्यवहार का आधार ही विश्वास है। विश्वास छोड़ दिया जाय तो दुनिया चले कैसे ?"

इतने में राजन ने विष्कम्भक की भाँति प्रवेश किया। रात्रि-जागरण से उसकी आँखें लाल हो रही थीं। कहीं उसे पीने को भी मिल गयी थी। बदबू अभी तक मुँह से आ रही थी। वह आते ही एक बक्से पर बैठ गया और बोला, "जीवन, मैंने तुम्हारी बात सुन ली है। उसका जवाब मेरे पास है। दुनिया में विश्वास से नहीं, चालाकी के विना कोई खुशहाल नहीं रह सकता। पति-पत्नी अगर चालाक होते हैं, तो एक दूसरे से अपनी कमजोरियों को छिपाते हुए खूब मज़े से निबाह कर लेते हैं। मैं जानता हूँ कि उस स्त्री की एक भी सन्तान अपने पति से नहीं। पर वह चलाक है। पति को बेवकूफ बनाने में सफल है। मैं यह भी जानता हूँ कि वह पति घर से बाहर सब कुछ करता फिरता है। पत्नी जान ले तो आफत मच जाय। पर पत्नी पति की चालबाजी से नहीं जान पाती। मैं अपनी जानता हूँ।

मैं और दिनेश साल भर से साथ रह रहे हैं। अगर मैं चालाकी से काम न लेता तो दिनेश कब का इस कोठरी से मेरा सामान बाहर फेंक चुका होता।"

इतना कह कर वह हँसने लगा। उसने दिनेश की ही बात का समर्थन किया था। फिर भी दिनेश ने विरोध किया, "ऐसे दुनिया सुखी नहीं रह सकती। हर धोखा देने वाला आदमी भीतर ही भीतर कमजोर होता है और एक ऐसे खटके को पाल लेता है जिससे उसे अपना सुख कभी स्थिर नहीं जान पड़ता।"

"मैं नहीं मानता," राजन ने कहा, "तुम कमजोर दिलों की बात करते हो। तुम्हारी बात में सच्चाई तिल से भी छोटी है। पुलिसवाला रात-दिन घूस लेता है। उसका बस चले तो मुर्दे से भी लेले और मलाल न करे। बनिया रात दिन ब्लैक करता है; उसका बस चले तो हर चीज में मिलावट के अलावा कुछ न रखे। ज्योतिषी, जो तुम्हारा भविष्य बताने आता है, सफेद झूठ बोल कर और तुम्हें मूँड़ कर चला जाता है। तुम उसके पैर भी पूजते हो और दक्षिणा भी देते हो। उस साले एक्सट्रा-सप्लायर को ही लो। मजाल है कि बिना उसका कमीशन दिये तुम कहीं जगह पाओ! अगर किसी तरह कहीं पैर जम भी गया तो वह छुरा दिखा कर अपना कमीशन वसूल कर लेता है। उसका काम क्या है? लड़कियों को खराब करना। लड़कों की पाकेट मारना। मैं इन सब को समझता हूँ। मैं दुनिया की जेब काटता हूँ पर वह मेरी काटता है। ठीक है! काटे। मौका पड़ने पर मैं उसकी काटूंगा। दिनेश बाबू, अपने राम का तो एक उसूल है। वह यह कि हर किसी को अपने मौके की तलाश में रहना चाहिए। मौके पर मार भी खाले और मौके पर मार भी बैठे।"

जीवन चुप था। अब दिनेश भी चुप हो गया। दोनों को चुप देख कर राजन हँस पड़ा। बोला, "तुम लोग भोले हो। बेवकूफ हो। इस तरह जी नहीं पाओगे। दुनिया में बेईमानी इतनी बढ़ चली है कि हर किसी को राजन बनना जरूरी है। बताओ, मैं करूँ भी क्या? खाने-पहरने को चाहिए—मतलब कि पैसे की जरूरत है। बस किसी तरह पैसा पैदा कर लेना, यही मेरा काम है।"

दिनेश ने चिढ़ कर कह दिया, "एक दिन तुम जेल में नजर आओगे।"

"स्वागत है," राजन उसी वेफिक्री से बोला, "वहाँ भी रोटी मिलेगी; वहाँ भी जाँघिया और ऊँचा कुर्ता पहनने को मिलेगा। बस, चाहिए क्या? राजन की चालाकी से सिगरेट भी वहाँ पहुँच जाया करेगी। जहाँ राजन रहेगा वहाँ सब कुछ जुटा लेगा। मेरी राय में तो जेल में भी हर इन्सान को थोड़े दिन जरूर रहना चाहिए।"

उसकी इस बात से जीवन मन ही मन काँप उठा। वह अनजाने ही इस आदमी के प्रति घृणा से भर उठा था। उसने कितनी ही देर बाद जबान खोली। बोला, "आज तुम्हें कहीं जाना नहीं है दिनेश ?"

"हाँ, जाना तो है और अभी···" उसने कहा।

जीवन बोला, "तो मैं भी तैयार हो लूँ। मुझे भी दो-एक जगह जाना है।"

जीवन ने तैयार हो कर अपने बक्से को खोला और उसमें से अपना रेल-पास लिया। बाकी बचे रुपये भी ले चलने चाहे पर रुपये बक्से में न थे। चार रुपये बचे थे। किसी तरह भूखे रह कर वह उतने बचा सका था। जब वहाँ एक भी पैसा न मिला तो सन्न रह गया। दिनेश ने उसका उदास मुख देखा तो चौंक पड़ा। पूछा, "क्या बात है जीवन ?"

"मेरे कुछ रुपये थे," जीवन ने झिझक के साथ कहा।

"क्या मिल नहीं रहे···" इतना कह कर दिनेश ने कठोर दृष्टि से राजन की ओर देखा। राजन सिगरेट निकाल कर सुलगा रहा था। उसने इतमीनान से कश मारा और धुएँ का गुब्बारा छोड़ते हुए दिनेश से बोला, "सिगरेट पिओगे ? जीवन, तुम भी शुरू कर दो। सिगरेट से अच्छा साथी कोई नहीं। सारी मनहूसियत इसके होंठों से लगते ही दूर हो जाती है।"

दिनेश ने कठोर स्वर में पूछा—राजन, तुमने जीवन के रुपए लिए।

राजन ने बिना विचलित हुए सिगरेट पीते हुए कहा, "हाँ। जरूरत थी। कल मेरे पास एक भी पैसा नहीं था।"

"तो माँग लेते, यह तो चोरी हुई!" दिनेश का गुस्सा काबू से बाहर हो चला था।

"चोरी ही कह लो।" राजन ने कहा, "मुझे तो इसमें कोई बुराई नहीं नजर आती।

दिनेश उसी तरह बोला, "पर तुम्हें सोचना चाहिए था कि वह हमारा मेहमान है। हमारे भरोसे बम्बई में टिका है। उसकी एक पैसे की भी अभी आमदनी नहीं। वह खुद मोहताज है।"

"यार बिगड़ो मत," राजन ने कहा, "आज मेरे पास काफी रुपये हैं। कल नहीं थे लेलिये थे। आज हैं तो ढाई-गुने वापस किये देता हूँ।"

इतना कह कर उसने जेब से दस-दस के कई नोट निकाले और एक नोट जीवन की तरफ फेंक दिया। जीवन नोट को उठाने की सोच ही रहा था कि दिनेश घृणा से बोला, "जीवन, इस नोट को छूना मत। यह बेहद गन्दा है। तुम्हारे पैसे मैं दूँगा। बेफिक्र रहो। जब तक तुम्हें कहीं काम नहीं मिल जाता, तुम्हारा खर्चा मैं पूरा करूँगा। मैं इतना तो कमा ही लेता हूँ कि किसी तरह हम दोनों जीसकें। पर, इस पाप के नोट को मत छूना।"

राजन अब भी अविचलित खड़ा था। सिगरेट पी रहा था और आँखों से खुशी बरसा रहा था। ईषत् मुसकान के साथ बोला, "पैसा बड़ा पवित्र होता है। इसे उठा लो। पैसे को छोड़ने वाला बेवकूफ ही नहीं, पापी होता है। पैसा न होने से तुम भूखे रहोगे। यह पाप है।"

दिनेश ने तेज स्वर में पूछा, "पहले यह बताओ कि तुम्हारे पास इतने रुपये आये कैसे ?"

"तुम जानते हो कि मैं कोई खेती तो करता नहीं रुपयों की। कहीं न कहीं से पा ही लेता हूँ। ये सब मैंने उसी साले एक्सट्रा-सप्लायर से वसूले हैं, जो मुझ से सैंकड़ों रुपये कमीशन मार चुका है। मेरे साथ ही आ रहा था। मैंने मौके का फायदा उठाया।" राजन ने कहा।

इसके बाद दिनेश ने राजन से कुछ नही कहा। जीवन से बोला, "चलो जीवन, हम लोग चलें।"

वे दोनों चल दिये। राजन ने दस रुपये का नोट उठा कर फिर अपनी जेब में रख लिया और दिनेश के बिस्तर पर ऐसे लेट गया जैसे कुछ हुआ ही नहीं। थोड़ी देर में दूध वाले की जवान छोकरी उधर से गुजरी। उसने कोठरी में झाँका और राजन को अकेला देख कर भीतर चली आई। उसका व्याह हो गया था पर अभी पति के घर ज्यादा नहीं रहती थी।

उसका हाथ जरा तंग था, इसीसे बीवी को उसके बाप के पास छोड़ देने में उसे कोई खास एतराज नहीं था। राजन उसे देख कर दुष्टता के साथ हँस कर बोला, "क्यों री, कैसे आई ? तेरा बाप नहीं है क्या ?"

"कोई नहीं है, बाप भी नहीं, भाई भी नहीं;" वह बोली, "मा है।"

"उसका क्या डर ! भगवान ने उसकी आँखें छीन कर तुम्हारे लिये बड़ा अच्छा किया। इतना कह कर राजन ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा। वह जरा से झटके में ही उसके ऊपर फूहड़ अदा के साथ गिर पड़ी। बोली, "पहले पैसे दो।"

राजन ने वही दस रुपये का नोट निकाला और बोला, "ले जालिम ! बाप दूध बेचता है तो तू हुस्न बेचती है। अच्छा उठ, पहले किवाड़ तो ढुका ले।"

लड़की के बदन से गाय के गोबर की और राजन के मुँह से शराब की बदबू आती रही।

अन्धेरी स्टेशन पर ही जीवन और दिनेश अलग-अलग हो गये थे। दिनेश को गोरेगाँव जाना था और जीवन को दादर। दादर में उसे एक और फिल्म-प्रोड्यूसर ने मिलने का वक्त दिया था। ठीक वक्त से पहुँचने पर भी दो घण्टे बाहर धूप में इन्तजार करने के बाद मुलाकात हुई। प्रोड्यूसर ने तभी अपने यहाँ के एक और आदमी को बुलाया। जीवन से बोला, "ये सुरेन्दर जी हैं। आप इनसे बात कर लीजिए। ये हमारे लेखकों के बोर्ड में चीफ हैं।"

सुरेन्दर जी का ठीक नाम सुरेन्द्र था। पंजाबी थे। उर्दू में दखल रखते थे। इसी से सुरेन्द्र से सुरेन्दर हो गये। वे जीवन को अपने साथ एक अलग कमरे में ले गये। वहाँ और भी कई लोग बैठे थे। सब के हाथों में कागजों के पुलिन्दे या बस्ते थे। सभी सिगरेट पी रहे थे और हो-हो-कर के हँस रहे थे। सुरेन्दर जी के आने पर भी उनकी हँसी चलती रही। जीवन को उन सब को देख कर वितृष्णा हुई और जी में आया कि लौट चले। इससे पहले

कि सुरेन्दर जी उसका परिचय कराएँ, उन्हीं में से एक बोल उठा, "आप भी कोई कहानी लेकर आये हैं क्या ?"

अगर जीवन अपनी बगल का पुलिन्दा छिपा सकता तो जरूर कह देता कि नहीं। पर वह असमर्थ था और असमर्थता में चुप ही रहसकता था। सुरेन्दर जी ने बताया, "हाँ, कहानी ले कर आये हैं।"

इस पर हर किसी ने जीवन पर उपहासपूर्ण दृष्टि डाली। जीवन सिहर उठा। सुरेन्दर जी के इशारा करने पर एक कुर्सी पर बैठ तो गया पर वह किसी तरह से वहाँ से छुटकारा चाहता था।

उसके बैठ जाने पर सुरेन्दरजीने कहा, "अपनी कोई कहानी तो दिखाइए।"

जीवन ने एक पेश कर दी। वे उसके पन्ने उलट-पलट कर बोले, "आपने तो बड़ी सकील हिन्दी लिखी है। हिन्दी तो हमारे यहाँ चलनेकी नहीं।"

जीवन ने धीमी ज़बान से कहा, "मै सोचता हूँ कि मेरी भाषा सरल है और उसमें प्रवाह भी है।"

तभी एक दूसरे साहब बोले, "अगर आप यह कहते कि आसान है और उसमें रवानी भी खूब है तो हम मान लेते। जनाब तो संस्कीरत लिखते और वही बोलते जान पड़ते हैं।"

जीवन की नफरत बढ़ चली। एक और साहब फरमा रहे थे, "जनाब, हमें फिल्म के लिये कहानी चाहिए, कहानी। आप तो हमारे पास लिटरेचर ले कर चले आये।"

जीवन बोला, "मैं तो दोनों में कोई खास फ़र्क नहीं समझता। मैंने जीवन को शब्दों में बाँध कर दिखाया है : आप उसी को चित्रों की सहायता से अधिक सजीव कर सकते हैं। हमारे माध्यम में अन्तर ज़रूर है पर आप उसे जरूरत के मुताबिक काट-छाँट भी तो सकते हैं।"

इतने में एक बृद्ध सज्जन आये। पहनावा उनका अंग्रेजी था। सिर के बाल लगभग सफेद हो चले थे। क़द छोटा था और आकृति में किसी तरह का आकर्षण नहीं। उन्हें देख कर सब लोग उठ खड़े हुए। सब ने हाथ जोड़े, 'प्रिय दर्शन जी नमस्ते,' 'पिरिय दरसन जी सलाम,' 'पिरिय दरसन साहब आदाब।'

जीवन ने भी अदब से खड़े हो कर हाथ जोड़ दिये और नमस्कार करते हुए कृतज्ञता के स्वर में बोला, "आपके नाम और कृतित्व से मैं सुपरिचित हूँ। हमारे कथा-साहित्य को आपकी भारी देन है। आज सौभाग्य से दर्शन हो गये। आशा है अब यह सुयोग मिलता ही रहेगा।"

प्रियदर्शन जी ने उसके निवेदन पर कोई ध्यान नहीं दिया। जीवन की कहानी पर फिर बहस चल पड़ी। सुरेन्दर साहब ने फरमाया, "देखिए, पिरिय दरसन जी को ही लीजिए। इन्होंने फिल्म के लिये सैकड़ों कहानियाँ लिखी हैं और उससे भी ज्यादा लिटरेचर में। पर आपकी लिटरेचर की जो 'बेस्ट' है वह फिल्म की 'बेस्ट' नहीं हो सकी! पिरियदरसन जी को मेरी राय से इत्तेफाक न हो तो गुस्ताखी माफ फरमाएँ।"

प्रियदर्शन जी ने गर्दन हिलाकर समर्थन किया। जीवन ने इस पर कहा, "आपके अनुभव का मैं विरोध नहीं करता। फिर भी, मैं सोचता हूँ कि मैंने इस कहानी में जीवन के एक टुकड़े को ही रोचक ढंग से पेश किया है। आप अवश्य ही उसमें एक अच्छी फिल्मी कहानी पा सकते हैं।"

प्रियदर्शन जी को अपनी मिसाल के बाद भी उसकी यह दलील अच्छी नहीं लगी। उन्होंने बहस को खत्म करने के इरादे से सुरेन्दर जी की ओर देख कर कहा, "आप इनसे कह क्यों नहीं देते कि इनकी चीज़ आपके काम की नहीं है।"

इस पर सभी उपस्थित लोग अभद्रतापूर्वक हँस पड़े। जीवन अपमानित-सा उठ खड़ा हुआ। उसे आशा थी कि प्रियदर्शन जी हिन्दी के व्यक्ति हैं। उसका समर्थन करेंगे। पर, वे तो 'श्वानवत्' व्यवहार करते दिखाई दिये। उसे लगा कि फिल्म में जो पहले से जमे हुए लेखक हैं उन्हें नयों का आना पसन्द नहीं। यह रोटी का सवाल है। वे उस रोटी को पूरा खाना चाहते हैं। बाँट कर खाने को वे तैयार नहीं।

फिल्म से लौट कर वह रेडियो स्टेशन गया। वहाँ वह जब हिन्दी विभाग के इंचार्ज से मिला तो उसने उन्हें अत्यन्त मृदु और विनम्र पाया। उन्होंने उसकी कुछ रचनाएँ विचारार्थ लेलीं और विश्वास दिलाया कि यदि सम्भव होगा तो उनका अवश्य ही उपयोग करेंगे।

वहाँ उसकी इंचार्ज महोदय से और भी बहुत-सी बातें हुई। वे मराठा सज्जन थे। जीवन की आत्मा में यह विश्वास बद्धमूल होगया कि इस भले आदमी की सहायता से वह अवश्य ही रेडियो में अवसर पासकेगा।

रेडियो के बाद उसने वहाँ के अखबारों के भी चक्कर लगाए। नियमित काम का तो आश्वासन उसे कहीं से नहीं मिला पर यह विश्वास हो गया कि यदि वह उन पत्रों के लिये लिखे तो उसकी रचनाएँ छप सकेंगी और कुछ न कुछ पत्रपुष्प भी मिल सकेगा।

अब शाम हो आयी थी। आज जीवन ने सुबह से कुछ नहीं खाया था। वह थका-माँदा मेरीन ड्राइव पर समुद्र के किनारे चला आया। दिनेश के दिये कुछ पैसे उसके पास थे। पर वह उन्हें तब तक नहीं खर्चना चाहता था जब तक कि भूख बेबस न कर दे।

मेरीन ड्राइव पर अभी थोड़ी-थोड़ी धूप थी पर ढलते वक्त की होने के कारण उसमें प्रखरता न थी। मकान डिब्बों-से एक कतार में सजे थे और दूसरी ओर समुद्र लहरा रहा था। समझ में नहीं आ रहा था कि दूर जाकर आसमान समुद्र में डूब जाता है या समुद्र आसमान में मिल जाता है। वह एक जगह बैठ कर समुद्र की लहरों का विलास देखता रहा। लहरें उन्मादिनी-सी तट की ओर दौड़ती आती और वहाँ बड़े-बड़े पत्थरों-चट्टानों से टकरा कर जल-कणों में बिखर आसमान में उछल पड़तीं। लहरें चट्टानों को जब थपकियाँ देतीं तो उनमें अजीब संगीत पैदा होता। समुद्र भी रंग-विरंगा हो रहा था; कहीं नीला, कहीं काला और कहीं लाल! जीवन वहाँ बैठा हुआ सोचता रहा कि इसे कहते तो रत्नाकर हैं पर इसके तल में हीरे-मोती भी हैं और घोंघे पत्थर भी; अनोखे जलजीव भी। कुछ मल्लाह पास ही डोंगी पर सवार मछलियों को पकड़ने के उद्योग में थे। सूरज अब आग के लाल गोले-सा रह गया था और लगता था कि अपनी तपिश बुझाने वह समुद्र में डूबा कि अब डूबा।

जीवन के देखते-देखते ही समुद्र में गिर कर सूरज ठंडा हो गया। समुद्र का रंग अब अधिक लाल हो गया। तट पर घूमने वालों की भीड़ बढ़ चली। स्त्री, पुरुष, बच्चे। धाएँ साहबों के बच्चों को घुमा रही थीं। जीवन ने

बम्बई में एक विशेषता पाई थी। स्त्रियाँ यहाँ अधिक मुक्त थीं और उनके पहनावे में सहज सुन्दरता थी। उसे गुजराती महिलाएँ अधिक प्रिय लगीं। मांसल, सुगठित देह और सौम्य आकृति; साथ ही मनोहर कुन्तल !

पर इस समय उसे भूख लग रही थी। इसलिये न तो प्राकृतिक सौन्दर्य में मन रम रहा था और न मानवी सौन्दर्य में। बगल से कभी सींग-दाना वाले की आवाज आ रही थी तो कभी डाभ वाले की। लोग खरीद और खा रहे थे। पर जीवन चाह कर भी खरीद न पा रहा था। वह ऊबा-सा अपनी जगह से उठा और धीरे-धीरे चल दिया। थोड़ी देर में वह चौपाटी पर पहुँच गया।

चौपाटी बम्बई का चाट बाजार है। चाट वाले, डाभ वाले, सींगदाने वाले—तरह-तरह के लोग वहाँ जमा थे। स्त्री-बच्चों की भीड़ भी बेहद थी। रेती यहाँ की काफी गन्दी थी। चाट के जूठे पत्ते और इसी तरह की दूसरी चीजें इधर-उधर बिखरी थीं। कुछ चाट वालों की अगीठियों का धुआँ भी जगह-बेजगह घुट रहा था। वहाँ उसने खोजाओं की सुन्दर पत्नियों को बुर्के से छोटे-छोटे हाथ और सुन्दर मुख निकाल अचंचल भाव से चाट खाते देखा। भेलपूरी की वहाँ खूब धूम थी। दो आने का अच्छा खासा पत्ता मिल जाता था। जीवन ने अभी तक बम्बई के इस जगत्प्रसिद्ध पदार्थ को खाया भी नहीं था। इसलिये उसने दो आने में अपनी भूख मिटाने और एक दिव्य पदार्थ का रस लेने की सोची।

भेलपूरी वाले के छोटे से खोमचे पर काफी भीड़ थी। मराठी, गुजराती, पारसी, खोजे, गोन, उत्तरप्रदेशी, पंजाबी आदि का सांस्कृतिक समन्वय भेलपूरी में हो रहा था। कितनी ही देर इन्तजार के बाद जीवन का भी नम्बर आया। वह अपना पत्ता लेकर एक तरफ को चला आया। मुँह में उसने एक कौर रखा ही था कि जीभ जल उठी। कच्चा प्याज, खटाई और मिर्च तीनों ने मिल कर उसके नाक-कान-मुँह का सुर एक कर दिया। खाने में भी उसे कोई स्वाद नहीं मिला था पर उसने दो आने खर्चे थे और आज कल उसके लिये दो आने का अर्थ बहुत बड़ा था। वह जिस-किस तरह पूरा पत्ता साफ कर गया। तालु की यह हालत हो गयी कि जैसे किसी ने

गरम-गरम अंगारे से जला दिया हो। उसकी आँख नाक से पानी बह रहा था। उधर दूसरे लोग एक के बाद दूसरे पत्ते पर हाथ साफ कर रहे थे। जीवन की दुर्दशा देख कर एक पानीवाला आया। वह इस भेलपूरी वाले के पास ही बैठा करता था। उसने बिना माँगे एक गिलास उसे दे दिया। जीवन ने जेब से दो पैसे निकाले और उसे देने लगा। पानी वाला बोला, "नहीं भैया, नहीं भैया।"

"लो भी, हर्ज क्या है। आखिर सभी से तो पैसे लेते हो।" जीवन ने जोर दे कर कहा।

पानी वाला पुरबिया था बोला, "भैया हमारी, तरफ तो पानी पिलाना पुण्य मानते हैं। क्या करें पेट की खातिर यहाँ बम्बई में हम पानी भी बेचते हैं।"

उसने जीवन से पानी के पैसे नहीं लिए। जीवन उसकी सदाशयता से मुग्ध था। उसने उससे पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है भैया।"

उसने प्रेम से कहा, "रामदुलारे।"

वह अधेड़ उम्र का था। जीवन ने पूछा, "रहते कहाँ हो ?"

उसने बताया, "परेल में एक चाल है।"

"काम तुम कुछ और भी करते हो," जीवन ने पूछा।

"कपड़े की मिल में मजूर हूँ। जिन दिनों रात की पाली होती है उन दिनों पानी पिलाने चौपाटी पर चला आता हूँ।" उसने बताया।

जीवन ने चलते हुए कहा, "अच्छा, मुझे याद रखना भैया। मेरा नाम जीवन है।"

"जै राम जी की जीवन भैया।" रामदुलारे ने प्रेम पूर्वक हाथ जोड़ दिये।

जीवन उसकी मनुष्यता की मन ही मन प्रशंसा करता हुआ आगे बढ़ चला।

जीवन काफी दूर से चला आ रहा था। वह थक गया था फिर भी आराम के लिये कहीं बैठ न पाता। बैठते ही मन परेशान करने लगता। जीविका की समस्या उसे उलझती हुई दिखाई दे रही थी। क्या करे कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

वह पैदल ही मलाबार हिल्स की तरफ बढ़ गया और वहाँ से पूछता-पूछता हैंगिग गार्डन जा पहुँचा। गार्डन में खूब हरियाली और चहल-पहल थी। उसके एक ओर तो लहराता हुआ समुद्र दिखाई देता था और दूसरी ओर बिजली की बत्तियों में झलमलाती बम्बई। इस बगीचे को हैंगिग क्यों कहते हैं, उसकी समझ में नहीं आया। थोड़ी देर वह बगीचे के बेंच पर बैठा बैठा दूसरे लोगों को आते-जाते देखता रहा। उसे हर व्यक्ति सुखी और सम्पन्न लगता और हर व्यक्ति के प्रति उसके मन में कहीं ईर्ष्या का उदय होता। स्त्रियों को वह सस्पृह दृष्टि से देखता। कितने दिनों से वह किसी स्त्री से बात तक न कर पाया था। उसे अपना घर याद आता। सरिता याद आयी। उसके पास सम्पत्ति हो, सरिता हो तो वह कितना भाग्यशाली हो जाय। क्या यह सम्भव है ! क्या सरिता उसे अब भी याद करती है। वह मरा है या जिन्दा इतना भी तो उसे मालूम नहीं। जीवन भीतर ही-भीतर कातर हो उठा। उसी कातरता में वह अपनी जगह से उठ कर इधर-उधर फिरने लगा और फिर गार्डन के पास एक ऊँची जगह बने रेस्टोरा के पास आ पहुँचा। उसका मन कह रहा था कि उसके भीतर जाए आराम से एक जगह बैठे। अच्छी-अच्छी चीजें खाने को मँगवाए, और दुल्हिन-सी सजी बिजली की रोशनी में जगमगाती हुई बम्बई को निरखता हुआ तृप्तिपूर्वक खाए। पर उसकी जेब में पैसे इतने कम थे कि वह अपनी इस कल्पना को कार्यान्वित कर ही न सका और फिर चारों ओर से अपनी दृष्टि समेट मन-मन के भारी पैरों से लौट चला।

वह किधर जा रहा है इसका भी उसे बोध न था। धीरे-धीरे बढ़ रहा था। शरीर थक कर चकनाचूर हो उठा था। वह उसे ढोता हुआ आगे बढ़ता रहा। कई बार बीच-बीच में सड़क के किनारे के बेंचों पर बैठ कर सुस्ताने लगता और अन्त में परेशानी के साथ उठ कर बढ़ चलता।

इसी तरह चिन्तित भाव से चलते-चलते वह फिर चौपाटी पर आ पहुँचा उसका भी कोई ठिकाना है और उसे वहाँ पहुँचना चाहिए यह वह सोच ही नहीं पा रहा था।

चौपाटी अभी भी जनसंकुल थी। वह जनसंचार से कुछ हट कर एक

जगह साफ-सी रेती देख कर उस पर लेट गया। रेती ठंडी हो चुकी थी। आसमान में तारे जगमगा रहे थे। समुद्र में ज्वार आ रहा था। आसमान के आँगन में चाँद-चाँदनी से विलास कर रहा था। जीवन उस मनोरम वातावरण में भी अपने अभावों से घिरा था। थोड़ी देर में उसके आस-पास और भी कई लोग आ कर रेती पर लेट गए। कई आदमी 'चम्पी' 'चम्पी' चिल्लाते हुए एक-एक करके उसके पास से गुजर गए। उनके हाथ में तेल की शीशी और कन्धे पर मैली-सी चादर थी। जीवन चम्पी का अर्थ समझता ही न था। तभी उसने देखा कि उसी के पास वाले एक आदमी ने चम्पी वाले को बुलाया। चम्पी वाले से सिर में तेल मालिश और बदन चाँपने के आठ आने पैसे तय हुए। उसने बड़ी फुर्ती से रेते की एक ढेरी बनाई और फिर कन्धे पर से मैली-सी चादर उतार कर बिछा दी। रेते की ढेरी तकिए का काम देने लगी। पहले उसने सिर में तेल मला। फिर वह आदमी लेट गया। उसके बाद चम्पी वाला उसके बदन में मुट्ठियां भरने लगा। हाथ-पांव, कमर, बगल सभी को उसने चाँपा। वह आदमी सुख से लेटा रहा। उसका सुख देख कर जीवन का बदन और ज्यादा दुखने लगा। अगर वह सिर्फ चार आने ले कर उसका बदन दाब दे तो वह तैयार था। आध घण्टे के बाद चम्पी वाले ने उस आदमी से छुट्टी पाई। उसका मन अब उसकी चादर पर से उठने को कर ही नहीं रहा था। वह आराम से लेटे रहना चाहता था। पर चम्पी वाला अब अपने पैसे ले कर किसी दूसरे गाहक को ढूँढ़ने के फिराक में था। उसने जीवन को देख कर पूछा, "सेठ चम्पी कराएगा।"

सेठ ! यह शब्द जीवन को व्यंग्य-सा लगा। पर थोड़ी ही देर में यह व्यंग्य उसे प्रिय हो गया, "अगर मैं आठ आने खर्च कर सकूँ तो इस चम्पी वाले के लिये सेठ बन ही सकता हूँ। या शायद बम्बई में सब सेठ हैं। किसी के लिये यह चम्पी वाला भी सेठ होगा।"

समुद्री हवा कुछ और नम हो उठी थी। जीवन के अंगों के जोड़ और दर्द कर उठे। शरीर की थकान में वह शेष सब कुछ भूल गया। रह-रह कर मन में यही इच्छा उमड़ती कि कोई मुलायम हाथों से उसके दुखते जोड़ों को

दाब-दाब कर सुला दे। इतने में एक और चम्पी वाला आया। बोला, "सेठ चम्पी।"

इस बार जीवन ने उससे भाव-ताव भी नहीं किया। सेठ की ही तरह कह दिया, "हाँ।"

चम्पी वाला बोला, "सेठ चादर पर लेट जा।"

उस सपनों के सेठ ने तंद्रिल भाव से कह दिया, "ऐसे ही ठीक है।"

चम्पी वाला फुर्ती से अपने काम में लग गया। उसने जीवन की बाहों में मुट्ठियाँ भरीं। कमर को मला। बगलों को चाँपा। गर्दन और कन्धों में गुदगुदी-सी उठाते हुए अंगुली का संचालन किया। कमर के जोड़ को अंगूठों से मला। फिर चम्पी वाले के हाथ और नीचे पहुँचे। उसने उसकी जाँघों, पिंडलियों, पैर के हर जोड़ को खूब प्यार से दाबा। यह जीवन का सब से थका अङ्ग था। सुखद उपचार ने उसे निद्रित कर दिया। चम्पी वाले के हाथ उस पर नींद का जादू छोड़ते रहे। थोड़ी ही देर में जीवन गहरी नींद की गोद में चला गया।

उस रेती पर वह ऐसे सो रहा था जैसे फूलों की सेज पर पड़ा हो। समुद्र का किनारा राजभवन का सुख दे रहा था। नींद के साथ-साथ सपने भी उतर आये। वह अपार वैभव के लोक में सरिता के साथ बिहार करने लगा। सुख का सागर उसके चरणों में लहराता रहा। रात वैसी ही मधुर अनुभूतियों में बीत गयी।

जीवन की जब आँख खुली तो तारे सो चुके थे। सूरज ने प्राची का घूँघट उघाड़ कर उसके मदालस नयनों का राग पीना प्रारम्भ कर दिया था। हवा समुद्र की लहरों में अपनी तपिश बुझा कर एकदम ठंडी हो चुकी थी। आँख खुलते ही जीवन विस्मय में पड़ गया। उसने पूरी रात समुद्र की ही रेती पर बिता दी, इस पर उसे विश्वास न हो रहा था। शरीर उसे फूल-सा हल्का लग रहा था पर खड़े होते ही भूख की कमजोरी मालूम पड़ी। टाँगें सत्वहीन-सी लगीं और पेट कुछ माँग रहा था। जीवन ने अंगों को कड़ा किया और चलने को उद्यत हुआ। वह सोचने लगा कि उसे ऐसी नींद कैसे आ गयी ! वह कल रात की एक-एक बात मन ही मन दोहराने लगा।

उसे ख्याल आया कि चम्पी वाले ने उसके अंगों को जो सहलाया इसी से वह सो गया। पर वह उस से पैसे लिये बिना कैसे चला गया।

"पैसे..." यह शब्द दिमाग में आते ही वह जेबें टटोलने लगा। उसने अपने कुर्ते की बगल और छाती की जेबें जल्दी-जल्दी में कई बार टटोल डालीं। पर वहाँ तो कुछ न था। उसका रेलवे पास तक गायब हो चुका था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि किसने उसकी जेब एकदम साफ कर दी। अवश्य ही चम्पी वाला रहा होगा। पर उसने ऐसा क्यों किया ? क्यों थोड़े से पैसों के लिये ईमान डिगाया।

जीवन परेशान हो उठा। अब वह कैसे अन्धेरी पहुँचेगा यह एक समस्या थी। रेल भाड़े तक के लिये पैसे न थे। वह सोचता जा रहा था और मेरीन लाइन्स के स्टेशन की तरफ बढ़ता जा रहा था। स्टेशन पर पहुँच कर रुक गया। प्लेटफार्म पर जाने के लिये बाबू किसी को नहीं टोकता था। फिर भी जीवन की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। पैर उधर को बढ़ते ही डगमगाने लगते। उसे राजन याद आया। इस समय वह दिखाई दे जाता तो सारा मसला हल हो जाता। तभी अन्धेरी की तरफ जाने वाली गाड़ी आयी। जीवन के मन में उस समय गहरा संकल्प हुआ। गाड़ी दो मिनट रुक कर फिर चलने लगी। अब जीवन की कर्म बुद्धि जागी। उसने कुछ न सोचा और गाड़ी पकड़ने को दौड़ पड़ा। रेल रफ्तार में आ चुकी थी। फिर भी उसने दरवाजे के डंडे पकड़ कर फुटबोर्ड पर पाँव जमा दिया। पर अनभ्यासी होने के कारण वह झोंका न सम्हाल सका। तभी दरवाजे पर खड़े एक यात्री का सहारा पा कर वह सम्हल गया। उस यात्री ने तिरस्कार से जीवन को देखते हुए कहा, "खाली पीली मरने को चलती गाड़ी पकड़ता है।"

जीवन ने उस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अभी डब्बा लगभग खाली था। उसकी साँस फूल रही थी और टाँगें काँप रही थीं। वह पास ही की सीट पर निढाल हो कर बैठ गया। अपनी बेबसी पर उसे रोना आ रहा था। पर आँसू धूंट कर रह गया। गाड़ी हर स्टेशन पर रुकती हुई बढ़ती गयी। और जीवन हर स्टेशन पर टी टी की संभावना में अर्द्ध मृत होता गया और इसी तरह अन्धेरी स्टेशन भी आ गया।

अब जीवन के सामने फिर गेट पार करने की समस्या थी। इक्के-दुक्के यात्री पास दिखा कर गेट से गुजर रहे थे। वह गेट की ओर बढ़ते-बढ़ते अखबार के स्टाल पर रुक गया। अखबारों को उलटता-पुलटता वह कोई तरकीब सोच निकालने के फेर में था। तभी उसकी दृष्टि राजन पर पड़ी। आज उसे वह अन्यतम बन्धु ही जान पड़ा। उसने उमग कर उसे पुकारा, 'राजन।'

रात्रि जागरण से अलस और रूखे चेहरे को राजन ने आवाज सुन कर घुमाया। फिर अपने निराले अन्दाज में बोला, "अरे तुम। सुबह ही सुबह किस मनहूस से मिलने चल दिये।"

जीवन ने चोर की तरह कहा, "लौट रहा हूँ। मेरा पास खो गया है। बताओ कैसे निकलूँ।"

"हूँ," जीवन शरारत भरी आँखों को नचा कर मुसकुराया। बोला, "परवाह मत कर। मेरे पीछे-पीछे चला आ। बाबू अलबत्ते तो पास माँगने का नहीं। माँगे तो गर्दन हिला कर आगे बढ़ जाना। डरना झिझकना नहीं, नहीं तो पकड़े जाओगे।"

राजन आगे-आगे चल दिया। जीवन उसके पीछे-पीछे हो लिया पर दिल उसका बुरी तरह धड़क रहा था। बाबू ने इनसे पास माँगने की कोई कोशिश नहीं की। राजन गेट पर रुक कर बोला, "बाबू साहब, लगता है आप तो पास देखना पसन्द भी नहीं करते।"

बाबू ने गर्व से कहा, "अजी साहब यहाँ तो उड़ती चिड़िया देख कर पहचानने वालों में से हैं। पास वालों के पास देखने में क्या धरा है?"

इस पर राजन ने मुसकुरा कर कहा, "आपने भी गजब की आँखें पाई हैं।"

इतना कह कर राजन बढ़ चला। जीवन ने भी साथ ही गेट पार किया। राजन को गेट कीपर से बातें करते देख उसके पितर कूच कर गये। उसे उस पर गुस्सा भी बेहद आ रहा था। भला यह भी कोई वक्त मजाक का था। पर जब खैरियत से बाहर आ गये तो वह राजन के प्रति प्रशंसा से भर उठा। बोला, "गजब की हिम्मत है तुम्हारी भाई।"

राजन सगर्व बोला, "भाई अपना तो उसूल यही है कि दुनिया ठगो

मक्कर से, रोटी खाओ शक्कर से। तुम मुझ से थोड़ी-सी ट्रेनिंग ले लो तो फिर बिना पैसे बम्बई के ताज में भी खाना खा सकोगे।"

अब वे अपने मकान को जाने वाले कच्चे रास्ते पर आ गये थे। राजन ने शरारत के साथ पूछा, "तुम्हारे तो पर अभी से उग आये। बम्बई आये अभी जुम्मा-जुम्मा आठ दिन भी नहीं हुए कि रातें बाहर कटने लगीं।"

जीवन झेंप गया। सफाई में उसके पास कुछ था भी नहीं। फिर भी कह दिया, "नहीं, बात ऐसी तो नहीं।"

"बात जो भी हो, मुझे पसन्द है। जिन्दगी और है क्या? साला दिनेश फिल्म एक्टर बनने चला है। पर आदतें लड़कियों वाली हैं। मैं पूछता हूँ जिन्दगी का मजा लेना नहीं आता तो यहाँ आया क्यों?" राजन का वक्तव्य था।

जीवन ने कोई राय जाहिर नहीं की। उसकी निगाह नारियल के उन पेड़ों पर थी जिनके पीछे उसकी कोठरी थी। राजन बोलता गया, "देखो, घर पर भी सब इन्तजाम है। जब मन में हो तो हो सकता है। बाहर जाने की जरूरत नहीं। दूध वाला है न, उसी की लड़की। साली कल दस रुपये साफ कर गयी। पर मैंने भी······।"।

उसने कुछ जुगुप्सात्मक बातें कहीं। जीवन के कानों में तप्त तेल-सा पड़ गया। पर राजन कहता गया, "मगर गन्दी बहुत है। उसके बदन से गाय के गोबर की बदबू आती है। मैंने कहा उससे कि हरामजादी कभी नहा भी लिया कर, कपड़ों में साबुन भी लगा लिया कर। बोली, "सुगन्ध का साबन ला देना और तेल भी। पक्की हरामजादी है। मैंने कह दिया मिट्टी का तेल ला कर दूंगा। मुझे दस रुपये अखर रहे हैं। मैंने तो इतना बड़ा खतरा मोल ले कर कमाये थे, पर वह अपनी बदबू फैला कर ले गयी।"

जिस राजन को उसने रेलवे स्टेशन पर अपनी विपत्ति में देवदूत ही समझा था वही राजन अब उसे शैतान दिखाई दे रहा था। जीवन जल्दी से जल्दी कोठरी पहुँच जाना चाहता था, जिससे राजन की बातों से छुटकारा मिले। राजन रास्ते भर उसे जुगुप्सात्मक किस्से सुनाता ही रहा। आखिर कोठरी आ गयी। दिनेश दरवाजे पर खड़ा जीवन का बेकली से इन्तजार कर

रहा था। उसे राजन के साथ आता देख कर वह कुछ रूखा हो उठा। पर जीवन से कुछ न कह कर वह राजन से बोला, "राजन, तुम जीवन के पीछे क्यों पड़े हो। वह बम्बई में पेट पालने आया है। आवारागर्दी करने नहीं। इसे तो कम से कम अपने जैसा न बना डालो। बताओ, तुम ने इसे रात भर बाहर क्यों रखा?"

राजन ने कह दिया, "जीवन से पूछो।"

जीवन ने दिनेश को सारा किस्सा सुना दिया। सुन कर दिनेश बोला, "जीवन, तुम्हें बम्बई में रहने के लिये अधिक सावधानी की जरूरत है। तो तुम कल से भूखे ही हो।"

जीवन चुप रहा। दिनेश बोला, "देखो, मैं ग्वाले से कहता जा रहा हूँ। उसकी लड़की दूध गरम करके यहीं दे जायगी। और यह रुपया लो। दिन में सिन्धी के यहाँ जा कर खा आना। आज तुम आराम करना। कहीं किसी से खास मिलना न हो तो मत जाना। मैं खुद तुम्हारे लिये दो एक जगह आज जा रहा हूँ।"

जीवन ने दिनेश में एक स्नेहशील भाई के दर्शन किये। दिनेश चला गया। तीन चार मिनट में फिर लौटा और यह कहता हुआ कि मैं दूध के लिये कह आया हूँ, चला गया।

राजन ने उसके चले जाने पर कहा, "दिनेश कभी सुखी नहीं रह सकता।"

जीवन ने पूछा, "क्यों?"

"इसलिये कि वह जरूरत से ज्यादा भला है," इतना कह कर राजन कुछ ऐसे विलक्षण ढंग से हँसा कि जीवन समझ ही नहीं पाया कि उसकी हँसी में वेदना थी या व्यंग्य।

इसके बाद जीवन जल्दी ही निबट लिया। पेट खाली था, निबटना नाम को ही रहा। दाँत साफ किये। कुँए पर जा कर नहा भी लिया। राजन ने यह कह कर कि मुझे जगाना नहीं लम्बी तान ली। जीवन ने कहा, "तुम कुछ खाओगे नहीं।"

उसने कहा, "चाय मिल जाती तो काफी था। तब तक और जगा रह सकता हूँ।"

इतने में दूध वाले की लड़की एक हाथ में गरम दूध का गिलास और दूसरे में चाय का गिलास ले कर चली आयी। राजन चाय देख कर बोला, "दिनेश. सिर्फ दूसरों को फायदा पहुँचा सकता है।"

दूध का गिलास लड़की ने जीवन के इशारे पर एक कोने में रख दिया। राजन ने चाय का गिलास थामने के बजाय उसकी कलाई थाम ली। जीवन को उसका यह आचरण बहुत बुरा लगा। दूध वाले की लड़की जीवन को देख कर निर्लज्जता से मुसकुराई। बोली, "क्या देख रहे हो बाबू।"

राजन हँस पड़ा। लड़की भी हँसी। जीवन गुस्से से पागल हो उठा। लड़की तुरन्त चली गयी। जीवन चुपचाप दरी बिछा कर लेट गया। राजन ने कहा, "दूध तो पी लो।"

जीवन ने गुस्से.को छिपाते हुए कहा, "पी लूँगा।"

"पी भी लो, ठंडा हो जायगा।" राजन ने जोर दिया।

जीवन ने गिलास उठा लिया। गिलास मुँह के पास ले ही गया था कि वह गन्दी लड़की आँखों में उभर आयी। किसी तरह उसने एक घूँट भरी। गोबर की गन्ध से उसकी नाक फटने लगी। फिर भी कड़ुवी दवा की तरह उस दूध को पी ही गया और लेट गया। राजन के प्रति उसका मन और भी घृणा से भर उठा। पशु में और इसमें क्या अन्तर है यह सोचता-सोचता वह बेचैन हो उठा। पर राजन चाय पी कर आराम से खुर्राटे लेने लगा था। वैसे वह जो कुछ करता था उससे उसका सम्बन्ध केवल क्रियाकाल में रहता था, बाद में नहीं। जीवन प्रस्तुत को ले कर भविष्यत् की चिन्ता से भर उठा था। वह सोच रहा था कि जल्दी से जल्दी किसी ऐसी रहने की जगह की व्यवस्था कर ले जहाँ राजन न हो। पर कैसे? अभी तो उसकी हालत भिखारी से भी बदतर थी। उसके पास खाने तक को पैसा न था। फिर भला, रहने का इन्तजाम कैसे कर पाता।

इसी तरह सोचते-सोचते घंटों बीत गये। राजन दीन-दुनिया से बेसुध मजे की नींद ले रहा था। जीवन भूख का समाधान करने का विचार कर के खाने के लिये बाजार चलने को तैयार हुआ। वह कोठरी से बाहर आया

ही था कि दूधवाली लड़की की धीमी आवाज उसके कानों में पड़ी। वह कह रही थी, "ऐ बाबू, सुनो तो।"

जीवन इच्छा के विरुद्ध रुक गया। पूछा, "क्या है।"

"बाजार जा रहे हो," उसने पूछा।

जीवन ने नफरत से कहा, "क्या ?"

लड़की कोठरी के भीतर झाँकती हुई बोली, "मेरा एक काम कर दो। यह लो रुपये। मुझे खुसबूदार साबन और तेल ला दो।"

जीवन ने उसकी गन्दी सूरत देखी। हाथ में दस रुपये का नोट देखा। यह नोट राजन का दिया हुआ है यह भी उसे समझते देर न लगी। पर यह गन्दी लड़की क्यों परी बनने का ख्वाब देख रही है यह उसकी समझ में नहीं आया। उसने कह दिया, "राजन से मंगवा लेना।"

इतना कह कर वह बढ़ चला। लड़की आगे बढ़ कर बोली, "तुम मुझे बुरी समझते हो।"

जीवन के आग-सी लग गयी। गरम हो कर बोला, "तुम भली लड़की कहलाने लायक कहाँ हो ?"

"तुम्हें भी मेरे बदन से गोबर की बदबू आती है," लड़की ने सरलता से पूछा।

जीवन ने कड़े स्वर में कहा, "मुझे तुम्हारी खुशबू बदबू से कुछ नहीं लेना।"

"बाबू !" लड़की के स्वर में याचना थी।

"मेरे पीछे क्यों पड़ी हो," जीवन ने परेशान हो कर कहा, "अपने उसी बाबू से बात किया करो।"

मुझे वह अच्छा नहीं लगता। तंग ज्यादा करता है। ऊसके मुँह से शराब की बदबू आती है।" लड़की सहज भाव से कहती गयी।

"फिर भी तुम उसके पास जाती हो ?" जीवन ने तिरस्कार से कहा।

लड़की के पास जवाब न था। फिर भी कह बैठी, "वह रुपया देता है।"

जीवन के जी में आया कि लड़की के मुँह पर तमाचा जड़ दे। तीखे स्वर में बोला, "मुझ से बातें मत करो। मेरे पास किसी को देने को रुपया नहीं, जाओ भागो।"

इतना कह कर जीवन तेजी से चला गया। उसने मुड़ कर पीछे देखा भी नहीं। वापस कोठरी में आने का उसका मन ही नहीं कर रहा था। अन्धेरी के बाजार में उसने कुछ खाया। फिर बहुत देर तक निरुद्देश्य इधर-उधर घूमता रहा। समुद्र के किनारे तक हो आया। किसी तरह शाम हो गयी। अब फिर वह कोठरी की तरफ लौटने को मजबूर हुआ। जब पहुँचा तो राजन न था। दिनेश भी न लौटा था। लड़की जैसे उसके लौटने की राह देख रही थी। वह दरवाजा खोल भी न पाया था कि उसने पूछा, "मेरी चीज लाये बाबू।"

जीवन ने उसे कोई जवाब नहीं दिया। कोठरी के भीतर जा कर किवाड़ बन्द कर लिया। कोठरी में घुट हो गया, फिर भी उसने कितनी ही देर तक किवाड़ न खोले।

रात हो आयी। जीवन को नींद न आ रही थी। वह राजन और दिनेश की प्रतीक्षा कर रहा था। अब वह अपनी कोठरी के किवाड़ खोल कर चौखट पर बैठा था। कोठरी में अन्धेरा था। बाहर भी अन्धेरा था। तारों का सम्मिलित प्रयत्न भी धरती के अँन्धेरे को दूर न कर पा रहा था। थोड़ी ही देर में उसे नींद आने लगी थी। कोठरी में उमस थी। बाहर सोने में ओस से ज्यादा डर दूध वाले की लड़की का था। आखिर वह हिम्मत करके बाहर चौखट का सिरहाना बना कर सो गया।

लेटते ही उसे नींद आ गयी। कितनी ही देर तक निर्विघ्न सोया रहा। मध्य रात्रि में उसने किसी के स्पर्श का अनुभव किया। आँखें खोलीं देखा, वही लड़की थी। उसने चाहा कि चिल्ला पड़े। पर चिल्ला न सका। कोठरी के भीतर देखा, सहसा कुछ दिखाई न दिया अँधियारे में। वह उठ कर भीतर चला आया। वहाँ कोई न था। लड़की दरवाजे पर ही खड़ी थी। उसने उससे डपट कर पूछा, "तुम इस वक्त यहाँ क्यों आयीं ?"

लड़की ने धीरे से कहा, "नींद नहीं आ रही थी।"

जीवन ने फिर पूछा, "अगर कोई देख ले तो।"

लड़की ने इसका कोई जवाब न दिया। वह फिर बोला, "तुम्हारे मा-बाप ही देख लें तो ?"

लड़की चुप रही ।

"अच्छा तुम अब चली जाओ । मुझे ऐसी हरकतें पसन्द नहीं ।" जीवन अवाक् रह गया । लड़की की हिम्मत पर उसे हैरानी थी । इच्छा हुई कि उसके मुँह पर जोर से तमाचा जड़ दे । पर हाथ उठा ही नहीं । उसका रोष ही उसकी विवशता बन गया । उसने पूछा, "तुम मेरे पीछे क्यों पड़ी हो ।"

"तुम मुझे अच्छे लगते हो," गोबर की दुर्गन्ध से भरी, भूसे जैसे बालों वाली, कटहल जैसी गदराई उस लड़की ने कहा ।

"राजन भी तो तुम्हें अच्छा लगता है," जीवन सहसा कह बैठा ।

"नहीं । वह तो मुझे पैसे देता है । मैं तो तुम से कुछ नहीं माँगती," लड़की ने धीमे स्वर में कहा ।

"पर मुझे तुम से नफरत है ।" जीवन ने उग्रता पूर्वक कहा ।

वह दीनता के साथ बोली, "मैं सुगन्ध वाले साबन से नहाऊँगी । खूसबूदार तेल लगाऊँगी । राजन से बात नहीं करूँगी । बोलो, तब तो मुझ से नफरत नहीं करोगे ।"

जीवन कुछ ठंडा हो कर बोला, "तुम चाहती हो कि मैं यहाँ से चला जाऊँ ।"

लड़की चुप रह गयी । क्षण भर रुकी रही और फिर उल्टे पाँवों चली गयी । जीवन ने राहत की साँस ली । वह फिर अपने बिस्तर पर आ कर लेट गया । पर नींद न आ रही थी । दिन की निर्लज्ज लड़की और रात्रि की याचना भरी लड़की में वह कहीं सामंजस्य स्थापित ही नहीं कर पा रहा था । थोड़ी ही देर में दिनेश भी आ गया । जीवन ने बार-बार चेष्टा की कि उसे सब कुछ बता दे पर लड़की के अन्तिम व्यवहार ने उसे भीतर ही भीतर बदल दिया था । वह अच्छी बनना चाहती है । क्यों न अच्छी बने । पर उसका पति भी है । राजन से अनुचित सम्बन्ध भी हैं । वह कैसे अच्छी बन सकती है ?

वह शायद मुझे प्यार करती है, जीवन के मन में आया । पर दूसरे ही क्षण वह सिहर उठा । प्यार और उस घिनौनी चारित्रहीना लड़की को वह

साथ-साथ बिठा न सका। वह मन ही मन दृढ़ता के साथ कह उठा, "नहीं, प्यार नहीं, प्यार कभी नहीं।"

प्यार के आवरण में वह घिनौनी लड़की उसे अपने समीप आती जान पड़ी। यह उसके लिये असह्य था। राजन पशु है। कैसे उससे एक हो जाता है। उसका मुँह बकबका उठा।

दिनेश ने उसे सोया हुआ जान कर कुछ नहीं कहा। उसने अपना बिस्तर झाड़ा और उस पर लेट गया। थोड़ी देर में उसकी नाक बजने लगी। उसे नींद आ गयी थी। पर जीवन जाग ही रहा था। उसे वह रात भी याद आयी जब वह कामातुर हो कर उस गन्दे कोठे पर जा पहुँचा था। अन्धकार में वह जैसे बदबूदार कीचड़ में धँस गया था। पर वहाँ तो खुद ही धँसने पहुँचा था। उस दिन के जीवन और आज की इस लड़की में क्या कहीं कुछ अन्तर है। उसकी समझ में न आ रहा था।

रात को नाम मात्र की नींद के बाद भी जीवन सुबह जल्दी ही उठ गया और उठ कर मैदान चला गया। वहाँ से वह लौट रहा था कि वही लड़की उसे मिली। उसके एक हाथ में दूध का गिलास था। दूसरे में जल का लोटा। बोली, "हाथ धो लो, और यह दूध पी लो।"

जीवन ने उसे देखा, उसके शब्दों को सुना भी, पर रुका नहीं। दिन में वह लड़की और भी भद्दी लग रही थी। उसे लगा कि उसके हाथ का दूध पी कर जैसे वह भी गन्दगी से भर उठेगा। वह बिना रुके, बिना बोले, कुँए पर चला आया। उसने यह भी नहीं देखा कि लड़की की आँखों में आँसू थे।

सुबह दिनेश जब सो कर उठा तो उसने जीवन से कहा, "तुम ट्यूशन करोगे जीवन।"

जीवन ने निराशा से पूछा, "क्या मिल सकेगी ?"

"हाँ," दिनेश ने कहा, "मेरे एक परिचित ने बताया है। एक मारवाड़ी सेठ हैं। उसके दो बच्चें हैं। एक पाँच साल का और दूसरा सात साल का। उनके लिये वह ट्यूटर चाहता है। डेढ़ सौ रुपये महीना और साथ ही खाना भी। सिर्फ तुम्हें अपने रहने की व्यवस्था करनी होगी।"

जीवन ने खुश हो कर पूछा, "सच ? कब से ? मैं तैयार हूँ।"

"आज दस तारीख है," दिनेश ने कहा, "इसी महीने के अन्त से ।"

बीस रोज । बिना रोजी के बीस रोज अनन्त से हो कर उसकी आँखों के आगे आ गये । वह सोचने लगा, "इन बीस रोज में तो बहुत कुछ हो सकता है । यह नौकरी भी हाथ से निकल जा सकती है । निराशा उसकी आँखों में चमक उठी ।"

दिनेश बोला, "इसे तुम पक्की बात समझो । वह आज कल खुद यहीं नौकरी कर रहा है । पर उसे अगले महीने से एक और अच्छी नौकरी मिल गयी है । सेठ ने उसी से कह दिया है कि किसी को रखा दे । सेठ उसकी बात मानता है ।"

इसके बाद दिनेश ने उससे पूछा, "आज का तुम्हारा क्या प्रोग्राम है ।"

जीवन ने कहा, "मुझे दस बजे रेडियो स्टेशन जाना है और उसके बाद दिन में कभी भी धीरू भाई से भी मिलना है ।"

"मैं भी तुम्हारे साथ चलूँ," दिनेश ने पूछा ।

"जरूर," जीवन ने खुश हो कर कहा ।

उस दिन रेडियो स्टेशन जाना जीवन के लिये बड़ा ही अच्छा रहा। उस मराठी अधिकारी ने बड़े प्रेम से उससे बातें की । कहा, "मुझे आपकी चीजें पसन्द आयीं । मुझे उम्मीद है कि आप हमारे काम की चीजें लिख सकेंगे । यह बताइये, यदि कल ही आपसे कुछ माँगा जाय तो दे सकेंगे ?"

"कल," जीवन की आँखों में खुशी नाच गयी, "आज्ञा कीजिये ।"

वह बोला, "हमें प्रेमचन्द पर एक टाक चाहिए । जो सज्जन देने वाले थे, वे किसी कारणवश दे नहीं पायँगे । अगर आप तैयार हों, तो कल रात को आठ बजे···।"

जीवन एकदम तैयार था । उसने उन मराठी सज्जन को धन्यवाद दिया । अभी तक वह उनका नाम भी नहीं जानता था । बाहर आ कर उस ने चपरासी से पूछा,···उसने बताया, "जोगलेकर साहब ।"

अब जीवन आज ही टाक लिख लेना चाहता था । वह खुशी-खुशी धीरू भाई की तरफ चला । रास्ते में दिनेश से बोला, "शुरूआत तो अच्छी हुई है ।"

दिनेश ने हँस कर कहा, "पर धीरू भाई तो बेमिसाल आदमी है। उसकी शुरूआत तो उसी से होती है।"

वही हुआ। धीरू भाई नहीं मिले। प्रतीक्षा की। दो घंटे बाद उन्हें बात करने की फुर्सत हुई। कह दिया कि अभी कहानी पढ़ी नहीं। इधर बहुत व्यस्त हैं। जल्दी पढ़ भी न सकेंगे। जल्दी हो तो अपनी कहानी ले जाइये।

पहली बार जब जीवन इन धीरू भाई से मिला था तो उन्होंने खूब मीठी-मीठी बातें की थीं। पर आज तो उनके पास बात करने का वक्त तक न था। जीवन ने दिनेश की ओर देखा। दिनेश का संकेत पा कर बोला, "अच्छा तो मेरी कहानी दे दीजिये।"

"तो अगले हफ्ते में कभी आ कर ले जाइयगा। कहानी यहाँ नहीं है घर पर है," धीरू भाई ने कह दिया।

जीवन ने दबी जबान से पूछा, "क्या कल आने से काम नहीं चलेगा? आप कल लेते आयँ तो बड़ी कृपा हो।"

धीरू भाई कुछ बिगड़ कर बोले, "आप तो बड़े बेसब्र हैं। कहानी मुझे ढूंढ़नी पड़ेगी। जाने कहाँ रख दी है। आप अगले हफ्ते में आयें। नमस्कार।"

अपमानित जीवन दिनेश के साथ-साथ बाहर चला आया। दिनेश ने उसके कन्धे पर सहानुभूति का हाथ रख कर कहा, "दुख मत करना जीवन। ऐसा अपमान तो यहाँ भले आदमियों को नित भोगना पड़ता है। फिर धीरू भाई से तो यही उम्मीद भी थी। इस कहानी को तुम मान लो कि समुद्र में डूब गयी।"

जीवन बोला, "मैंने भूल की जो फिल्म के बारे में सपना संजोया। अब मैं इस ओर प्रयत्न करने का ही नहीं। यहाँ आदमी को आदमी ही नहीं समझा जाता। मैं सोचता था कि कला का क्षेत्र है। इन्सानियत और सहानुभूति के दर्शन होंगे।"

"तुमने गलत सोचा," जीवन ने कहा, "जब कला पेशा हो जाती है तो उसका शिव अंश निकल जाता है। इन्सानियत उसमें नहीं रह जाती और यह बात हर पेशे के बारे में सच है।"

उसके बाद दोनों ही वापस चले आये। शाम हो आयी थी। राजन अभी तक नहीं लौटा था। जब ये लोग पहुँचे तो दूध वाले की लड़की इनके दरवाजे के पास ही बैठी थी। इन्हें देखते ही वह चुपचाप लौट गयी। दिनेश ने कोठरी का दरवाजा खोलते हुए कहा, "इस लड़की को देख कर मुझे कुछ अचरज हो रहा है जीवन। बड़ी गन्दी और कमीनी है। इसकी आँखों में हमेशा मैंने नंगी वासना देखी है और इसकी चेष्टाएँ ऐसी रही हैं कि आदमी देख कर घृणा से भर उठे। पर आज•••।"

दिनेश ने अपना वाक्य स्वतः अधूरा छोड़ दिया। जीवन ने कोई जिज्ञासा नहीं की। कुछ बातें उसके होठों पर आयीं, पर लौट गयीं।

दिन भर दोनों ने मामूली जलपान से अधिक कुछ न खाया था। थकान और भूख दोनों पर ही हावी थी। फिर भी भोजन की कोई प्रवृत्ति नहीं हो रही थी। दोनों निढाल से फर्श पर लेट गये। दिनेश जल्दी ही ऊँघने लगा। जीवन जीविका की चिन्ता में व्यस्त था। बीच-बीच में भाभी याद आती। सरिता याद आती। और दूध वाले की लड़की भी याद आ जाती। पर तब उसका मन वितृष्णा से भर उठता।

कोई दो घंटे बाद दिनेश उठा। वह स्टूडियो जाने की तैयारी में लग गया। तैयार हो कर जीवन से बोला, "चलो, तुम भी बाजार तक चलो, कुछ खा आना।"

खाना खा कर दिनेश स्टूडियो चला गया और जीवन अपनी कोठरी पर लौट आया। हमेशा की तरह उसने बाहर बिस्तर बिछाया। आज मच्छर कुछ अधिक थे और हवा गुम थी। नींद न आ रही थी। तभी उसे ध्यान आया कि क्यों न रेडियो टाक लिख ले। पर रोशनी की समस्या थी। शायद मोमबत्ती का कोई टुकड़ा हो। उसने मोमबत्ती तो ढूँढ़ निकाली पर दियासलाई नहीं मिली। वह फिर उदास-सा बाहर आ कर बैठ गया। कई बार उसके मन में आया कि दियासलाई ग्वाले से माँग लाये। पर उसकी लड़की का ध्यान आते ही इरादा बदल जाता। मोमबत्ती उसके हाथ में थी, जिसे वह अनायास ही अंगुलियों में नचा रहा था। तभी दूधवाले की लड़की कुँए पर आयी। कुँए पर से कोठरी

का दरवाजा साफ दिखाई देता था। उसने जीवन को देखा। कुएँ में डोल डाला। बीच-बीच में जीवन को देखती रही। डोल भरा और खींचने लगी। साथ ही जीवन को देख लेती। डोल उसने पानी की बाल्टी में रीत दिया और फिर कुएँ में फाँस दिया। पर इस बार खाली डोल ही बाहर निकाल कर जीवन के पास चली आयी। आते ही बोली, "कुछ चाहिए बाबू।"

स्वर में विनय थी। जीवन ने फिर भी कह दिया, "नहीं।"

"दियासलाई लाऊँ," लड़की ने फिर कहा, मोमबत्ती पर उसकी निगाह थी।

जीवन झल्ला उठा, "क्यों मेरा सिर खाती हो। दियासलाई से क्या मैं इस कोठरी में आग लगाऊँगा।"

लड़की ने फिर भी धीरे से कहा, "मोमबत्ती जला लेना।"

जीवन ने आपे से बाहर हो कर कहा, "तुम मेरे सामने मत आया करो। मुझे बेहयाई पसन्द नहीं। तुम्हारे पास दियासलाई हो तो अपनी बेहयाई को आग लगा दो।"

"सच बाबू," लड़की ने अजीब स्वर में पूछा।

जीवन उस समय धैर्य खो बैठा था। उसने चिल्ला कर कहा, "बेहया।"

वह आवाज शून्य में फैल गयी। लड़की का बाप गाय-भैंसों में व्यस्त था। कुछ सुना ही नहीं। अन्धी माँ ने सोचा, कोई किसी को डाँट रहा होगा। लड़की की आँखों में आँसू भर आये। भीगे स्वर में बोली, "बाबू, क्या अब मैं अच्छी नहीं बन सकती।"

जीवन ने रुखाई से कह दिया, "अब अच्छी तुम मर कर बनोगी।"

"तो मैं मर जाऊँ बाबू जी," लड़की ने फिर दीनता से पूछा।

जीवन चुप रहा। वह क्षण भर रुक कर चली गयी। जीवन की समझ में न आ रहा था कि क्या करे। इस घिनौनी लड़की से भाग कर कहाँ चला जाए। उसका कोई दूसरा ठौर भी तो नहीं। वह सोचते-सोचते परेशान हो उठा। पाँच मिनट बाद लड़की फिर आयी और दियासलाई फेंक कर लौट गयी। पर जीवन ने उसे छुआ भी नहीं। मोमबत्ती को उसने फिर

कोठरी में फेंक दिया और मन ही मन उलझता-सा लेट गया। पर वहाँ उसे नींद नहीं आयी खटमल और मच्छरों के संयुक्त मोर्चे ने उसकी तबाही बुला दी। वह उठ कर बैठ गया और हाथ पैर मार कर मच्छर उड़ाने लगा। थोड़ी देर बाद फिर लेट गया। इसी तरह लेट कर, बैठ कर मच्छरों को हाथों से उड़ा-उड़ा कर उसने आधी रात बिता दी। तभी उसे हल्के पाँवों की आहट सुनाई दी। और साथ ही कोठरी के दरवाजे पर एक स्त्री-आकृति दिखाई दी। लड़की ही है, उसने देख लिया। वह दरवाजे के पास ही खड़ी रही। फिर बोली, "तुम्हें नींद नहीं आ रही बाबू।"

जीवन वैसे ही उससे तंग था। चिढ़ कर बोला, "तुम, तुम मेरे पीछे क्यों पड़ी हो? जा कर सोती क्यों नहीं?"

"मेरे देखने से भी तुम्हारा कुछ बिगड़ जायगा। अच्छा लो, मैं चली जाऊँगी। तुम बाहर आ कर सो जाओ। अन्दर तुम से सोया नहीं जायगा।" इतना कह कर भी लड़की जहाँ की तहाँ खड़ी रही।

जीवन उसे दिखाने को बिस्तर पर लेट गया और सोने का अभिनय करने लगा। मन ही मन वह सोच रहा था कि कैसे यह लड़की उसकी हर बात समझ लेती है—मुझे दियासलाई चाहिए। मुझे नींद नहीं आ रही है।

तभी जीवन ने भारी पाँवों की चाप सुनी। उसने समझ लिया कि राजन आ रहा है। लड़की दरवाजे पर ही खड़ी थी। जीवन का मन बैठने लगा। राजन जाने क्या सोचेगा। पर राजन सोचता कम था। उसने दरवाजे पर लड़की को देखा। उसे कन्धे पर से पकड़ कर बोला, "अरी तू है। इन्तजार कर रही है। चल भीतर चल।"

लड़की ने उसका हाथ हटाते हुए कहा, "मुझे मत छुओ।"

राजन हँसा। नयी बात थी। हँसते हुए बोला, "अक्ख: चुड़ैलों-सी सूरत, परियों-से मिजाज। अब तुझे भी कहना आ गया—छुओ मत। रुपये लेगी। नोट हैं। पाँच-पाँच के तीन।"

"अपने रुपयों को आग लगा दो," लड़की ने तनिक रोष के साथ कहा।

राजन ने शराब पी रखी थी। विवेक उसका स्त्री को देख कर वैसे ही आधा रह जाता है। उसने लड़की का हाथ पकड़ा। कोठरी के भीतर

खींचता हुआ बोला, "चुपचाप अन्दर चली चल। बन मत हरामजादी। यहां क्या अपने बाप के इन्तजार में खड़ी थी।"

इतना कह कर राजन ने जोर से हाथ खींच कर लड़की को कोठरी के भीतर धकेल दिया। लड़की सामने ही पड़े जीवन के ऊपर जा पड़ी। जीवन जो अब तक सोने का बहाना कर रहा था, "क्या है ? क्या है ?" कहता हुआ उठ बैठा।

राजन ने कहा, "कुछ नहीं सो जाओ। तुम्हारे जानने लायक कुछ नहीं।"

इतना कह कर राजन ने लड़की को कोने में बिछे अपने बिस्तरे की तरफ खींचा। पर लड़की ने जीवन को पकड़ लिया था। उसके साथ-साथ जीवन भी खिचने लगा। जीवन कुछ बिगड़ उठा। बोला, "राजन, यह क्या कर रहे हो।"

राजन होश में भी कोई मर्यादा न मानता था। इस वक्त तो वह नशे में था। बोला, "चिल्लाओ, मत जीवन। यह हरामजादी अब नखरे करने लगी है। अभी ठीक किये देता हूँ।"

जीवन से सहा न गया। वह उठ खड़ा हुआ। उसने राजन को धक्का देकर लड़की को छुड़ा लिया और कोठरी के बाहर कर दिया। लड़की सुबकती हुई वहाँ से चली गयी। जीवन अपना बिस्तर भीतर से बाहर ले आया। राजन अनापशनाप बकता रहा। जीवन ने फिर उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। पर उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि आज लड़की को राजन की बात पर एतराज क्यों हुआ ?

शेष रात ठीक से बीत गयी। अगले दिन जीवन सुबह से ही अपनी टाक लिखने में व्यस्त रहा। राजन सो ही रहा था। दिनेश भी दिन निकले आया और आते ही लेट गया। कोई दोपहर तक वह और राजन दोनों सोते रहे। जीवन लिखता रहा। फिर दिनेश उठा। निबटा। जीवन का लिखना अभी समाप्त नहीं हुआ था।

जब उसका लिखना समाप्त हुआ तो राजन भी जाग चुका था। जीवन को देख कर वह मुसकुराया। रात के कांड का उसे कोई मलाल न था। तीन बजे के करीब जाकर तीनों ने सिन्धी के यहाँ खाना खाया।

टॉक उसकी रात के आठ बजे थी। पर वह जल्दी से जल्दी पहुँच कर विलम्ब से पहुँचने की आशंका को मिटा डालना चाहता था। छह बजे ही वह रेडियो स्टेशन पहुँच गया। जोगलेकर साहब अभी अपने ही कमरे में थे। जीवन को देख कर उन्होंने खुशी जाहिर की। वार्ता भी उन्हें पसन्द आयी। शेष औपचारिकता भी उन्होंने पूरी कर ली और इस सब कुछ में एक घंटा और बीत गया। फिर उन्होंने चाय मंगाई और साथ में टोस्ट। जीवन मन ही मन सोच रहा था कि उसकी टॉक के ब्राडकास्ट होते ही हिन्दी जगत में उसका नाम अपरिचित नहीं रह जायगा। घर-घर में उसकी कीर्ति फैल जाएगी। जल्दी ही वह एक सम्मानित लेखक समझा जाने लगेगा। प्रकाशक भी उसे आसानी से मिल जाया करेंगे। फिल्म वाले भी उसकी कद्र करने लगेंगे। पर यह स्वप्न ब्राडकास्ट के समाप्त होते ही समाप्त हो गया जब उसने देखा कि कोई चमत्कार नहीं हुआ। उसकी कीर्ति को चार चाँद नहीं लगे। वह अब भी वहीं है, जहाँ ब्राडकास्ट से पहले था।

पर इस समय उसकी जेब में पच्चीस रुपये का चेक था। यह उसकी बम्बई की पहली कमाई थी। उन पच्चीस रुपयों ने उसे असीम बल दिया। उनके आधार पर उसने जाने क्या-क्या कल्पना कर डाली। वह रात भी उसने सुख से बितायी। न तो मच्छरों ने उसे सताया, न खटमलों ने। दूधवाली लड़की की घिनौनी सूरत भी उससे दूर रही। अगले दिन जब वह उठा तब भी खुश था। आज उसे चेक भुना कर ल आना था। उसमें से वह कुछ रुपया दिनेश को दे देगा। अपना रेल पास बनवायगा और शेष सम्हाल कर रखेगा जिससे राजन के हाथ न लगे।

सुबह उसने दिनेश से कह कर ग्वाल के यहाँ से दूध भी मंगवाया। दिनेश उसकी खुशी में खुश था। वह लड़की भी जीवन को दिन में कई बार दिखाई दी, पर उसे देख कर उसे रोष नहीं आया। एक बार तो यहाँ तक सोच डाला कि वह उसे भी नहाने का साबुन ला कर दे देगा।

पर उसकी यह खुशी ग्यारह बजे मर गयी। तभी डाकिया एक कार्ड दे गया था। भाभी की चिट्ठी थी। लिखा था, "बहुत तंगी में हूँ। पास

कुछ नहीं रहा। रोटी के लाले पड़ रहे हैं। तुम्हारा कहीं काम लगा? कैसे हो। आशीर्वाद इत्यादि···।"

पत्र पढ़ते ही जीवन सन्न रह गया। अभाव विराट हो उठा। वे पच्चीस रुपये उसे अब कोई खुशी नहीं दे पा रहे थे। उसे तो आज पच्चीस सौ ही नहीं पच्चीस हजार की जरूरत थी जिससे उस विराट अभाव को मिटा सके। वह अपने बारे में सोचता। भाभी के बारे में सोचता। और सोच-सोच कर तीव्र निराशा का अनुभव करने लगता। वह सोचता रहा, "भाभी समझती हैं, मैं बड़े शहर में हूँ। सुख से रह रहा होऊँगा। कोई कमी नहीं होगी। पत्र पाते ही रुपये भेज दूँगा। पर···।"

दिनेश ने उसका उदास मुख देखा। उसकी खुशी को लुटते देख उसे अत्यधिक रंज हुआ। उसने बिना पूछे उसके हाथ से कार्ड ले लिया। जीवन ने भी कोई विरोध नहीं किया। उसे पढ़ कर वह भी गम्भीर हो उठा फिर बोला, "चिन्ता मत करो जीवन। ये रुपये आज ही भाभी को भेज दो। शीघ्र ही और व्यवस्था हो जायगी। ईश्वर में विश्वास रखो।"

जीवन ने पीड़ित स्वर में कहा, "तुम ईश्वर में विश्वास रख पाते हो।"

दिनेश बोला, "वही मेरा सबसे बड़ा सहारा है। ईश्वर में विश्वास रखने का मतलब है अपने आप में विश्वास। जिस दिन यह विश्वास टूट जायगा क्या हम जी भी सकेंगे।"

जीवन को उस समय उसकी बात में कोई महत्व नहीं दिखाई दिया। वह वहाँ से बैंक गया। चैक भुनाया और घर मनीआर्डर कर दिया। मनीआर्डर कमीशन भी दिनेश के दिये पैसों में से दिया।

उस मनीआर्डर को भेजते हुए जीवन को ठीक ऐसा लगा जैसे कोई भूखा कहीं से एक रोटी पाकर खाने बैठा हो, तभी किसी दूसरे भूखे को खाते देख कर खा न सका हो और वह रोटी उसे देकर खुद उपवास करने लगा हो।

पर इस उपवास में कुछ खुशी भी थी। थोड़ा-सा सन्तोष भी था। क्षण भर को भाभी खुश हो सकेंगी और उन्हें यह प्रत्यय भी हो जायगा कि उनका देवर बम्बई में है, जहाँ से वह बहुत-बहुत धन कमा कर भेजेगा, जिससे वे सुख के महल खड़े कर सकेंगी।

मत्त प्रभंजन

जीवन मनीआर्डर लगा कर लौटा तो रास्ते में ही उसकी तबीयत खराब हो गयी। घर पहुँचते न पहुँचते वह ज्वर का अनुभव करने लगा। सिर में अलग दर्द था। वह रात के सलवट पड़े बिस्तर पर ही आकर लेट गया। ज्वर के साथ-साथ उसे जाड़ा लग रहा था। घर पर कोई और न था, न दिनेश, न राजन। उसे जितने कपड़े कोठरी में मिले सब अपने ऊपर डाल लिये। पर जाड़ा जाने का नाम न ले रहा था। ज्वर भी बढ़ता गया। अन्त में ज्यों-ज्यों ज्वर बढ़ता गया, जाड़ा कम होता गया। बढ़ते-बढ़ते ज्वर ने उसे बेहोश कर डाला। उस बेहोशी में वह बड़बड़ा उठता। कभी वेदना से कराह उठता।

तीसरे पहर का वक्त था। दूध वाले की लड़की गाय-भैंसों की सानी के लिये कुँए से पानी भरने आती थी। बाप बाजार गया हुआ था। कुएँ में डोल फँसा ही था कि जीवन की कराहने की आवाज सुनाई दी। उसने तत्काल डोल वापस खींचा और तेजी से जीवन की कोठरी की ओर बढ़ी। रस्सी उसके पैरों में उलझी हुई थी। इसका उसे ध्यान नहीं था। फलतः झटका खाकर कुँए की जगत से नीचे गिर पड़ी। उसकी बाँई कोहनी छिल गयी और गली हुई धोती घुटने पर से जोर पड़ कर फट गयी। पर उसे न तो चोट की परवाह थी और न धोती फटने की। वह कोठरी के दरवाजे पर आयी। किवाड़ आधे ही ढुके थे। उसने धीमे से उन्हें खोला और जो दृश्य देखा उससे वह सब कुछ भूल गयी। जीवन का सिर तकिये के नीचे पड़ा था। ओढ़ने वाले कपड़े अस्तव्यस्त हो रहे थे। वह बेहोशी में तप्त होंठों को चाटता और पानी-पानी की कराह लगाता। लड़की ने तत्काल उसका सिर ठीक किया कपड़े ढंग से ओढ़ाए। दौड़ कर पानी ले आयी। किसी तरह उसे सहारा दे कर बैठाया और पानी पिलाया। बेसुध जीवन चुपचाप कई घूंट जल पी गया और फिर लेट गया।

लड़की को सानी करनी थी। वह ज्यादा देर तक नहीं रुक सकती थी। बाप के आने के पहले न की तो वह बिगड़ेगा। ज्यादा ताव आ गया तो मार भी बैठेगा। वह बड़ी मुश्किल से कोठरी से बाहर निकली। किवाड़ धीमे से ढुका दिये। आज उसे कुछ प्रसन्नता थी। उसका स्पर्श कितना सुखद था। उसका चेहरा कितना भोला था। उसे अपना पति याद आया। वह आयु में उससे दुगुना और कठोर स्वभाव का व्यक्ति था। उसके प्यार में पशुता अधिक थी। लड़की उससे प्यार में थोड़ी-सी कोमलता की अपेक्षा करती। उसके भद्दे शरीर में एक ऐसी आत्मा थी जो सुन्दरता की ओर अधिक आकृष्ट होती थी। उसे फिर राजन मिला। पति से वह उसे अच्छा लगता था। पर उसके मुँह से हरवक्त शराब की बदबू आती थी और वह भी उसे प्यार थोड़े ही करता था। अपनी तृप्ति के बाद वह उसे गन्दगी की तरह अपने से अलग कर देता था। लड़की सोचा करती कि वह तब भी उससे प्रेम की बातें करे। जीवन उसे उन दोनों से भिन्न लगा। पर वह तो उसकी ओर आँख भी नहीं उठाता। अगर जीवन उसे थोड़ा-सा भी प्यार दे दे तो ?

लड़की ने भूसा नाँद में डाला। उस पर भीजी हुई खली डाली। थोड़ा-सा चने का रदावा डाला। फिर ऊपर से पानी डाल कर सानने लगी। कोहनी तक उसकी बाँहें भूसे से सन गयी। उलझी हुई मैली लटें असंयत होकर मुख पर आ जातीं जिन्हें कोहनी से हटाने की चेष्टा में मुँह पर भी थोड़ी-सी सानी लग जाती। उसका कुरूप मुँह और कुरूप हो उठा, पर मन में वह एक सुन्दर स्वप्न संजो रही थी। जिस पुरुष का सम्पर्क उसे अभीष्ट था वह आज रोग के अधीन था। वह चाहती थी कि वह कभी अच्छा न हो जिससे उसे अपने ढंग से पा तो सके।

प्यार शायद सबसे उच्छृंखल वासना है। वह मर्यादा नहीं जानता। कोई प्यार करते हुए यह नहीं सोचता कि उसका प्रिय दुष्प्राप्य है, उसकी सीमाएँ वहाँ तक नहीं पहुँच सकतीं। फिर भी प्यार हो जाता है। कभी प्यार ऐसे व्यक्ति से हो जाता है कि उसकी नीचाई तक उतरना साध्य नहीं रहता। दूधवाले की लड़की ने उस ऊँचाई को प्यार किया था जिसे वह

छू भी नहीं सकती थी। वह विवाहिता थी, कुरूपा थी, चरित्रहीना थी। फिर भी प्यार करने लगी थी।

सानी के बाद भी वह जीवन के पास न जा सकी थी। बाप आ गया था। फिर दूसरे काम भी उसने बता दिये थे। इसी तरह अन्धेरा हो गया। उसके मन की पीड़ा गहन हो उठी। वह जीवन को एक बार जाकर देख आने को विकल थी। पर अभी उसे बाप के साथ गाय भैंसों के दुहने के वक्त भी रहना है। वैसे बाप उसके बिना भी काम चला लेता है। पर अगर कुछ हो जाता है तो फिर लड़की को मारता है। ब्याह हो जाने के बाद भी उसे पीटने में कोई संकोच नही होता। इसके बाद उसे रोटी पकाने में लगना होता है। अन्धी मा तो सिर्फ खाट पर बैठी रहती है और अपनी पुकार का जवाब न पाकर बड़बड़ाने लगती है। कभी आपा पीट डालती है, तो कभी गन्दी-गन्दी गालियाँ देने लगती है। अपनी बेटी को गालियाँ देने में भी उसे संकोच नहीं होता।

रात के कोई नौ बजे उसे सब कामों से छुट्टी मिली। बाप पास वाले तबेले में मिलने चला गया था। उसने थोड़ा दूध औटाया और एक गिलास में भर कर जीवन की कोठरी की तरफ चली। कोठरी के दरवाजे पर वह ठिठकी। जीवन कहीं होश में आ गया होगा तो बुरा होगा। उस दिन भी तो दूध नहीं पिया था। यह सोचते ही उसकी निराशा बढ़ी। फिर भी हिम्मत करके उसने अन्धेरी कोठरी में पैर रखा। भीतर जाकर गिलास एक तरफ को दीवाल के सहारे रख दिया। फिर धीरे से जीवन के मुँह पर झुकी। अभी तक ज्वर घटा नहीं था और न बेहोशी ही कम हुई थी। लड़की ने बड़े प्यार से अपने आँचल से जीवन के माथे, मुँह और गले का पसीना पोंछा। फिर उसके जलते हुए होंठों पर अपने होठ रख दिये। जीवन ने बेहोशी में भी कुछ बेचैनी अनुभव की। उसने गर्दन हिलाई। लड़की ने होठ अलग कर लिये। बाहर से चांद-तारों का दिया जो थोड़ा-सा प्रकाश भीतर आ रहा था उसी में वह जीवन का मुख जिस किस तरह देख लेती थी। वह उसे देख-देख कर कुछ ऐसी तन्मय हो उठी कि अपनी वास्तविकता भूल गयी। उसने उसके बालों को सहलाया। धीमे-धीमे अपने

खुरदरे हाथों से माथा दबाया और फिर सहसा उससे लिपट जाने के आवेग से भर उठी। पर अपने आप ही सहम कर रह गयी। उसका कामना पुरुष उसके सामने निढाल पड़ा था। वह स्वयं को उस पर निछावर कर डालना चाहती थी। फिर वह उठ कर उसके पैरों की तरफ आयी। उसने उन्हें पहले धीरे से होंठों से छुआ। वे तप रहे थे। फिर उसने अपने गालों से छुआ। पर उसे शान्ति न मिली। विकलता बढ़ती गयी उसी विकलता में उसने अपना वक्ष उघाड़ डाला और उन्मादिनी-सी जीवन के पैरों से लिपट गयी। उसने उसके दोनो पाँव अपनी छाती पर रख लिये। उसकी इच्छा हो रही थी कि जीवन की बेहोशी टूट जाये और वह अपने पावों से उसके वक्ष को कुचल डाले। उसकी सांस फूल आयी थी और वह कितनी ही देर तक उसी अवस्था में पड़ी रही।

फिर सहसा उसे ध्यान आया कि कोई आ न जाय और वह जीवन को दूध भी पिला न पाए। जीवन तभी पानी के लिये कराहा। लड़की तेजी से उठी। उसे सहारा देकर कुछ-कुछ उठाया और उसका सिर अपनी छाती पर टेक लिया। फिर उसने दूध का गिलास उसके मुँह से लगा दिया। जीवन धीरे-धीरे आधा गिलास पी गया और फिर निढाल होकर गर्दन एक ओर को डाल दी। लड़की ने दूध का गिलास अलग रख दिया। उसका सिर अपनी जाँघ पर सम्हाल कर रख लिया। तभी उसे ध्यान आया कि उसके कपड़े कितने गन्दे हैं। उसके बदन से गोबर की कैसी गन्ध आती है। जीवन होश में आ जाय तो अपने को छूने भी न दे। इस बिचार ने उसे मथ-सा दिया। उसने जीवन का सिर तकिये पर रख दिया और वेदना के साथ उठ खड़ी हुई। उसने उठते-उठते दूध का गिलास भी उठा लिया और कोठरी से बाहर निकल गयी। उसे यह कतई अभीष्ट न था कि जीवन उसे बुरा समझे। उससे नफरत करे।

दूध वाला लौट आया था। सोने का वक्त हो गया था। पर लड़की की आँखों में नींद न थी। सब नींद की गोद में चले गये। लड़की पीड़ा की छाती पर सिर पटकती रही। उसे आज अपनी कुरूपता खल रही थी। उसके मन में अच्छे वसनों की इच्छा थी। पर गोबर सने, फटे, मैले, बदबूदार कपड़े, रूखे, उलझे हुए गन्दे बाल। लड़की रोने लगी।

बाप की नाक जोरों से बज रही थी। अन्धी माँ को नींद कम आती थी पर वह देख तो पाती ही न थी। इसलिये लड़की आजाद थी। वह फिर कोठरी तक आयी, दरवाजे के पास से आहट मिली। फिर भीतर घुस गयी। घुसते ही उसने अनुभव किया कि कोई उसके पीछे खड़ा है। सोचा, राजन...। वह घबड़ा उठी। पर राजन नहीं था। दिनेश था। उसने कठोर आवाज में लड़की से पूछा, "तू यहाँ क्या कर रही है?"

लड़की चुप थी।

उसने फिर कहा, "चोरी की आदत भी है क्या?"

लड़की को कोड़ा-सा लगा पर जवाब कुछ नहीं दे सकती थी। दिनेश ने बिगड़ कर कहा, "फौरन निकल जाओ। ठीक नहीं होगा जो आइन्दा ऐसी हरकत की।"

लड़की धीरे-धीरे बाहर चली गयी। दिनेश ने जीवन को सोया हुआ जानकर उसे कुछ नहीं कहा। अपनी दरी पर वह कपड़े उतार कर लेट गया। पर ओढ़ने वाली चादर उसे मिल नहीं रही थी। उसे लगा कि यह लड़की की ही कारस्तानी है। वह गुस्से में भर कर उसे आवाज देने ही वाला था कि वह आप ही दरवाजे पर दिखाई दी। विनय भरे स्वर में बोली, "बाबू..."

वह आगे कुछ और कहना चाहती थी कि दिनेश ने गुस्से में भर कर पूछा, "मेरी चादर कहाँ है?"

लड़की की समझ में नहीं आया। बोली, "वहाँ होगी। इन बाबू को आज बुखार आ रहा है। बेहोश हैं।"

जीवन बेहोश है। दिनेश चौंक पड़ा। उसने कोने में पड़ी हुई टार्च उठाकर जलाई। जीवन बुखार में भरमा भूत-सा पड़ा था। उसकी अपनी चादर भी उसी के ऊपर पड़ी थी। उसने उसका माथा छुआ। वह तवे-सा गरम था। उसने एक बार जीवन को देखा। फिर लड़की को देखा। अब वह उसकी उपस्थिति का हेतु समझ गया था। कोमल स्वर में बोला, "जाओ। अब तुम आराम करो। अब बाबू के पास मैं हूँ।"

लड़की को उसकी कोमल वाणी से बल मिला। बोली, "बुरा न मानो तो बाबू मैं न जाऊँ।"

"नहीं," दिनेश ने कहा, "तुम्हारा रुकना ठीक नहीं। तुम जाओ।"

लड़की चली गयी। जीवन उसी तरह पड़ा था। दिनेश ने टार्च बुझाई और अपनी दरी पर आ लेटा। थोड़ी देर तक तो वह लड़की ही के बारे में सोचता रहा पर बाद में जीवन के प्रति चिन्ता से भर उठा। इधर उसके पास भी पैसों की तंगी हो चली थी। कैसे काम चलेगा—अगर जीवन ज्यादा बीमार हो गया। दिनेश चिन्ता से लिपट कर करवटें बदलने लगा।

रात बीतती गयी। अगले दिन सुबह जीवन का ज्वर हल्का था। कमजोरी बहुत अधिक थी। कल रात उसके साथ क्या-क्या बीता उसे कुछ पता न था। दिनेश ने उसे दूध लाकर पिलाया। जीवन दूध पीकर फिर लेट गया। बीमारी में उसे घर याद आ रहा था। ज्वर में भी वह जमीन पर पड़ा था। खाट तक न थी। परदेश का जीवन कैसा अभिशाप है। पर दिनेश की उपस्थिति और स्नेह ने उसे बल दिया। दिनेश ने प्यार से कहा, "घबड़ाना नहीं जीवन। जल्दी ही ठीक हो जाओगे।"

उस दिन दिनेश जल्दी ही बाहर चला गया। उसे एक प्रोड्यूसर से गीतों के रुपयों का तकाजा करना था। उसके हाथ के रुपये खर्च हो चुके थे। जल्दी ही व्यवस्था न हुई तो फाकों की नौबत आ जायगी। वह चला गया।

पर ज्यों-ज्यों दिन चढ़ता गया, जीवन का ज्वर भी बढ़ता गया। फिर उसे जाड़ा लगा। सिर दर्द से फटने लगा। ज्वर ने उसे विवश कर दिया। दिनेश जाता-जाता दूध वाले से जीवन के बारे में कह गया था। उसने जीवन की व्यवस्था अपनी लड़की को सौंप दी थी। लड़की ने इसे ईश्वर की असीम अनुकम्पा माना। अब वह निर्द्वन्द्व भाव से जीवन के पास आ जा सकती थी। पर जब तक जीवन को होश आया तो उसकी जाने की हिम्मत न पड़ी। वह मन ही मन जीवन की बेहोशी और कल जैसे ही ज्वर की कामना करने लगी। बेहोश जीवन विरोध करने की क्षमता से हीन हो जाता है। वह ऐसे ही जीवन को चाहती थी जो उसकी इच्छाओं की अवहेलना न कर सके। वह बराबर कोठरी के पास आती और दरवाजे की ओर से आहट लेती रहती। उसने जब दरवाजे की सँधों से देखा कि जीवन फिर बुखार में बेहोश हो गया है तो वह किवाड़ खोल कर भीतर चली आयी।

अस्वस्थता और मलिनताओं में भी उसे जीवन देवता-सा सुन्दर लग रहा था। तभी उसने फर्श पर पड़े एक फूटे शीशे में अपनी छबि भी देखी। वह कितनी गन्दी है। कितनी घिनौनी है। ऐसे ही विचार उसके मन में घूम गये। उसने अपने मैल चढ़े हाथ पाँवों को देखा। बढ़े हुए मैल भरे नाखूनों को देखा। रूखी उलझी हुई लटों को देखा। बदबूदार कपड़ों को देखा और उन सबों को देख कर वह वहाँ फिर एक क्षण न रुकी। बेहोश जीवन से लिपट जाने की उसकी कामना ही बेहोश हो गयी।

जीवन के पास से भाग आकर लड़की कुछ देर तक तो बावली-सी इधर-उधर फिरती रही, पर वह स्वयं से न भाग सकने के कारण मन से बार-बार जीवन के पास पहुँच जाती। उसे ध्यान आता कि जीवन ज्वर में बेहोश है। वह उसका सिर अपनी गोद में रख कर प्यार से दुलारना चाहती। पर उसके शरीर में भैंस के गोबर की-सी गन्ध आती है, यह सोचते ही उदास हो उठती। इसी तरह दुविधा में पड़े-पड़े अचानक उसे कुछ ध्यान आया। घर में कपड़े धोने का साबुन था। वह उसे लेकर कुएँ पर पहुँची। वहाँ उसने कुएँ की मन (जगत) पर बनी कुँड में पानी भरा। फिर कपड़े धोनेवाले साबुन से खूब मल-मल कर नहाई। सिर धोया। अंग-अंग को मल कर साफ किया। मैल की बत्तियाँ उतरती जाती और वह बराबर पानी डालती, फिर साबुन मलती, फिर रगड़ती। पैरों की फटी हुई एड़ियों को उसने कुएँ की मन पर खूब रगड़ा। रगड़ते-रगड़ते खून निकलने की नौबत आ गयी। इस तरह नहाने में ही उसे आधा घंटा लग गया। फिर गीले कपड़ों से ही अपनी कोठरी में आयी। शादी के वक्त की उसके पास एक धोती थी। टिन के जिस कनस्तर में उसने कपड़े रखे थे उसे खोला। मुसे-मुसे लाल पीले, रंग-बिरंगे कपड़ों को निकालना शुरू किया। अन्त में गुलाबी रंग की वह धोती भी हाथ आयी। सलवटों का तो उसमें कोई अन्त न था। फिर भी साफ थी। उसने उसी को बड़े चाव से पहना और फिर ऊपर से उसी रंग की एक कुर्ती भी पहन ली। बाल उसके रूखे ही थे। घर में जो तेल था उसी से दीया बाला जाता और वहीं बछड़ों कटड़ों को पिलाने और गाय-भैंसों के सीगों पर मलने के काम में आता था।

एक बार उसके मन में आया कि उसी तेल को लगा ले। बाल रूखे तो न रहेंगे। पर मिट्टी के जिस बर्तन में तेल रहता था उसमें अब नीचे गाद ही गाद जमा थी। उसने भीतर हाथ डाला और गाद में भंडी उंगलियों को जुगुप्सा से बाहर निकाल लिया। कोठरी के काले किवाड़ों से उसने हाथों को रगड़ कर चिकनाई छुटा ली। पर हाथ से कड़ुए तेल की अजीब-सी गन्ध आती रही। वह तो फूल परी बन कर जीवन के पास जाना चाहती थी। यह गन्ध उसे रुचिकर न लगी। इसने हाथ साबुन लगा कर धोये। इसके बाद उसने अपने विन्यास पर मुग्ध दृष्टि डाली और चलने को पैर बढ़ाया। पर जाने क्यों सकुचा कर रह गयी। वह किवाड़ से लगी रुकी रही। फिर कोठरी के आले में रखे फूटे शीशे को उठाया। उसमें अपना मुँह देखा। गुलाबी धोती का पल्ला सिर से आगे कुछ-कुछ माथे तक पर झूल रहा था। उसे अपना यह रूप अच्छा लगा। एक सलज्ज मुस्कान उसके अधरों पर खेल गयी। उसके काले-काले होंठ भी सुषमा से रंग उठे। छोटी-छोटी वासनाभरी आँखों में एक अजीब सुकुमार भाव समा गया। फिर उसने ऐसे धीमे-धीमे कदम रखे जैसे नायिका रात्रि के निभृत में अभिसार प्रयाण में रखती है।

जाने कितनी लालसाएँ लेकर वह जीवन के पास आयी। अपने आप में खोई-खोई। बेसुध-सी। उसका प्यार भी व्यभिचार बना रहता था पर अब उसका व्यभिचार भी प्यार हो गया था। उसने धीमे से कोठरी में पाँव रखा। खुले दरवाजों के भीतर उसे झाँकने की आवश्यकता ही अनुभव न हुई। जीवन तकिये पर एक तरफ को गर्दन लुढ़काए पड़ा था। वह आहिस्ता से उसकी बगल में जाकर बैठ गयी। प्यासी आँखों से जीवन को देखती रही। देखते-देखते वह लालसा से भर उठी। उसके होंठ जीवन के होंठों की तरफ बढ़ने लगे।

तभी पीछे से किसी के खाँसने की आवाज सुनाई दी। लड़की सहम गयी। गर्दन घुमा कर देखा, राजन कोठरी के कोने में खड़ा दुष्टता भरी मुस्कान से व्यंग्य कर रहा है। लड़की के शरीर का खून जम गया। वह अपने आप में कुछ ऐसी विभोर थी कि कोठरी में प्रवेश करते वक्त उसे जीवन के अतिरिक्त

कुछ नहीं दिखाई दिया। राजन कह रहा था, "आज तो सुहागरात का साज सजाया है।"

लड़की से कोई उत्तर न बन पड़ा। उसकी दृष्टि धरती में गड़ गयी राजन कह रहा था, "अरी बदमाश, उस बेवकूफ के पीछे क्यों पड़ी है। तेरी जरूरत तो मैं पूरी कर सकता हूँ।"

लड़की की छोटी-छोटी आँखें उठीं और घृणा बरसा कर फिर झुक गयी। राजन कुटिलतापूर्वक मुसकुराता हुआ उठा और लड़की के पास आकर बोला, "तुमने कभी अपनी सूरत शीशे में नहीं देखी शायद। अरी इस शक्ल पर भी कोई राजन ही मर सकता है।"

इतना कह कर वह जोरों से हँसा और लड़की की ठोड़ी पकड़ कर मुँह ऊपर उठाया। बुखार में भरमें जीवन ने आँखें खोलीं। लड़की और राजन को देखा भी। पर समझ कुछ नहीं पाया और आँखें फिर बन्द कर लीं। लड़की की आँखों में खून उतर रहा था, पर जिस पुरुष को वह अनेक बार समर्पित हो चुकी थी आज उसी की अवज्ञा करने की ताक़त वह बटोर नहीं पा रही थी। उसने चाहा कि उसके मुँह पर थूक दे पर वैसा कर न सकी। उसने चाहा कि चिल्ला पड़े, पर चिल्ला भी न सकी। राजन उसका हाथ पकड़ कर अपने बिस्तर पर ले आया। धक्का देकर उसे नीचे डालते हुए बोला, "तुम्हारी ठीक जगह यहाँ है।"

लड़की ने कातर दृष्टि से उसे देखा। जैसे मुक्ति की याचना की। राजन क्रूरता के साथ बोला, "आज तुम्हारे बदन से बदबू नहीं आ रही है। आज मैं तुम्हें दस के बजाय पन्द्रह दे सकता हूँ। पर इस समय मेरे पास एक भी पैसा नहीं है। कल दूंगा। कल पन्द्रह के बजाय बीस दूंगा। पर तुम मुझ से भागती क्यों हो ?"

लड़की के होंठ काँपे पर आवाज न निकली। कहना चाहती थी कि मुझे बख्श दो। दस, पन्द्रह, बीस कुछ नहीं चाहिए मुझे। पर मूक होंठों की अनुनय सुनने-समझने की बुद्धि राजन के पास न थी।

थोड़ी देर बाद लड़की कपड़े सम्हालती हुई उठी। उसके अंग-अंग में अजीब दाह हो रहा था। पैर काँप रहे थे। गिरने से बचने के लिये उसने

दीवाल का सहारा लिया। राजन बिस्तर पर पड़ा-पड़ा हाँफ रहा था। जीवन की आँखें बन्द थीं। लड़की ने जीवन को देखा और देखते ही ऐसा आवेग उमड़ा कि दोनों हाथों में मुँह छिपा कर फूट-फूट कर रोने लगी।

राजन ने पड़े-पड़े कहा, "हारामजादी अब रो मत। जा, यहाँ से जा, तेरा बाप आता होगा।"

लड़की धीरे-धीरे दरवाजे की तरफ बढ़ी। वह कोठरी से बाहर न जा सकी, दरवाजे के करीब पहुँचते न पहुँचते वह जीवन के पैरों पर गिर पड़ी और उन्हें अपनी छाती पर रख कर रोने लगी। राजन उसके रोने से कुछ परेशान-सा हो उठा। बिगड़ कर बोला, "जाती है कि नहीं।"

पर लड़की टस से मस न हुई। उसने जीवन के पाँव तो छोड़ दिये थे पर अब औंधी जमीन पर पड़ी थी। राजन गुस्से में भर उठा। उसने चाहा कि लड़की का हाथ पकड़ कर बाहर कर दे। पर लड़की मिट्टी के ढेर-सी पड़ी थी। उसने गुस्से में भर कर उसके एक लात जमाई। पर लात खाकर भी जब वह न हिली तो राजन की परेशानी और बढ़ी। उसने झुक कर उसका मुँह देखा। वह बेहोश थी।

उसने उसे छोड़ दिया और कोठरी के कोने में आकर बैठ गया। पर बैठा न रह सका। उठा। कपड़े पहने और जूता पैरों में डाल कर बाहर चल दिया। घूम कर उसने लड़की की तरफ देखा भी नहीं।

लड़की उसी तरह निस्संज्ञ पड़ी रही। थोड़ी देर बाद दूध वाला भी जीवन के हाल-चाल पूछने आया। लड़की को उस हालत में पड़ी देख कर उसकी समझ में कुछ न आया। जीवन बुखार में अलग बेहोश था। दूधवाले ने लड़की को हिलाया-डुलाया फिर पानी के छपके दिये, हवा की, तब जाकर उसने आँखें खोलीं। आँखें खोलते ही बापू कह कर अपने बाप से चिपट गयी और रोने लगी। दूधवाला और परेशान हो उठा। उसने उससे रोने का कारण पूछा। बेहोशी का कारण पूछा पर वह हर बात के जवाब में रोती-रोती कहती गयी, "मुझे यहाँ से दूर भेज दो बापू; मुझे दूर भेज दो बापू!"

लड़की को अपने पति का घर कभी प्रिय न था। दूध वाले ने जामाता का नाम लेकर कहा, "वहाँ जायगी।"

लड़की रोते-रोते बोली, "मुझे कहीं भी भेज दो बाबू, पर मैं यहाँ नहीं रह सकती। नहीं रह सकती।"

दूधवाला उसे किसी तरह अपनी कोठरी में ले आया। उसकी समझ में कुछ न आ रहा था। कभी वह उसके रंगीन कपड़ों को देखता, बनाव-ठनाव को देखता और कभी आँसुओं में बहती हुई वेदना भरी ग्लानि को। अन्त में उसके अन्धविश्वासी मन ने समाधान भी खोज लिया। बोला, "मोतिया, तुझे भला किसने कहा था कि शनीचर के दिन नये रंगीन कपड़े पहन। तुझे जरूर ही ऊपरा हो गया है। मा तेरी अंधी है उसे तो कुछ सूझता ही नहीं। मैं अकेला क्या-क्या करूँ। दूध बेचने जाऊं कि तुझे सम्हालूँ ?"

दूधवाले का पितृत्व उमड़ पड़ा। स्वर उसका मक्खन की तरह पिघल चला था। फिर बोला, "अच्छा घबड़ा मत। मैं भवाली से तेरे लिये ताबीज ले आऊँगा। सब ठीक हो जायेगा।"

उस दिन जीवन पर बहुत बुरी बीती। कोई पानी तक के लिये पूछने नहीं आया। उसने कई बार पानी के लिये विकल पुकार की। उठ कर दूधवाले की कोठरी तक आने की चेष्टा की पर सब प्रयत्न विफल गए। वह जहाँ का तहाँ पड़ा रहा। इसी तरह शाम हो गयी। ज्वर मन्द पड़ने लगा था, पर प्यास के मारे उसकी हालत बेहद खराब थी। अब वह किसी तरह उठा और कुएँ की तरफ चला। पर ज्वर ज्यों-ज्यों उतर रहा था कमजोरी बढ़ती जा रही थी। उसने फिर भी कुएँ पर पहुँच कर कुएँ में डोल फँसा दिया। पर रस्सी के झटके को सम्हाल न सका। गरड़-गरड़ करके घिरड़ी तेजी से घूम पड़ी और उस पर से सर्र करती हुई रस्सी डोल के साथ कुएँ के पेट में समा गयी। जीवन हताश-सा कुएँ की मन पर घुटनों पर हाथ टेक कर बैठ गया। प्यास के मारे उसका गला सूख कर काँटा हो गया था।

डोल के कुएँ में धड़ाम से गिरने की आवाज दूधवाले की कोठरी तक पहुँची। वह खुद तो वहाँ था नहीं, अंधी थी, आँखें खो कर उसने कानों की

शक्ति बढ़ा ली थी। डोल के डूबने की आवाज सुनते ही बोली, "अरी मोतिया, बहरी हुई क्या? देख तो किसने डोल कुँए में डाल दिया।

मोतिया इस समय खुद ग्लानि, क्रोध और वेदना के घेरे में पड़ी थी। अंधी का बड़बड़ाना वह सुन ही नहीं सकी थी। अंधी फिर चिल्लाई—"अरी, बहरी इस अंधी की भी सुन ले। कुँए पर जाकर देख तो कि कौन डूब गया।"

इस बार मोतिया कुछ घबड़ाई-सी उठी। उसे जीवन का ध्यान आया। बावली-सी दौड़ी कुँए पर आयी। देखा जीवन हाथों में सिर थामें कुँए की मन पर बैठा था। पास पहुँच कर विकलता से उसने पुकारा, "बाबू।"

इस समय भी उसके तन पर दोपहर वाले ही कपड़े थे। जीवन ने देखा। देख कर आँखें झुका लीं। फिर बोला, "पानी पिला दोगी।"

"हाँ हाँ,"—मोतिया खुश थी। आज जीवन खुद उससे कुछ करने को कह रहा था। वह डोल रस्सी की तलाश में कुंए की परिक्रमा कर गयी। जीवन बोला, "डाल तो रस्सी समेत कुँए में गिर गया।"

फिर वह वहाँ न रुकी। घड़े में से पीतल के गिलास में पानी भरा। दौड़ी-दौड़ी फिर कुंए की मन पर आयी। गिलास छलकते-छलकते आधा रह गया था। जीवन ने आतुरता से गिलास को मुँह से लगा लिया और एक साँस में ही उसे खाली कर गया। जल्दी करने में गले में पानी का फंदा लग गया। खाँसते-खाँसते वह वेदम हो गया। जब साँस ठीक हुआ तो वह उठा और डगमगाते पैरों से कोठरी की तरफ बढ़ा। मोतिया ने आगे बढ़ कर उसे सहारा दे दिया। जीवन ने कोई एतराज नहीं किया। उसके सहारे चल कर वह कोठरी में आया। फिर आहिस्ता से बिस्तर पर लेट गया। लड़की के प्रति उसका मन अपार कृतज्ञता से भर उठा था। कृतज्ञता कुछ-कुछ मुखरित भी हुई। बोला, "तुम्हारा नाम क्या है, तुम बहुत अच्छी हो।"

लड़की ने जीवन में परम आह्लाद का अनुभव करते हुए कहा, "मोतिया।"

साथ ही उसकी दृष्टि राजन के खाली बिस्तर पर जा पड़ी जो कोठरी के कोने में सलवटों को छाती से लगाए पड़ा था। मोतिया का मन पुनः

जुगुप्सा से भर उठा। उसे राजन याद आया। अपनी बेबसी याद आयी। यह भी याद आया कि राजन के लिये उसका क्या अर्थ है। वह स्वयं राजन को कितनी बेहयाई के साथ अपना मन सौंप चुकी है। यह कोठरी ऐसे सब अवसरों की गवाह है। उसे लगा कि वह यहाँ एक क्षण भी रुकी तो उस कोठरी की दीवालें जीवन को सब कुछ बता देंगी और तब जीवन उससे फिर नफरत करने लगेगा। उसे मरना पसन्द था पर अब जीवन की निगाहों में गिरना नहीं। बस वह वहाँ न रुकी। जीवन की ओर देखा भी नहीं। अपनी कोठरी में आयी। अब तक अपने कपड़ों की ओर उसका ध्यान नहीं गया था। उसे उन साफ-सुथरे कपड़ों से बदबू आने लगी। उसने उन्हें उतार फेंका और फिर सुबह वाले गन्दे कपड़े पहन लिये। उन्हें पहन कर वह कुछ हलकी-सी हुई। उतारे हुए कपड़ों की गठरी-सी बना कर उसने उन्हें फिर कनस्तर में ठूँस दिया और जैसे बड़े भारी श्रम के बाद कोई थक कर लेटने के लिये बिस्तर की भी अपेक्षा नहीं करता वह भी कोठरी के नंगे फर्श पर लेट गयी। उसके कुछ-कुछ शीतल स्पर्श ने उसे सांत्वना दी।

दीये बलने लगे। बिजली की बत्तियाँ रोशन हो उठीं थी। मोतिया की कोठरी में भी फूटी चिमनी वाली, धुएँ से अंधी लालटैन जग उठी थी। जीवन अंधेरे में अपनी कोठरी में पड़ा था। मच्छर आ आ कर उसे अपना गाना सुनाने लगे थे। तभी दिनेश लौटा। वह कुछ परेशान था। आते ही वह जीवन के पास बैठ गया। उसके माथे पर हाथ रखा। पूछा, 'कैसी तबीयत है अब। बुखार तो कम जान पड़ता है।"

जीवन ने धीमे से कहा, "अभी-अभी कम हुआ है।"

"कुछ खाया," दिनेश ने पूछा।

"थोड़ी देर पहले तक तो होश ही न था," जीवन ने कहा।

दिनेश कुछ देर चुप रहा। फिर बोला, "दूध लाऊँ। इस वक्त वही पी लो।"

जीवन ने कुछ न कहा। दिनेश ने दूध की व्यवस्था कर दी। अपने हाथ से जीवन को पिलाया। अंधेरी कोठरी में भी वह सहज भाव से यही करता रहा। इस कोठरी के जर्रे-जर्रे से वह परिचित था। यहाँ उसे

प्रकाश की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। चाँदनी का पखवाड़ा था। चाँद जल्दी ही उग आया था। चाँदनी नृत्य करती हुई धरती पर उतरने लगी थी। उसकी कुछ आभा कोठरी के अंधकार ने भी चुरा ली और अपनी कालिमा धोनी चाही। अंधियारे का कालापन कुछ हल्का हो उठा था। दिनेश का एक हाथ जीवन के माथे को धीरे-धीरे सहला रहा था। जीवन को वह स्पर्श बड़ा सुखद जान पड़ रहा था। तभी दिनेश ने कहा, "एक बात बहुत बुरी हुई जीवन।"

जीवन कुछ पूछे कि वह खुद ही कहने लगा, "आज राजन को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है।"

"सच," जीवन ने अचरज के साथ पूछा।

दिनेश बोला, "होना तो था ही यह एक न एक दिन। फिर भी मुझे अफसोस है। तकलीफ है। मेरे सामसे ही उसे पुलिस वाले हथकड़ी डाल कर ले गये हैं। पाकेट मारते हुए उसे गिरफ्तार किया है। अब वह बचेगा नहीं। सजा होगी।"

जीवन ने अफसोस के साथ कहा, "यह तो बहुत बुरा हुआ।"

दिनेश ने अवसाद भरे स्वर में कहा, "शायद इसीसे वह सुधर जाय। वह आज तक बराबर अपराध करता रहा, पर कभी उसे अपराधों की सजा मिली नहीं। आज ईश्वर उस पर कृपालु हुआ है इसी से सजा का एक अवसर आया है।"

जीवन ने मन ही मन सोचा,—"क्या सजा से कोई सुधर सकता है।"

उधर दिनेश कह रहा था, "पर सजा से वह सुधर ही जायगा कौन जाने। जीवन, मैं जानता हूँ कि राजन अच्छा आदमी नहीं है। फिर भी आज मुझे तकलीफ हो रही है। मैं उसके ख्याल को दूर नहीं कर पा रहा हूँ।

इतना कह कर वह दोनों हाथों से जीवन का सिर दाबने लगा। जीवन ने निषेध करते हुए कहा, "अब तुम आराम भी करो। दिन भर के थके माँदे हो।"

दिनेश ने कहा, "तुम्हारा सिर दुख रहा होगा। मैं जानता हूँ कि मलेरिया में सिर किस बुरी तरह दर्द करता है।

जीवन ने कहा, "नहीं, आज तो कतई दर्द नहीं है।"

जीवन ने झूठ कहा था। उसने झूठ कहा है यह दिनेश ने भी समझा। पर अन्त में जीवन के आग्रह से वह अपने बिस्तर को झाड़ कर कपड़े उतार कर जा लेटा। ख्यालों में उसके राजन ही घूम रहा था।

इसी तरह राजन के बारे में सोचते-सोचते दिनेश सो गया। जीवन को भी झपकी आ गयी। रात तारों के साथ बात करती हुई सरकने लगी। तारे बड़े इतमीनान से हँस रहे थे। उन्हें यह भी पता न था कि उनके भी टूटने की नौबत आ सकती है। रात भी बड़े विश्वास के साथ काली पड़ रही थी। वह भी भूल चुकी थी कि नित्य ही उषा उसे हतप्रभ कर डालती है। राजन सोते-सोते सपना देख रहा था। साफ आसमान बादलों के दलों से घिर गया था। बिजलियाँ कड़कने लगी थीं। हवाएं घटाओं को छितराने को जूझ पड़ी थीं। पर न घटाएँ छितरी, न हवाओं का वेग कम हुआ। पवन का ऐसा गर्जन था कि जैसे पंखों वाले पहाड़ उड़ रहे हों। उसके वेग में धरती डोल उठी, हिमालय की नींव जैसे हिल गयी। आदमी की तो कुछ बिसात ही नहीं थी। सपने में दिनेश ने देखा कि उसी अन्धड़ में राजन एक तिनका-सा उड़ा जा रहा है। हवा ने उसे धरती पर से उठा लिया है। और अब वह अधर में टँगा है। दिनेश उसे रोकने के लिये चिल्लाया, "राजन।"

एक और आवाज हुई, "राजन।" यह जीवन था।

दोनों एक ही नाम को लेकर चिल्लाए और दोनों ही जाग पड़े। हवा भी वेग से चल रही थी। कोठरी के किवाड़ चौखट दिवाल से टकरा कर चीख रहे थे। हवा के साथ-साथ बहुत-सा धूल-धक्कड़ कोठरी में घुसा चला आ रहा था। बहुत से चीथड़े कागज के टुकड़े पत्ते और वैसी ही बहुत-सी गन्दगी कोठरी में जमा हो गयी थी। दिनेश ने टार्च जला कर देखा हर चीज़ पर धूल की एक मोटी पर्त जमा थी। उसकी आँखें भी धूल से भर कर अंधी हो उठी थीं। वह टार्च रख कर किवाड़ बन्द करने के लिये उठा। आसमान में पूर्ण क्रान्ति मची थी। तारे बच्चों से डर कर जाने किस की गोद में छिप गये थे। बदलियों ने तूफान मचा रखा था। उसने अभिसार करने का पवन उन्मत्त हो उठा था। दिनेश काफी शक्ति लगा कर ही कोठरी के किंवाड़

बन्द कर सका। फिर भी किवाड़ों की संधों से हवा भीतर प्रवेश पाती रही और अपने साथ-साथ धूल लाती रही। दरवाजा बन्द होने पर भी दोनों में से कोई न सो सका। दिनेश दीवल से पीठ लगा कर बैठ गया। जीवन तकिये का कस कर पकड़ कर लेट रहा।

उन्मत्त बात का फूत्कार कोठरी के बन्द दरवाजे में भी उन्हें बधिर करता रहा। लगता जैसे पंख वाले लाखों करोड़ों साँप विष वमन करते हुए एक साथ उड़ रहे हों। या लाखों करोड़ों गरुड़ अपने भीम पंखों के पराक्रम प्रदर्शन में एक साथ लग गये हों। बाहर पेड़ों ने जड़े छोड़ दीं। बिजली और तार के खंभे जमीन को नमन करने लगे। अररड़ा कर जब वृक्ष गिरते तो भयानक शब्द होता उससे उत्साहित होकर पवन और भी भयंकर अट्टहास कर उठता। धीरे-धीरे बदलियाँ रो पड़ीं। पवन का मंथन वे सह न सकीं। वात झंझावात में बदल गया। आसमान जैसे एक बहुत बड़ा ताल था, जिसका पेंदा अब फट गया था। धरती जलमय होने लगी। पर वात वेग तब भी कम न हुआ। बदलियाँ रोती रहीं। बिजलियाँ तड़पती रहीं। झंझावात गरजता रहा।

दिनेश की कोठरी में भी पानी भर गया। जमीन पर बिछे बिस्तर भीग गये। अजीब परेशानी की-सी हालत हो गयी थी। कोई ऐसी ऊँची जगह न थी कि बिस्तरों को लपेट कर रख देते। छोटे-छोटे दो बक्से थे। उन्हीं को आधार बनाया। उन पर अधगीले बिस्तर रखे। ऊपर से खुद बैठ गये। दिनेश जीवन के लिये और भी परेशान था। ज्वर की अवस्था में यह सब अव्यवस्था उसे घातक जान पड़ती थी। निमोनिया तक हो सकता था। पर कोई चारा भी न था। दोनों एक दूसरे से चिपटे, सिकुड़े से बैठे रहे। कोठरी में पानी घुसता रहा।

पवन का वेग बढ़ रहा था। लगता था अब उसके वेग में स्थावर भी स्थिर न रह सकेंगे। समुद्र अपनी मर्यादा छोड़ने लगा। ऊँची-ऊँची सर्वग्रासी लहरें उठतीं और तट को लील कर हर्ष की लहर में विस्तृत हो जातीं। तट पर पड़ी शिलाएँ चट्टानें वायु के वेग से उखड़ कर लहरों पर जैसे तैरने लगतीं। पवन वीर ने उन्हें हथगोलों की तरह उठाया और अनायास ही उछाल कर

तक फेंक दिया। शिलाएँ अररड़ा कर एक दूसरे पर गिरतीं, भयंकर शब्द होता। नारियल के पेड़ों ने पवन देव को तत्काल समर्पण कर दिया। उन्होंने सिर झुका लिये। अवरोध की हर भावना त्याग दी। विनय में झुक कर समान हो गये। धीरज बंधाने के लिये आस-पास के दूसरे पेड़ों से लिपट गये। पर प्रतापी पवन सदय न हुआ। उसने उनके मस्तक पर बलाघात किया और वे जमीन पर जड़ें छोड़ कर नमन करने लगे। सागर अलग बिलख रहा था। अन्त में उसने भी लहरों का ताण्डव शुरू कर दिया। मछुओं की डोंगियाँ अस्तित्वहीन हो उठीं। किनारे पर लंगर डाल कर खड़े जहाज लंगर डाले-डाले ही डूब गये। बत्तियाँ गुल हो गयीं। बाजारों में दूकानों के बोर्ड उखड़-उखड़ कर गिरने लगे। रास्ते के पेड़ों ने गिर-गिर कर सड़क का गला ही घोंट डाला।

पवन का वेग और बढ़ा। छतें छतरी-सी उड़ने लगीं। कानों को बहरा करता हुआ घोष हुआ। जीवन और दिनेश दोनों आँखें बन्द करके एक दूसरे से चिपट गये। उसी क्षण उनकी छत उड़ कर दूर जा पड़ी। अब वे आसमान की दया पर कमजोर दिवालों के घेरे में असहाय बैठे रह गये। लगता था उन्मादी पवन आज किसी की न सुनेगा। जमीन आसमान का भेद उसे पसन्द नहीं। जल-थल को वह अलग-अलग नहीं देख सकता। आज उसके मन में मृत्यु क्रान्ति का संकल्प जागा है। आज वह समस्त विषमताओं को ध्वस्त करने के लिये विश्व को ही ध्वस्त करने का संकल्प कर बैठा है।

बदलियाँ रोते-रोते रिक्त हो चली थीं। पर पवन उन्चास वात नृत्य करते ही रहे। जीवन दिनेश ने तो जीने की आशा ही छोड़ दी। अब तो वे यही प्रतीक्षा कर रहे थे कि कोई पहाड़ उड़ता हुआ आये और उनके ऊपर गिर कर सारा खेल खत्म कर दे।

इस समस्त कांड में भी काल की गति न रुकी। काल ही एक मात्र अपराजित वीर है जो बाधा नहीं जानता। वह एक रस हो कर गतिशील रहता है। उसकी गति में रात सरकती गयी। पवन अपना उन्माद खोता रहा। अब प्रभात का पूर्व मुहूर्त्त था। पवन थक कर विश्राम के लिये विकल हो ...ता था। धीरे-धीरे वह काल की क्रोड़ में ही थकी हुई साँसें लेने लगा।

अभी तक तो आहत और मृत जीवों के चीत्कारों तक की उपेक्षा वह कर रहा था। उसके स्वर में किसी का स्वर न सुनाई पड़ता था। अब वह स्वयं कराह रहा था और चीत्कार प्रबल हो उठे थे।

सुबह सब कुछ शान्त हो गया। जैसे रात को कुछ हुआ ही नहीं। जीवन कमजोरी की वजह से निबल था। ज्वर अवश्य ही नहीं बढ़ा। दिनेश उसे छोड़ कर अपनी जगह से उठा। अभी आया कह कर वह कोठरी से बाहर आया। दूर-दूर तक उसे कोई पेड़ दिखाई न दे रहा था जो अब भी सिर उठाए झूम रहा हो। दूध वाले के मकान की आधी से अधिक छत उड़ चुकी थी। गाय-भैंसों के छप्पर उड़ कर जाने कहाँ पहुँच चुके थे। कुंए की मन तक एक ओर से ढह गयी थी। कुएँ के पास खड़े-खड़े उस दूधवाले के घर की तरफ से कराहने और रोने की आवाज सुनाई दी। वह धीरे-धीरे उस ओर बढ़ा। बिना छत के मकान के नीचे दूधवाला हाथों में मुँह छिपाए खाट पर पड़ा था। अन्धी रो रही थी। पास ही मोतिया का शव पड़ा था। उसके ऊपर ढँका कपड़ा भी खून से भीगा था। दिनेश को समझते देर न लगी कि छत का कोई हिस्सा इस लड़की के सिर पर गिरा है जिससे सिर फट गया है और वह मर गयी। उसने दूधवाले से कुछ कहना चाहा। पर मुँह से बोल ही न निकले। चुपचाप बाहर चला आया। बाहर आ कर गाय-भैंसों के बँधने की जगह जा पहुँचा। खूँटे सब सूने थे। किसी से रस्सी का टुकड़ा बँधा था जिससे लगता था कि बँधी हुई गाय या भैंस ने जोर लगाकर रस्सी तोड़ डाली है। कहीं खूँटे का छेद भर था और उससे बँधी गाय-भैंस गले की रस्सी और खूँटे समेत गायब थी। एक भी गाय-भैंस छप्पर में न थी। उदास आँखों से वह सब कुछ देखता हुआ और आगे बढ़ा। एक बड़ा-सा पेड़ जिसकी जाति वह पहचान न पा रहा था टूट कर जमीन पर लेटा हुआ था। सहसा उसकी दृष्टि उसके तने के नीचे दब कर मरी पड़ी एक भैंस पर पड़ी। उसका पेट फट गया था और अंतड़ियाँ बाहर निकल आयी थीं। उस दृश्य को देखने का वह साहस न कर सका। उल्टे पाँवों अपनी कोठरी में आया। जीवन चुप-चाप दीवाल के सहारे बैठा था। दिनेश को उसने देखा। उसका चेहरा फक था। पूछा, "क्या बात है दिनेश। इतने उदास कैसे हो गये!"

दिनेश बोला, "इस तूफान ने तो बड़ा भारी नाश किया लगता है। दूधवाले का तो सर्वनाश ही हो गया। मकान खंडहर हो गया। एक भी गाय-भैंस थान पर नहीं। उसकी लड़की है न वह भी चल बसी। घर से भागने की तो उसकी आदत थी ही। पर अब तो वह अपने आप से ही भाग गयी। मोतिया मर गयी।

जीवन ने व्यथा के साथ सुना। गन्दे कपड़ों में लिपटी मैली-कुचैली और बदबू भरी एक लड़की उसके सामने आ खड़ी हुई। छोटी-छोटी आँखें। उलझे हुए मैले बाल, काला रंग। बदन से गोबर की दुर्गन्ध। पर आज उसे उससे घृणा न हो रही थी। वह करुणा से भर उठा।

तीन दिन तक बम्बई भर में बिजली पानी और ट्रामों की एकदम अव्यवस्था रही। शेष देश से बम्बई रेल तार की गड़बड़ी के कारण जैसे बिल्कुल कट गया था। अखबारों ने मुख पृष्ठ पर बड़े-बड़े हरफों में इस महा विनाश के समाचार को छापा। एक नया शब्द भी सुनाई पड़ा,··· 'सायक्लोन।' हर अखबार में सायक्लोन की विभीषिका की चर्चा थी। एक सौ मील फी घंटा की रफ्तार से सायक्लोन चला था। कितने जहाज डूबे, कितने लोग मरे, कितने लाख की सम्पत्ति को क्षति पहुँची इन सब बातों की उसमें चर्चा थी! पर जीवन सोच रहा था कि अब उनके रहने का क्या होगा। सिर पर छत भी नहीं रही। उसे कँजर याद आये। वे तो पहले ही बेछत थे। जाने उन पर क्या बीती होगी।

दिनेश के मन में भी ठीक ये ही विचार घुमड़ रहे थे। वह सोच रहा था कि उन तीनों में सब से भाग्यवान राजन निकला। उसके सिर पर छत तो है।

छत···दिनेश ने ऊपर की ओर देखा। जीवन ने भी देखा और दोनों की दृष्टियाँ आसमान में टँगी रह गयीं।

लपटों के होंठ

कई दिन बीत गये। जीवन लगभग ठीक था। पर मकान की समस्या अभी तक हल न हुई थी। जीवन और दिनेश उसी खंडहर में पड़े थे। दोनों बाहर चले जाते तो सामान लावारिसों की तरह पड़ा रहता। पैसे की तंगी भी बढ़ चली थी। खाना भी बेला-कुबेला वह भी एकाध बार हो पाता। कभी वह भी नहीं! कैसे गुजर होगी समझ में नहीं आता था। दिनेश को एक परिचित ने ठहरने का ठौर दे भी दिया पर वह अकेला वहाँ जा न सका। इसी परेशानी में दिनेश की कोशिशों से जीवन को नौकरी मिल गयी। काम क्लर्की का था। वेतन एक सौ रुपया माह। दफ्तर फोर्ट में था। बम्बई के व्यापारी विदेशों से जो माल मंगवाते थे उसी को जहाजों पर से छुड़वाने और गोदामों में पहुँचवाने का काम दफ्तर में होता था। मालिक इम्पोर्ट करने वालों का एजेन्ट भर था। दफ्तर में एक गुजराती युवक को छोड़ कर शेष क्लर्क लड़कियाँ थीं। वे चार थीं। उनमें से दो पारसी, एक गोन और एक ईसाई लड़की थी। वेष-भूषा चारों का ही ईसाई ढंग का था। फ्राक पहनतीं और दिन भर काम से अधिक चाम की परवाह करतीं। दफ्तर का मालिक अग्रवाल मस्त तबीयत का था। उसकी अनुपस्थिति में रमणीक भाई काम से अधिक लड़कियों की फिक्र करता। जीवन के लिये दफ्तर का सारा वातावरण अजीब था। हर बात में अंग्रेजी का व्यवहार होता था। एम. ए. होने पर भी जीवन को अंग्रेजी बोलने का अभ्यास न था। कभी कुछ कहना भी चाहता तो मनही मन वाक्य बनाने में ही अवसर चूक जाता। सब लोग समझते कि वह बोलता कम है और सिर्फ काम से वास्ता रखता है। रमणीक भाई को जीवन पसन्द आया। वह उसका भी काम कर देता और इस तरह रमणीक को लड़कियों का काम करने का मौका मिल जाता। वह लड़कियों से हर तरह के मजाक करता और जीवन की उपस्थिति को उपस्थिति ही नहीं मानता। जीवन के सामने रोटी का सवाल था। वह हर परिस्थिति में रहने को तैयार था। वह चुपचाप अपना काम करता और उपहास में सब कुछ सह लेता।

दफ्तर में आते उसे एक हफ्ता हो गया। मकान की व्यवस्था अब भी नहीं हो पायी थी। दिनेश ने उसी दोस्त से जिसने उसे रहने के लिये बुलाया था कुछ रुपए उधार ले लिये थे। उसी से गुजर चल रही थी। दो रोज बाद जीवन का भी एक रेडियो प्रोग्राम था। उसका उसे बड़ा आसरा था। पर घर से रुपये की माँग की चिट्ठी भी कभी की आयी पड़ी थी। उसने उसका जवाब तक नहीं दिया था। नौकरी मिल जाने पर भी जीवन को अपनी समस्या का हल न दिखाई दे रहा था। रहने का कोई ठौर न मिलेगा तो वह क्या करेगा। दूधवाले के पास इतना रुपया न था कि कोठरी पर फिर से छत डलवाये। लड़की की इस मौत ने उसे और उदासीन कर दिया था। दिनेश जीवन को छोड़ कर अपने दोस्त के पास रहने भी न जा पा रहा था। आखिर एक दिन जीवन ने ही कहा, "दिनेश अब तुम चले भी जाओ। मेरा भी कोई ठिकाना हो ही जायगा।"

दिनेश बोला, "आशा का आसरा बड़ा लम्बा होता है जीवन। हो ही जायगा। मैं भी मान लेता हूँ। पर होने से पहले कैसे चला जाऊँ। बम्बई में एक कहावत है,—"रोटला मिल जाता है कोठला नहीं। तुम्हें नौकरी तो मिल गयी पर छत अभी नहीं मिली।"

जीवन चुप रह गया। उसी दिन शाम को चौपाटी पर उसकी भेंट फिर रामप्यारे से हो गयी। दफ्तर के बाद उसका मन सीधे अँधेरी लौट आने को न किया। वह समुद्र के किनारे-किनारे घूमता हुआ चौपाटी जा पहुँचा। चौपाटी के दृश्य में वही एक रसता थी। बम्बई लंदन की गति से चल रहा था। पर चौपाटी बम्बई की गति से अलग अपनी ही गति से चल रही थी। जीवन थक कर एक जगह रेती पर बैठ गया। समुद्र शान्त था। मन्द-मन्द हवा बह रही थी। सूरज डूब चुका था। तारे अभी भी निकलते हुए झिझक रहे थे। जीवन की खाली-खाली दृष्टि समुद्र की श्यामल छाती पर लोट रही थी। तभी किसी ने पीछे से पुकारा, "सेठ पानी।"

जीवन ने घूम कर देखा। सहसा बोल उठा, "अरे तुम, रामदुलारे।"

रामदुलारे मुसकुराता हुआ पास ही बैठ गया, "हाँ बाबू।"

"मैं तो तुम्हारे सेठ कहने से चौंक पड़ा था।"—जीवन ने कुछ-कुछ हंसते हुए कहा।"

रामदुलारे बोला, "मैंने जान कर ही सेठ कहा था। डर रहा था कि कहीं बाबू पहचाने ही नहीं।"

"अब तो डर झूठ साबित हो गया।" जीवन ने कहा।

"हाँ! लो पानी पीओ। मेरे पास तो और कुछ भी खातिर को नहीं।" उसने बड़ी विनय के साथ कहा।

जीवन को प्यास न थी। फिर भी पानी पी कर बोला, "तुम्हारे पास सबसे बड़ी चीज है। यह समुद्र भी किसी की प्यास नहीं बुझा सकता। तुम इससे भी बड़े हो।"

अधेड़ रामदुलारे का चेहरा भीतरी आनन्द से दमक उठा। उसने आँखें झुका लीं और मूछों के भीतर छिपे होठों में मुसकुराता रहा। कुछ देर बाद उसने जीवन से पूछा, "बाबू साहब रहते कहाँ हैं।"

जीवन बोला, "कहाँ बताऊँ? कोई ठौर नहीं। जो था वह भी नहीं रहा। मकान की तलाश में हूँ। समझ में नहीं आता कि कोई ठिकाना न मिला तो कैसे गुजर होगी।"

रामदुलारे ने कहा, "बम्बई में इतने मकान हैं बाबू फिर भी भले आदमियों के रहने का कहीं ठिकाना नहीं। यहाँ नौकरी सौ मिल सकती है पर मकान एक भी नहीं।"

"तुम कुछ मदद करो, नहीं तो बम्बई छोड़ देनी पड़ेगी," जीवन ने उदास स्वर में कहा।"

रामदुलारे चिन्ता में पड़ गया। जीवन कह रहा था, "तुम्हारे आस-पास ही कोई खोली हो तो देखना।"

रामदुलारे हिचक के साथ बोला, "मेरे साथ रह जाओ न बाबू।"

जीवन उसे देखता ही रह गया। रामदुलारे पुनः बोला, "बाबू बम्बई बड़ी बेमुरौव्वत है। फिर भी यहाँ जीने के लिये एक दूसरे का सहारा लेना पड़ता है। मैं खुद बम्बई में दस साल दूसरे के यहाँ रहा। जब तक तुम्हें कोई ठौर न मिले मेरी ही खोली में चल कर रहो।"

"पर तुम्हारे अपने बीबी-बच्चे होंगे। एक ही खोली होगी। कैसे बसर होगी ?" जीवन ने पूछा।

रामदुलारे बोला, "मेरे बाल-बच्चे यहाँ नहीं हैं। बाबू बम्बई तो हम लोग कमाने आते हैं घर बसाने थोड़े ही। गाँव की जमीन और पुरखों का घर कोई कैसे छोड़ दे। बस इसी तरह हम लोगों की जिन्दगी बीत जाती है। न तो बम्बई को घर बना पाते हैं और न घर में रह कर कमा पाते हैं।"

"तो तुम अकेले हो ?" जीवन ने पूछा।

"अकेला भी नहीं," वह बोला, "मेरा एक छोटा भाई है। वह दूध का धन्धा करता है। दो भतीजे हैं। वे उसकी मदद करते हैं। एक और है मेरे गाँव का। वह भी उसी मिल में काम करता है। तुम आज मेरे साथ ही चलो बाबू। जिस चाल में रहता हूँ...उसमें एक-एक खोली में सोलह-सोलह आदमी तक गुजर करते हैं। नहीं तो कोई करे भी क्या ?"

काफी मानसिक ऊहापोह के बाद जीवन ने परेल जा कर रहने का निश्चय कर लिया। दिनेश ने भी उसे सहमति दे दी। दफ्तर भी अब उसका करीब यानी सात-आठ मील ही रह गया था। दोनों ने एक दूसरे से बड़े दर्द के साथ बिदा ली। दोनों की आँखें भर आयी। दिनेश ने आँसू पोंछते हुए कहा, "मैं अँधेरी वेस्ट में ही रहूँगा। एक दिन तुम्हें अपनी जगह भी दिखा दूँगा। तुम्हारी जगह मैं खुद पहुँच जाऊँगा। तुम्हारा बताया चाल का नाम और खोली का नम्बर काफी है। दुख मत मानो। मन से अब भी हम साथ ही रहेंगे। तुम्हारी हर जरूरत मेरी अपनी होगी।"

जीवन ने कृतज्ञता के कुछ शब्द कहने चाहे, पर कह न सका।

परेल वाली चाल और रामदुलारे की खोली की जीवन ने जो कल्पना की थी उससे भी अधिक खराब हालत उसकी थी। खोली चाल की भीतरी सड़क पर पहली मंजिल पर ही थी। उसे दो हिस्सों में बाँट रखा था। अगले हिस्से में रामदुलारे का छोटा भाई किरपा (कृपाराम) दूध की दुकान करता था। उसमें दूध के बंटे वगैरा और एक चौकी थी। पिछले हिस्से में गुजर का सामान और रसोई बनाने की व्यवस्था थी। पिछले हिस्से में ऊपर एक लम्बा-चौड़ा टाँड भी बना था जिस पर जाड़ों में सोने की व्यवस्था कर

ली जाती थी। गर्मी में सब के सब बाहर सोते थे। बारिश पड़ने पर खोली में चले जाते थे। यहाँ मच्छर तो न थे पर खटमल अँधेरी से ज्यादा ही थे। रामदुलारे के पास एक खाट थी। उसे उसने जीवन को दे दिया। शुरू-शुरू में तो जीवन दुकान के दरवाजे पर ही खाट बिछा कर सोता पर किरपा आधी रात से ही दूधवालों से दूध के बँटे लेने व बँधी का दूध देने जाने के इन्तजाम में खटर-पटर करने लगता। दुकान का दरवाजा खुलने पर खाट को भी सरकाना पड़ता। इससे जीवन ने अपनी खाट चाल के बड़े फाटक में बिछानी शुरू कर दी। फाटक खूब लम्बा चौड़ा था और उसके ऊपर भी खोलियाँ बनी हुई थीं। वे छत का काम करतीं। वहाँ से पन्द्रह-बीस फुट के फाँसले से ही ट्रामें चलती। ट्रामें, रफतर से ज्यादा शोर मचातीं। फाटक की छत में कोई एक सौ वाट का बल्ब जलता। फिर भी जीवन को सोने के लिये वह जगह अच्छी मालूम दी। बिजली की रोशनी और ट्रामों के शोर में सोने का उसने अभ्यास कर लिया। ट्रामें रात के बारह बजे तक चलतीं और फिर सुबह तीन बजे से दौड़ने लगतीं। बसें भी चलतीं पर उनका शोर ट्रामों के मुकाबले कुछ न था।

फाटक में सोने में एक दो दिक्कतें और थीं। पर जीवन ने उनका भी अभ्यास कर लिया। नीचे की खोलियों में रहने वाले लोग चाल की भीतरी सड़क पर सोया करते थे। सब ने अपना पेशाब घर फाटक के पास की एक जगह को जहाँ कूड़ेदान भी था बना रखा था। जीवन की कोशिशों के बावजूद भी किसी ने उसका स्तेमाल बन्द न किया। दूसरी रात को मवाली लफंगे उसकी खाट के आस-पास ही बैठ कर शोर मचाया करते। एक बार उसने उन्हें बन्द करने की कोशिश की तो उन्होंने चाकू निकाल कर दिखाया और कह दिया, "खाली पीली बात मत करो सेठ। हम किसी को कुछ नहीं समझते। खाट उठा कर फक देंगे।"

जीवन ने उस अपमान को भी सह लिया। खुद रात में उसे जब पेशाब जाना होता तो खोली के बाहर सड़क पर जाता। उस कोने में वह कभी न करता। भीतर पाखानों में जाने की हिम्मत न होती। खोलियों के गलियारे को पार करके वहाँ जाना पड़ता। उस गलियारे में भी लोग

सोये रहते। उनके जीवन के बहुत से व्यापार वहाँ चलते रहते। जीवन पहले ही दिन वहाँ जा कर लौट आया था। पर एक रात सड़क पर पेशाब करने में गश्त लगाने वाली पुलिस ने उसे पकड़ लिया। सिपाही ने उससे अत्यन्त अभद्र व्यवहार किया। पर सार्जेन्ट ने जो कुछ और सिपाहियों के साथ थोड़े फासले से ट्रामों की पटरियों के बीच की ऊँची पटरी पर चल रहा था, उसे भद्र जान कर छोड़ दिया। ये सब अनुभव उसे रामदुलारे की खोली में पहुँचने के पन्द्रह दिन के भीतर ही हो गये। सुबह पाखाने की भी व्यवस्था भयानक थी। फ्लश सिस्टम था जो अक्सर बिगड़ा रहता। लम्बा क्यू लगाना पड़ता और पेट के दर्द को किसी तरह नाभि पर हाथ फेर-फेर कर सहना पड़ता। वह भाग कर कहीं अन्यत्र जा भी तो नहीं सकता था। इसलिये उसने खुद को उन सब परिस्थितियों का आदी बना लिया। अब वह खुद को उन लाखों लोगों से कहीं भाग्यशाली मानने लगा जो सड़क की पटरियों पर आसमान के रहम पर पुलिस की निगरानी में सोया करते थे।

खाने की व्यवस्था भी कोई पक्की नहीं थी। सस्ते से सस्ते होटल की उसे तलाश रहती और जहाँ कहीं उसे सस्ते खाने का पता चलता वहीं जा कर खा लेता। रेडियो से जो रुपया उसे मिला था उसमें उसने महीने भर गुजारा किया। महीने के अन्त में उसे जब एक सौ रुपये एक साथ मिले तो वह अत्यन्त सम्पन्न व्यक्ति के सदृश उल्लास से भर उठा। पर यह उल्लास क्षणिक था। वह फौरन सोचने लगा कि कितने रुपये भाभी को भेजे, कितने खुद रखे और कितने दिनेश को दे दे। रामदुलारे की खोली में रहता हूँ अतएव उसे भी कुछ देना चाहिए। इन सबका हिसाब लगाता हुआ वह परेल आया। रामदुलारे ने कुछ भी लेने से साफ इन्कार कर दिया। अगले दिन सुबह वह दिनेश से मिलने अँधेरी गया। दिनेश ने उसके इरादे को बेहद बुरा बता कर उसे खूब डाँटा। जीवन से कुछ कहते न बना। अन्त में उसने पचास रुपये घर भेज दिये और पचास अपने गुजारे के लिये रख लिये।

जीवन का लिखने-पढ़ने का क्रम टूटा हुआ था। न तो परिस्थितियाँ अनुकूल थीं और न इतना अवकाश ही। सिनेमा का संकल्प तो उसने सर्वथा त्याग दिया था। अब वह समस्त महत्वाकाँक्षाओं से विरहित सिर्फ पेट के

लिये जी रहा था। फिर भी उसे सरिता की याद आती। वह तो सोचता था कि बम्बई में आ कर वह सरिता के समीप हो सकेगा। बम्बई में वह रुपया कमायगा, सम्पन्न बनेगा और फिर सरिता के परिवार में उसका आदर होगा। सरिता की याद आती और विकल कर जाती। पर न तो उसने ही सरिता को कोई पत्र लिखा था और न सरिता का ही कोई समाचार उसे मिला। कौन जाने उसका ब्याह ही हो गया हो। जीवन पेट की चिन्ता से मुक्त होते ही सरिता की चिन्ता करने लगता। कभी-कभी उसे अपने इस निरर्थक जीवन से ऐसी घृणा होती कि वह इसे समाप्त ही कर डालना चाहता। पर जीवन न तो कभी दूसरे की हत्या कर सकता था और न अपनी ही। दूसरे की हत्या के लिये जो निर्दयता चाहिए वह उसमें कभी आही नहीं सकती थी। अपनी हत्या के लिये जो बल चाहिए उससे भी वह हीन था। वह आत्महत्या की बात सोचकर छोटा हो सकता था, पर आत्महत्या करके बड़ा नहीं बन सकता था।

दफ्तर का वातावरण भी कुछ ऐसा था कि उसे लगता जीवन में रोटी से भी अधिक कुछ पाने भोगने योग्य है। तब उसे सरिता और याद आती। तन की भूख और बढ़ती। वह समझ ही नहीं पाता कि पेट की भूख बड़ी कि तन की भूख! वह माँगों के चौराहे पर खड़ा था। दिल की माँग, दिमाग की माँग। पेट की माँग, तन की माँग। अपनी माँग, घर की माँग। माँग ही माँग। कौन-सी माँग पूरी करे, कौन-सी माँग छोड़ दे यह उसके जीवन का सबसे जटिल प्रश्न हो गया था।

इसी तरह दिन बीतते गये। जीवन संघर्ष भी बढ़ता गया! सौ रुपए माह की नौकरी तो मिली। पर उसकी आवश्यकताओं का हल न हुआ! रामदुलारे में वह पूर्ण मनुष्य के दर्शन करता। जीवन उसके यहाँ रह रहा है यह उसके लिये गर्व का विषय था। उसके गाँव के या दूसरे परिचित लोग जब आते और जीवन भी होता तो वह गर्व पूर्वक जीवन का उन सब से परिचय कराया करता। पर जीवन अपने आप को रामदुलारे के स्नेह और आदर की तुलना में कहीं छोटा पाता। फिर भी रात को आ कर और रामदुलारे से बातें करके उसे शान्ति मिलती।

धीरे-धीरे कई महीने बीत गये। नवम्बर का महीना आया और चला भी गया। पर ऋतु परिवर्तन की कोई अनुभूति उसे हुई ही नहीं। उसे कुछ अजीब-सा लगता। अपना घर याद आता। वहाँ की ऋतुएँ याद आतीं। हर ऋतु के साथ-साथ खान-पान और पहनावे में भी अन्तर आता। मन ही बदलने लगता। पर यहाँ वैसा कुछ न था। बरसात बीती तो जरूर पता चला कि कीचड़ के दिन बीत गये। पर शेष बातें एक-सी थीं। उसके अपने घर की गंगा वर्षा में कैसा उद्दाम रूप पा लेती थी। फिर जाड़ों में विरहिणी नायिका-सी क्षीण दिखाई पड़ती थीं। उन दिनों जल नीलम-सा स्वच्छ हो जाता था। पर यह समुद्र तो प्रतिक्षण रंग बदल कर भी कहीं स्थिर-सा है। ज्वार-भाटा तो इसका नित्य का स्वभाव है। सदा एक-सा बना रहता है। प्रकृति की यह स्थिरता उसे बड़ी अजीब लगी। घर पर लोग गरम कपड़ों में भी ठिठुरते होंगे। रात को लिहाफ में भी जाड़ा घुस आता होगा। दिन कितने छोटे हो गये होंगे। रातें कितनी लम्बी हो गयीं होंगी।

उसका जीवन भी वैसे एक रसता में सड़ गया था। वही परेल की चाल में रात का सोना। दिन में दफ्तर। शाम को इधर-उधर आवारागर्दी। खाने के लिये कभी मारवाड़ी बासा, तो कभी गुजराती बासा। कभी मराठी भोजनालय तो कभी ईरानी होटल। वह जो खाना नित्य खाता जाने कैसा था। उसे भूख रहती थी इसलिये खा लेता था। पैसे भी थोड़े लगते! थोड़े से पैसों में अपने पेट को बहका कर जीवन को खुशी होती। फिर भी कपड़े उसके साफ न रह पाते। दाढ़ी वह कई-कई दिन बाद ही बना पाता। तेल उसे मुश्किल से मयस्सर होता और दफ्तर में उसे गन्दा और कँजूस समझा जाता। रमणीक भाई उसकी हँसी उड़ाता। लड़कियाँ उससे बात करना पसन्द न करतीं। उसकी इच्छा होती कि वह भी रमणीक भाई की तरह उनसे घुलमिल सकता। पर रमणीक भाई का-सा एक भी तो गुण उसमें न था।

अचानक उसे ईसाई लड़की एलिजाबेथ में एक खास अन्तर दिखाई पड़ा। उसे सब कोई एलिजा कह कर पुकारते थे। रमणीक मिस एलिजा कहता था। इसका कारण भी यही था कि एलिजाबेथ को पसन्द न था कि वह उससे अधिक घलेमिले। गोन लड़की उससे अधिक हिली मिली थी। पारसी

लड़कियों का नम्बर दूसरा था। उन दोनों में एक अजीब-सी स्पर्द्धा थी जो रमणीक बड़ी कुशलता से पैदा कर सका था। उनकी स्पर्द्धा को बढ़ावा दे दे कर वह दोनों का कृपापात्र बना रहा। एलिजाबेथ जो पहले सब से अधिक हँसोड़ और मुँहफट थी इधर गम्भीर हो उठी थी। देह उसका गदराया हुआ था और रंग साँवला। कन्धों पर लहराने वाले बाल हल्के काले और रूखे थे। फिर भी जहाँ सुन्दरता में गोन लड़की नीली सबसे बड़ी-चढ़ी थी आकर्षण में एलिजाबेथ ही थी। उसकी आँखों में अजीब रस घुला रहता और होंठों के किनारे कुछ ऐसे थे कि उसका भरा-भरा मुख और भी सुन्दर लगता। ठोड़ी छोटी और गालों की गुलाई में समाई हुई थी। जीवन के अतिरिक्त किसी ने उसकी उदासीनता की विशेष चिन्ता न की थी। रमणीक ने उससे नित्य की भाँति दो-चार बार मज़ाक के प्रयत्न किये पर उसका असहयोग देख कर वह दूसरी लड़कियों में व्यस्त हो गया। वह उन लड़कियों से हंसता हुआ कहता, "यह जीवन बड़ा मनहूस साबित हुआ। इसका कुछ ऐसा साया पड़ा कि मिस एलिजा की हँसी ही मर गयी।"

रमणीक को एलिजा की हँसी का गायब हो जाना इतना खटकता है, इसे हर लड़की ने बुरा माना और उस बात को बढ़ावा ही न दिया। एलिजा दफ्तर नियमित रूप से आती और जब टाईपिंग का काम न रहता तो निटिंग में वक्त गुजारती। रमणीक लड़कियों का बहुत-सा काम उनका कृपापात्र बना रहने के लिए खुद कर डालता था। वह जब उन्हें निटिंग करते देखा करता तो अक्सर कह दिया करता था : "बस एक यही काम मुझे नहीं आता। नहीं तो यह भी कर डालता।"

जीवन एलिजा की उदासी को न टूटते देख उसकी ओर आकृष्ट हुआ। वह उससे बातें करना चाहता, पर कोई बहाना ही उसे न मिलता। नित्य सोचता कि दफ्तर में पहुँच कर जब उसे गुडमार्निंग कहेगा तो तभी उदासी का कारण भी पूछ लेगा। पर उस अवसर का भी लाभ न उठा सका।

इसी तरह दिन बीतते गये और एलिजाबेथ में उसकी दिलचस्पी बढ़ती गयी। एक दिन एलिजाबेथ दफ्तर से चलते-चलते उससे अचानक बोल उठी, "मिस्टर जीवन, आप मुझ पर एक कृपा करेंगे।"

जीवन उस आकस्मिक प्रश्न के अचरज भरे उल्लास में मूक ही रह गया। एलिजाबेथ ने उसके कुछ भी कहने की प्रतीक्षा किये बिना उस की ओर एक मुड़ा हुआ कागज बढ़ाते हुए कहा, "यह मेरी अर्जी है। मैं कल ठीक वक्त से न पहुँचूँ तो बॉस को दे देना।"

जीवन ने अर्जी ले ली। वह कुछ कहना चाहता था। पर एलिजा ने अवसर ही नहीं दिया और कमरे से बाहर हो गयी। जीवन भी एकक्षण रुक कर चलने को हुआ। तभी एलिजाबेथ फिर लौटी। बोली, "पर बॉस तुम से पूछे कि यह अर्जी तुम्हें किसने दी तो कह देना कि मैं आज सुबह उसके घर गया था। उसकी तबीयत ठीक नहीं है।"

जीवन ने तभी पूछा, "आप कहाँ रहती है मिस एलिजा।"

उसने कहा, "आज तक तो खार में हूँ। पर कल कहाँ होऊँगी नहीं जानती ?"

जीवन ने कुछ झिझक के साथ कहा, "माफ करना मिस एलिजा। आप आजकल कुछ परेशान जान पड़ती है !"

एलिजा घूम कर चल पड़ी थी। इस बार जीवन उसके साथ ही हो लिया था। एलिजाबेथ बिना कुछ कहे चलती रही। जीवन ने फिर कहा, "मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूँ।"

एलिजा ने बिना रुके गर्दन थोड़ी-सी तिरछी की। जाने कैसी दृष्टि से उसने जीवन के दाढ़ी से खुरदरे और कमजोरी से पीले पड़े चेहरे को देखा। कदाचित् उन आँखों में अविश्वास था। वे कह रही थीं कि तुम क्या मदद कर सकते हो। पर जीवन न समझा। एलिजा फिर भी चुप रही। जीवन ने पुनः कहा, "आप मुझे गलत न समझें। मैं सचमुच ही आपको दुखी देख कर दुखी हूँ।"

चलते-चलते एक ईरानी रेस्टोराँ आ गया था। जीवन ने जाने क्या सोच कर प्रस्ताव किया, "आपको देर न हो रही हो तो एक कप चाय पी लीजाय।

एलिजाबेथ ने चुप रह कर उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। दोनों रेस्टोराँ के भीतर गये और एक कोने वाली मेज पर बैठ गये। जीवन ने चाय के लिए आर्डर दिया, "बाय एक कप चाय।"

एलिजा ने उसकी तरफ देखे बिना कहा, "एक कप क्यों ?"

"मैं तो पीता नहीं," उसने कहा।

"तो पिलाने की ही क्या जरूरत थी," एलिजा ने पूछा !

"मैं आपसे बातें करना चाहता था। मैं आपसे बहुत दिनों से बातें करना चाहता था। पर•••" इतना कह कर वह चुप हो गया।

एलिजा ने बॉय से कहा, "जाओ, दो कप ले आओ। और साथ में दो केक भी !"

बॉय चला गया। वह जीवन से बोली, "किसी को चाय के लिये बुला कर खुद उसके साथ शरीक न होना असभ्यता है। मैं इस समय कुछ खाना भी चाहती थी। इसी से केक भी मँगा ली। आज दफ्तर भूखी ही चली आयी थी !"

जीवन ने चाय केक के आर्डर पर कोई आपत्ति न करते हुए कहा, "क्यों ?"

"क्यों ? इस क्यों का जवाब बहुत बड़ा है। आप सुनकर करेंगे भी क्या ?" एलिजा ने टालना चाहा।

जीवन ने आग्रह पूर्वक कहा, "हम एक ही दफ्तर में काम करते हैं। इस नाते मैं आप की दोस्ती का हक रखता हूँ और उस हक के नाते आपकी परेशानी का साझीदार हो सकता हूँ।"

एलिजा अभी तक जीवन को एक बुद्धू और लड़कियों से बात करने में झेंपने वाले लड़के के रूप में लेती आयी थी। आज उसकी बातों से उसकी धारणा बदलने लगी। कुछ क्षण के लिए वह अपनी परेशानी भूल गयी। कुछ मुसकुराती-सी बोली, "आप किस हद तक मेरी परेशानी में साझा कर सकते हैं।"

जीवन को कोई ठीक-सा जवाब सहसा न सूझा, फिर भी कह दिया, "जिस हद तक मुमकिन हो।"

"मुमकिन तो सभी कुछ हो सकता है," एलिजाबेथ फिर गम्भीर हो गयी थी, जैसे उसे कोई पिछली बात याद आ गयी हो।

जीवन चुप ही रहा। एलिजाबेथ ने फिर पूछा, "आपकी निगाह में कोई मकान है।"

जीवन ने अपनी परेल वाली चाल का स्मरण करते हुए कह दिया, "मकान तो मैं खुद आज तक न पा सका। दूसरों के साथ रहता हूँ।"

"आप कोशिश क्यों नहीं करते।" एलिजाबेथ बोली, "मैं भी आपकी साझीदार हो सकती हूँ। कहीं भी थोड़ी-सी जगह मिल जाये। बोलिए आप को पसन्द है मेरा सुझाव।"

जीवन ने हिचक के साथ कहा, "पर आपके मा-बाप···?"

वाक्य अधूरा रह कर प्रश्न बन गया ! 'मा बाप' दो शब्द उसके कानों में चुभ गये। उसका चेहरा वेदना से स्याह पड़ गया। उसने कहना चाहा कि मेरे मा-बाप कोई नहीं। पर कह न पायीं। इतने में बॉय चाय और केक ले आया था। जीवन ने चाय का कप अपने होंठों से लगा लिया। एलिजाबेथ ने केक की प्लेट उसकी ओर बढ़ाई। कहा, "यह भी लो।"

जीवन ने कहा, "इसमें तो शायद अंडा होता है।"

एलिजाबेथ ने उसके पीले मुख को देखा और जोर दे कर बोली, "खाओ भी। अपने आपको खाना भी तो कोई बहुत अच्छा नहीं।"

उसके कहने में आत्मीयता थी। जीवन ने केक उठा ली। धीरे-धीरे खाने लगा। उसका स्वाद उसे अच्छा न लगा। बोला, "मुझे तो पेड़ा अच्छा लगता है।"

एलिजाबेथ अपनी निगूढ़ वेदना भूल कर हँस पड़ी। हँसते-हँसते बोली, "आप खूब हैं। केक खाते हुए भी पेड़े की सोचते हैं। केक और पेड़े में तो कोई समता नहीं।"

जीवन झेंप गया। चुपचाप केक खाने लगा। भूख उसे भी लग रही थी। केक खा कर चाय पी तो स्फूर्ति आयी। उसने जल्दी ही अपनी चाय और केक खत्म कर दी थी। पर एलिजाबेथ धीरे-धीरे खा रही थी। खाते-खाते बोली, "आप बेहद कमज़ोर हैं। टी. बी. जैसे मरीज़ जान पड़ते हैं। मेरे साथ रहें तो मैं आप को मोटा कर दूँ। आप मकान खोज सकें तो···।"

'तो' पर वह आपही रुक गयी ! जीवन का पूर्व प्रश्न उसके सामने आ खड़ा हुआ। कुछ रुक कर बोली, "आपने मेरे मा बाप के बारे में पूछा था। आज मा-बाप ही मेरे लिये समस्या हो गये हैं। मेरा उनके साथ रह पाना मुश्किल हो रहा है।"

कुँवारी लड़की का मा-बाप के साथ रहना क्यों मुश्किल हो सकता है, जीवन नहीं समझ पा रहा था। जो कारण उसकी समझ में आ भी रहा था वह यही कि शायद एलिजाबेथ को किसी से प्रेम है और इसी से वह मा बाप के साथ न रह कर उसके साथ रहना चाहती है। पर बात उसे जंची नहीं! ऐसा होता तो वह उसके साथ रहने का प्रस्ताव हर्गिज न करती!

जीवन को चुप देख कर बोली, "आप किस सोच में पड़ गये। आप की समझ में मेरी उलझन नहीं आयगी। मेरे पिता की मृत्यु कोई दो साल पहले हो चुकी है। मेरी मा ने कुछ ही महीने हुए दूसरी शादी की है। मेरे नये पिता···"

वह आगे कुछ नहीं कह सकी। जीवन ने सौतेले बाप को सौतेली मा का स्थान दे कर एलिजा की विडम्बना का एक कल्पित चित्र खींच लिया। एलिजाबेथ का चाय और केक खत्म हो चुकी थी। खाली प्याले को प्लेट से खनकाती हुई बोली, "अभी आप नहीं समझेंगे। अभी आप नहीं समझेंगे।"

उसने उस वाक्य को दोनों बार इतने बलपूर्वक कहा कि जीवन सचमुच ही कुछ समझ न सका। वह कुर्सी पर से उठखड़ी हुई और अपना वेनिटी बैग भी सम्हाल लिया। जीवन भी चुपचाप उठ खड़ा हुआ। काउन्टर पर जा कर उसने बिल चुकाया। फिर एलिजाबेथ के साथ ही हो लिया। दोनों चर्चगेट की तरफ जा रहे थे। एलिजाबेथ ने पूछा, "आप कहाँ रहते हैं।

"परेल···" जीवन ने कहा।

"तब तो आप जी. आई. पी. से जाते होंगे," वह बोली।

"हाँ," जीवन ने कहा, "पर अभी मैं घूमता-फिरता जाऊँगा। आपको एतराज न हो तो चर्चगेट स्टेशन तक आपको छोड़ आऊँ।"

"खुशी से···" एलिजाबेथ की दुखभरी आँखों ने सच्ची खुशी की एक झलक दिखा कर उसके कथन की पुष्टि की।

पर रास्ते में दोनों में फिर कोई खास बात नहीं हुई। स्टेशन पहुँच कर एलिजाबेथ ने कहा, "साथ के लिये शुक्रिया। अब आप जायँ! कल मैं शायद ही आ पाऊँ। मुझे शायद दो एक जगह मकान की तलाश में जाना पड़े। अच्छा गुडनाइट।"

"गुडनाइट···" जीवन ने भी दोहराया और वह अकेला रह गया।

रात अभी साँझ के आँगन में प्रवेश न कर पाई थी, पर एलिजाबेथ गुडनाइट कह कर जैसे कह गयी थी अब रात भर के लिये बिदा ! रात तुम्हारी शुभ हो !

उस शुभ रात के बारे में सोचता-सोचता जीवन समुद्र तट की तरफ चला आया। सूरज डूब चुका था और काला अन्धकार नीले समुद्र की छाती पर लोटने लगा था। जीवन ने थकान अनुभव की और वह मेरीनड्राइव की सीमेंट वाली पटरी पर बैठ गया। उसकी चिन्ताधारा में एलिजाबेथ की मोहक आँखें चमकीली मछली-सी तैर रही थीं। गुडनाइट, एलिजा, सौतेला बाप आदि शब्द बारबार उसके कानों में गूँज उठते और वह उस गूँज में किसी गूढ़ अर्थ की उपलब्धि के लिये बेचैन हो उठता। पर उसकी समझ में कुछ न आया।

कितनी ही देर तक उस एक स्थान पर बैठे रह कर वह बोरीबन्दर की तरफ चला। अब तो उसे खाना भी नहीं खाना था। आज वह अपने बजट की मर्यादा लाँघ चुका था। सुबह भी उसने खाने में छ आने खर्च किये थे। आठ आने अब खर्च हो गये। आज तो उसे साबुन भी खरीदना था। साबुन खरीदने का अर्थ होगा कि कल पूरा उपवास करे। न करे तो महीने के आखिरी दिनों में क्या करेगा।

बोरीबन्दर के पास ही सिंधी खोम्चे वाले बैठते थे। आज वह पूरी और छोले खा कर पेट डट कर भरना चाहता था। पर अब वह वैसा सोच भी नहीं सकता था। स्टेशन आया और परेल वाली गाड़ी में बैठ कर उसके छूटने की प्रतीक्षा करने लगा।

रास्ते भर वह कभी एलिजाबेथ के बारे में सोचता रहा तो कभी अपने बजट के बारे में। एलिजाबेथ की उसने एक-एक बात को मन ही मन दोहराया और महीने के शेष दिनों में किस दिन कितना भोजन में व्यय करेगा इसका हिसाब भी लगाया।

चाल में पहुँचते ही रामदुलारे ने मीठे शब्दों में स्वागत किया, "मैं तुम्हें याद ही कर रहा था भैया। आज तुम जल्दी ही चले आये बड़ा अच्छा किया। आज मैंने किरपा से कहा था कि भैया के लिये बढ़िया दूध रखना। जब से

तुम परेल आये हो और भी कमज़ोर हो गये हो। मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है।"

रामदुलारे ने छोटे भाई को आवाज दी, जो बगल की दूकान वाले से कुछ बातें कर रहा था। जीवन ने पटरी पर बिछी खाट पर बैठते हुए कहा "नहीं, दूध तो मैं नही पी सकूँगा! आज पेट बेहद भरा है। जरा लेट कर कमर सीधी करना चाहता हूँ।"

रामदुलारे ने खुद उठ कर चट से उसका बिस्तर खाट पर बिछा दिया। जीवन दिन के कपड़ों में ही खाट पर लेट गया। रामदुलारे उसके मुँह पर झुका विनय के साथ कह रहा था, "भैया पी भी लो दूध! रोज ही तुम बहाना कर देते हो कि मेरा पेट भरा है। दूध की दूकान होते हुए भी मैं कभी तुम्हें दूध न पिला सका।"

रामदुलारे का स्नेह देख कर जीवन सोचता कि दूध पीले। पर तत्काल उसके मन में दूसरा विचार आता कि उसे अधिकार क्या है जो दूध पीये। दूसरे की अच्छाइयों का फायदा एक सीमा तक ही उठाना चाहिये। जब वह खुद इतना नहीं कमा सकता कि भर पेट रोटी भी खा सके तो उसे क्या हक कि मुफ्त का दूध पीये।

जीवन ने जिद्दी बालक की तरह निषेध करके आँखें बन्द कर लीं। रामदुलारे उदास-सा दूकान में रोकड़ वाली चौकी पर आ कर बैठ गया और बेमन से गाहकों को दूध देने लगा। वह जानता है कि जिस दूध को वह गाहक को दे रहा है उसमें दूनमदून का पानी है। पर भैया के लिये तो उसने बढ़िया दूध निकलवा कर रखा था। किरपा से कह दिया था कि उसमें एक बून्द भी पानी न हो। यह सोचते-सोचते रामदुलारे की आँखों में भी पानी भर आया।

उधर खाट पर लेटा-लेटा जीवन दूध के साथ-साथ अपने बचपने में पहुँच गया था। तब वह दूध से नफरत करता था। पिटपिट कर पीता था। फिर भाभी से ब्याह के लोभ में पीने लगा था, फिर भी गिलास में दूध जूठा छोड़ देता था। भैया कहा करते थे कि अरे दुष्ट दूध छोड़ता है, दूध तो देवताओं को भी मयस्सर नहीं होता। उनकी इस बात पर वह हँसा करता था।

देवताओं को दूध नहीं मिलता, कितनी झूठ बात ! पर आज उसे उस बात की सच्चाई जान पड़ रही थी । दूध सचमुच ही दुर्लभ हो उठा था । उसे भैया की याद आयी । उनकी याद से बच कर वह भाभी की स्मृति में उलझ गया । फिर शिब्बन याद आया । रजनी याद आयी । प्रयाग याद आया । सिंह याद आया । वह काली रात, सरिता—और सरिता से मोतिया । मोतिया से एलिजाबेथ । पर अन्त में सरिता और एलिजाबेथ ही उसके दिमाग में रह गयीं । सरिता जाने कहाँ थी ? कैसी थी ? एलिजाबेथ आज की रात अपने पिता के घर में जाने कैसे बिता रही होगी ? सौतेला बाप ? क्या सौतेला बाप सचमुच बुरा होता है ? सरिता के तो अपने पिता थे । फिर भी वे सरिता की स्वतन्त्र इच्छा में बाधक थे । और यह सौतेला बाप जाने कैसा होगा ? कैसा ?

जीवन सोचते-सोचते ऊँघने लगा ।

अगले दिन ठीक समय से दफ्तर पहुँचा । एलिजाबेथ भी वहाँ थी और अपने निटिंग में व्यस्त थी । मुद्रा उसकी कल ही जैसी थी ! जीवन ने उसके पास जा कर कहा, 'गुडमार्निंग' । और उसकी चौतहाई हुई, अर्जी उसे वापस दे दी ! एलिजाबेथ ने गुडमार्निंग का जवाब दिया और आँखों को थोड़ी-सी खुशी की चमक दे कर अर्जी ले ली !

दफ्तर के लिये यह बिल्कुल नयी चीज़ थी । जीवन किसी लड़की से बात कर सकता है और उसे सबके सामने चिट्ठी भी दे सकता है, इसका सब को अचरज हो रहा था । रमणीक कुटिल ढंग से मुसकुराया । गोन लड़की नीली तिरछी आँखों से देखती रही । पारसी लड़की मेहरा ने सोफिया की कोख में गुदगुदी उठाते हुए उधर देखने का इंगित किया । तभी बॉस ने भी प्रवेश किया । जीवन को एलिजाबेथ के पास खड़ा देख कर वह मुसकुराया । उसी तरह मुसकुराता हुआ वह अपने कमरे में चला गया और इधर-उधर फोन करने में व्यस्त हो गया । कर्मचारियों के निजी जीवन में वह कतई दखल न देता था । अपना काम मेहनत से करता था और जब थक जाता तो किसी भी लड़की को बुला कर उससे थोड़ी देर हँस बोल लेता था । दूसरे दफ्तरों में लोग उसे ऐयाश तबीयत समझते थे । पर उसकी ऐयाशी कुछ देर बात

कर लेने या साथ बैठा कर चाय पीलेने तक ही थी। दफ्तर के बाहर कभी किसी ने उसे अपने यहाँ काम करने वाली लड़की के साथ नहीं देखा। अपने दफ्तर में भी वह ज्यादा देर नहीं बैठ पाता। उसके और भी कई कन्सर्न थे। उनके सिलसिले में यह इधर-उधर आता-जाता। रमणीक भाई से वह खूब खुश था। रमणीक चालाक था और काम में चुस्त भी। बॉस को इससे ज्यादा कुछ चाहिये भी न था।

बॉस के आने पर सबने कुर्सियाँ छोड़ीं। गुडमार्निंग सर, कह कर हाथ उठाये और गर्दनें झुकायीं। एलिजाबेथ उठ ही न पायी पर जीवन ने उठने की चेष्टा करते हुए गर्दन झुका कर 'गुडमार्निंग' में भी दोनों हाथ जोड़ दिये। इस पर उसकी काफी हँसी होती। पर पूर्व अभ्यास को वह सहसा मिटा न सका।

बॉस के अपने कमरे में पहुँच चुकने पर उसने एलिजाबेथ से कहा, "आज आप आ ही गयीं।"

"हाँ,—" वह बोली, "मैंने सोचा कि कुछ और सोच लूँ। मकान अगर मिल भी जाये तो क्या मैं अकेली रह सकती हूँ!"

इतना कह कर वह बुनती के घर गिनने लगी। जीवन अपनी कुर्सी पर चला आया। वह रमणीक के पास ही बैठता था। रमणीक ने उसके पास आने पर कहा, "कान्ग्रेच्यूलेशन्स।"

जीवन अनायास ही झेंप गया। रमणीक ने उसे चुप देख कर धीमे से कहा, "वह ईसाई है यह मत भूलना। जरा ढंग से रहना सीखो। कोट-पैंट पहनना शुरू कर दो। धोती भी कोई पहनने की चीज़ है। औरतों की पोशाक। और इस दाढ़ी से भी ज़रा बेदर्दी से काम लो। रोज़ इसे उस्तरा दिखाया करो।"

उसकी इन बातों में जीवन का पीला मुख भी लाल हो गया। चुप रह कर उसने दिखावटी विरोध किया। पर भीतर ही भीतर वह कहीं खुश भी था। वह सोच रहा था कि यदि एलिजा सचमुच ही उसके प्रति कोमल हो उठे और···"

रमणीक कह रहा था, "जब कदम बढ़ाया है तो पीछे लौटना नहीं!

सपोर्ट पर मैं हूँ। घबड़ाना नहीं। पर एक बात है। मुहब्बत के फेर में न पड़ना। मज़ा करना और अलग रहना।"

यह कह कर उसने कुछ ऐसी मुद्रा बनाई कि जीवन उसके प्रति घृणा से भर उठा। उसने उसकी ओर से आँखें हटा लीं और काम करने में लग गया। रमणीक ने भी फाइलें उठाईं। तभी उसे बॉस ने बुला लिया। कुछ देर बाद बॉस के पास से लौटा। हाथ के काग़ज अपनी मेज़ पर रखे और फिर जीवन के पास आ कर एक हाथ उसकी कुर्सी पर रख कर झुकता हुआ बोला, "पर यार यह भी बता दूँ कि लड़की खतरनाक है। जल्दी से हत्थे चढ़ने वाली नहीं। तुम्हारी सारी तनख्वाह चट कर जायेगी और जब तुम भूखों मरने लगोगे तो परवाह भी न करेगी।"

जीवन से अब सहा न गया। कह दिया, "मुझ से यह सब बातें मत करो।"

"ओ : तब तो हज़रत इश्क फरमाने लगे हैं," इतना कह कर उसने अपने कन्धों को हिलाया और हाथों से एक विशेष अभिव्यक्ति करते हुए कह दिया, "तुम्हारी मर्ज़ी।"

उधर नीली ने एलिजाबेथ से जा कर कहा, "किस बेवकूफ को हिला लिया। कल उससे बातें की और आज उसने तुम्हें खत भी दे दिया। अजीब बात है। दिन भर साथ रहने पर भी खत लिखने की जरूरत पड़ती है। भला ऐसी क्या बात है जो सीधे से नहीं कही जा सकती !"

एलिजाबेथ ठीक-ठीक समझी नहीं। पूछा, "क्या कह रही हो नीली।"

नीली ने निटिंग करते हुए उसके हाथों को थाम कर कहा, "अजी खत क्या तुम्हें दफ्तर में कोई और भी देता है !"

एलिजाबेथ को बुरा लगा। कह दिया, "नीली मुझे बेकार की बातें अच्छी नहीं लगतीं।"

"हूँ," नीली शरारत से भर कर मुसकुरायी, "अब तो हमारी बातें बेकार ही लगेंगी ! खैर हमने तो जो देखा वही कहा ! पर एक बात है, पसन्द की तुम्हारी मैं दाद नहीं दे सकती।"

एलिजाबेथ को इस बात पर गुस्सा आ गया। कुछ तीखे स्वर में कह दिया, "मेरी पसन्द की आलोचना न करो। मैं अपनी पसन्द को खुद खूब समझती हूँ।"

नीली से कुछ जवाब न बना। अपना-सा मुँह ले कर सोफिया और मेहरा के पास चली आयी। वे भी यही बातें कर रही थीं। मेहरा ने फुसफुसा कर कहा, "जीवन बेवकूफ है।"

सोफिया बोली, "आख़िर दिल तो उसके पास भी है। क्या करे बेचारा जो काबू में न रहा।"

नीली ने दुर्भावना के साथ कहा, "यह एलिज़ा बड़ी चालाक लड़की है। यह हमेशा ऐसे ही बेवकूफों को फाँसती है। मालूम नहीं, वह मराठा लड़का इसी की वजह से दफ्तर से निकाला गया?"

सोफिया ने कहा, "इसमें कुसूर उसी का था। उसने एलिज़ा को ग़लत समझा!"

नीली बोली, "ग़लत तुम समझ रही हो! तुम्हें क्या मालूम कि असलियत क्या थी!"

मेहरा बोली, "डैमिट। अपना काम करो। ऐसी बातें तो हुआ ही करती हैं। क्यों सोफिया!"

मेहरा ने सोफिया की चुटकी ली थी। सोफिया भी न चूकी, "मुझ से क्या पूछती हो। खुद ही तुम इसकी ताईद करोगी।"

इस पर दोनों हँस पड़ीं और नीली एलिज़ाबेथ के प्रति अपने मन का रोष न निकाल पा कर अपनी कुर्सी पर आ बैठी।

दिन भर जीवन और एलिज़ाबेथ में फिर कोई बात नहीं हुई। जीवन शाम की प्रतीक्षा कर रहा था जिससे एलिज़ाबेथ के साथ-साथ चर्च गेट तक जा सके और उससे बातें कर सके।

शाम हुई। दफ्तर बन्द हुआ। रमणीक ने कुर्सी पर से उठते हुए कमरे को गुँजाते हुए कहा, "अपनेराम तो चले जीवन! गुडलक टुयू! गुडनाइट।"

उसकी इस बात पर दोनों पारसी लड़कियाँ और नीली हँस पड़ी। नीली की हँसी कुछ उदात्त और अस्वाभाविक थी। उसने हँसते-हँसते एलिज़ाबेथ की ओर भी देखा। एलिज़ाबेथ उनके इस व्यवहार से परेशान हो उठी थी। पर नीली की दृष्टि ने उसे उत्तेजित किया। वह अपनी

परेशानी को छिपा कर अपनी सीट पर से ही बोली, "वेट मिस्टर जीवन ! मैं अभी आयी। साथ चलेंगे।"

इससे लड़कियाँ कुछ चकित-सी रह गयीं। नीली हतप्रभ हो उठी। रमणीक उसके पास जा कर बोला, "चलो, तुम मुझे अपने साथ चलने का मौका दो मिस नीली।"

नीली चिढ़ गयी। उसने अंग्रेजी में कहा, "मुझे हर वक्त मजाक पसन्द नहीं।"

पर रमणीक वैसे ही हँसता रहा। लड़कियों से फटकारें सुनने का वह आदी था। बोला, "मजाक नहीं करता। कन्क्रीट प्रोपोजल है। रेस्टोरां चलेंगे, फिर सिनेमा ! चलो।"

"सच," नीली की मुद्रा बदल गयी थी। बोली, "आज पर्स में काफी पैसे हैं शायद !"

रमणीक बोला, "पर्स का नाम ही बड़ी चीज है। पर्स में पड़ा हुआ एक पैसा भी अशर्फी होता है !"

दोनों साथ-साथ नीचे उतरे ! उनके पीछे-पीछे सोफिया और मेहरा। जीवन के पास से गुजरते हुए सबने मुसकुरा कर उसे देखा। जीवन सकपकाया-सा खड़ा रहा। सड़क पर आ कर कुछ दूर साथ चलने के बाद रमणीक बोला, "माफ करना नीली। मैं तो सचमुच मजाक कर रहा था। पिक्चर जाने का मेरा कोई आईडिया नहीं।

नीली गुस्से से भर उठी। बोली, "तो तुमने झूठ क्यों बोला। मैं जानती हूँ तुम बड़े कंजूस हो। तुम एक पाई किसी पर खर्चने वाले नहीं।"

रमणीक अचंचल भाव से बोला, "बात यह नहीं। मेरे पास इस समय एक भी पैसा नहीं। तुम कहो तो चलें।"

नीली ने बिगड़ कर कहा, "मैंने तुम्हें काफी सिनेमा दिखाये हैं और उतने ही होटल घुमाये हैं। अब मैं तुम पर पैसे नहीं खर्च कर सकती।"

"तुम्हारी खुशी," रमणीक ने हाथ मटका दिये और कन्धे हिला कर कहा, "गुडनाईट।"

नीली खिसियाई-सी जहाँ की तहाँ खड़ी रह गयी। रमणीक अपने रास्ते

बढ़ चला। दफ्तर की सीढ़ियों से एलिजाबेथ और जीवन उतर रहे थे। नीली ने उनके पैरों की चाप सुनी और तेज़ी से रमणीक से विपरीत दिशा में चल दी।

जीवन और एलिजाबेथ नीचे उतर कर सड़क की पटरी पर रुक गये। किधर चलें, यह प्रश्न दोनों के दिमाग में था। एलिजाबेथ ने ही पहले मौन तोड़ा—"आज गेट वे आफ इंडिया चलें।"

"चलो," जीवन ने कह दिया।

"तुम्हें पसन्द है वह जगह" एलिजाबेथ ने पूछा।

"तुम्हारे साथ हर जगह पसन्द हो सकती है," जीवन ने कहा और दोनों ही सरल भाव से मुसकुरा दिये। दोनों अनायास ही आप से तुम पर आ गये थे। दफ्तर में आज जो कुछ भी हुआ उसने दोनों को और निकट कर दिया।

कुछ देर तक चुपचाप चलते रहने के बाद जीवन बोला, "मुझ से रमणीक ने आज बहुत कुछ कहा।"

"मैं समझ सकती हूँ। क्या कहा होगा," एलिजाबेथ ने विश्वास के साथ कहा, "वह पूरा शैतान है। लड़कियों को खिलवाड़ समझता है। उसने मेरी बुराई की होगी। कहा होगा लड़की खतरनाक है। कल वह मुझ से तुम्हारे बारे में कहेगा कि जीवन से दूर रहो बड़ा बुरा है।"

जीवन हँस पड़ा। बोला, "मेरे बारे में यह सच हो सकता है।"

एलिजाबेथ ने भी कहा, "सच मेरे बारे में भी हो सकता है।

जीवन को एलिजाबेथ का वैसा कहना अच्छा न लगा। वह मजाक में भी उसे बुरा समझने को तैयार न था। जैसे उसे बुरा कहने से उसके किसी सुप्त स्वप्न को पीड़ा पहुँचती थी!

जीवन चुप रहा। एलिजाबेथ बोली, "नीली भी ठीक दूसरी रमणीक है। फर्क इतना ही है कि वह लड़की है। मुझ से आ कर जाने क्या क्या कह रही थी। बेवकूफ! जो बात जहाँ नहीं उसे भी वहाँ देखती है।"

जीवन ने इसका अर्थ लगाया कि एलिजाबेथ के पास जीवन के लिए प्यार नहीं, कोमलता नहीं! नीली वैसा समझती है। जीवन को बुरा लगा।

अगर एलिज़ाबेथ यह कहती कि मुझे तुम से प्यार है। नीली को बुरा लगता हो तो लगे। जले। मरे। तो वह खुश ही होता।

दोनों गेट वे आफ इंडिया पर आ कर एकान्त स्थान ढूंढ़ कर पास-पास बैठ गये। समुद्र उनकी पीठ की तरफ लहरा रहा था। सामने अंग्रेजों के साम्राज्यवाद के प्रतीक-सा वह विशाल भारत द्वारा आसमान में सिर उठाए खड़ा था। एक सींगदाना वाला पास से 'सींगदाना' चिल्लाता हुआ गुज़रा! / एलिज़ाबेथ ने उससे दो आने का सींगदाना दो जगह लिया। 'यह खाओ' कह कर उसने एक पुड़िया जीवन की ओर बढ़ाई और दूसरी में से स्वयं खाने लगी। जीवन खाने में अक्सर बेसब्री करता था। वह जल्दी-जल्दी पुड़िया साफ कर गया। एलिजाबेथ की अभी आधी भी खत्म न हुई थी। उसे पुड़िया समाप्त करते देख कर वह हंसी। बोली, "लो अब इसमें नम्बर लगाओ।"

जीवन कुछ झेंप गया। बोला, "क्या करूँ, कुछ जल्दी खाने की आदत है।"

उसने कहा, "यह आदत छोड़ दो। जो आदमी खाने में जल्दी करता है वह सब जगह वैसी ही उतावली करता है। उतावली अच्छी चीज नहीं।"

जीवन को उसकी बात में सत्य जान पड़ा। उतावली उसके स्वभाव में सदा से थी। मन ही मन वह एलिजाबेथ का प्रशंसक हो उठा। फिर प्रसंग बदल कर बोला, "तुमने अपने बारे में कुछ नहीं बताया।"

"क्या ?" एलिजाबेथ ने सींगदाना चबाते हुए पूछा।

उसने उसके कँधों पर झूमती हुई लटों को देखते हुए कहा, "तुम मा बाप से अलग रहना चाहती थीं न।"

"हाँ चाहती तो थी। चाहती भी हूँ। पर तुमने मुझे यह फिर क्यों याद दिला दिया! इस समय मैं सब कुछ भूल कर प्रसन्न थी।"

उसकी आँखों में फिर धुंआ-सा छा गया। जीवन को अफसोस हुआ। बोला, "रहने दो। हम कोई और बात करेंगे।"

"नहीं अब तुम जान ही लो," उसने कहा, "पर···पर···"

वह रुक गयी। जैसे कहने में जो हिचक थी वह मामूली न थी। कुछ देर चुप रह कर बोली, "मेरा सौतेला बाप है न, उसकी वजह से मैं बेदद दुखी हूँ। मेरी जिन्दगी हराम हो गयी है। मैं कभी-कभी सोचती हूँ कि

मर ही जाऊँ। तुम नहीं सोच सकते कि आदमी कितना शैतान हो सकता है।"

अपने पिता के बारे में चाहे वह सौतेला ही हो कोई ऐसी धारणा रख सकता है जीवन कल्पना भी नहीं कर सकता था। एलिजाबेथ कह रही थी, "मैं अपनी मुसीबत किसी से कह भी तो नहीं सकती। महीनों से भीतर ही भीतर घुट रही हूँ। तुम्हें देख कर कहने को जी करता जरूर है पर सोचती हूँ कि फायदा भी क्या? तुम भी तो कुछ नहीं कर सकोगे। फिर भी कहूँगी। अपने भीतर घुटन अब मुझसे सचमुच ही नहीं सही जाती। मैं, मैं···"

उसकी आँखें छलछला आयी थीं। गला रुँध गया था और वह क्या कहना चाहती थी जीवन जान ही न सका। यह बात कहने में उसे बेहद तकलीफ हो रही है यह सोच कर जीवन ने प्रसंग बदलने की कोशिश की। बोला, बम्बई में सिर्फ जाड़ों का ही मौसम अच्छा है। बरसात में तो यहाँ आफत आ जाती है।"

एलिजाबेथ बोली, "नहीं नहीं जीवन, मैं तुम्हें आज अवश्य ही अपनी दुर्दशा की कहानी बता डालूँगी। तुम अब कुछ और सोच कर बात न टालो। तुम मेरी तकलीफ अवश्य समझ सकोगे। जिस स्त्री के एक जवान लड़की हो, इतनी जवान कि उसकी शादी की जा सके उसे क्या हक है कि······"

एलिजाबेथ का गला रूँध गया। फिर भी वह प्रयास पूर्वक कहती गयी, "स्त्री को पति मिल सकता है। एक के बाद दूसरा मिल सकता है। पर बेटी को बाप नहीं मिल सकता। मा का दूसरा या तीसरा पति अपनी पत्नी की दूसरों से हुई औलाद को वह प्यार, वह इज्जत नहीं दे पाता। मैं पिता नहीं पा सकी। नहीं पा सकी जीवन। क्या कहूँ, कैसे कहूँ, मेरी मा का पति हो कर भी वह मुझे कुछ और ही नजर से देखता है।"

जीवन समझ गया और समझ कर सिहर उठा। ऐसी परिस्थिति की उसने कल्पना भी नहीं की थी। एलिजाबेथ का स्वर सिसकियों में डूब गया। उसने अपनी फ्राक से ही आँसू पोंछ लिये। बोली, "शुरू-शुरू में वह मुझ से बड़ी ममता दिखाता था। मुझे बड़ा प्यार करता था। मुझे उसने बहुत से उपहार दिये। मैं उसकी गोद में भी उसी तरह जा बैठती थी जैसे अपने मृत पिता की गोद में जा बैठती थी। उसके स्पर्श को मैंने कभी

अपवित्र नहीं समझा। पर, पर एक दिन वह रात को मेरे कमरे में चला आया।"

एलिजाबेथ की आवाज़ कहीं गहरे उतर गयी थी। वह उसी गहराई से बोलती गयी, "तब भी मैंने बुरा न माना। वह मेरी खाट पर बैठ गया। मेरे सिर पर हाथ फेरता रहा। मेरी तारीफ करता रहा : तुम अच्छी लड़की हो। मुझे तुम अपनी मा से भी ज्यादा पसन्द हो। तुम बहुत खूब सूरत हो। तुम्हारे पास बैठने को जी करता है। तुम से प्यार करने को जी करता है। पर मैं तब भी नहीं समझी। मैंने तकिये पर से सिर उठा कर उसकी गोद में डाल दिया। पूछा, "ममी कहाँ है।" उसने बताया, "सो रही है। डरने की कोई बात नहीं, वह खूब गहरी नींद सो रही है।" इतना कह कर वह, 'ओ : उसकी हरकत···'

वह आगे न कह सकी। उसने दोनों हाथों में अपना मुँह छिपा लिया। रात धरती पर उतर आयी थी। गेट वे आफ इंडिया की चहल-पहल बढ़ गयी थी। ताज होटल के कमरों की बत्तियाँ भीतर ही भीतर जगमगा रही थी! जीवन एलिजाबेथ की बगल में स्तब्ध बैठा था। एलिजाबेथ ने रोते-रोते अपना मुँह घुटनों में छिपा लिया। उसके बाल भी गर्दन पर से आगे की तरफ झुक आये। बालों के झुकते ही उसकी खूबसूरत गर्दन चमक उठी। जीवन का हाथ अनायास ही उसकी पीठ पर जा पहुँचा। वह धीरे-धीरे उसे सहलाता रहा। फिर धीमे से बोला, "हिम्मत करो, आते-जाते लोग क्या सोचेंगे।"

एलिजाबेथ फिर तन कर बैठ गयी। पर कमर उसकी झुक-झुक जाती थी। वह डूबते हुए स्वर में बोली, "मैं आज पहली बार किसी से अपनी मुसीबत कह सकी हूँ। मेरे ये आँसू जाने कब के जमा है। इन्हें बह जाने दो। नहीं तो ये भीतर ही भीतर मुझे गला डालेंगे। ये जलते हुए तरल पदार्थ से मेरे सीने में फैल जाते हैं। तब, ओः तब···"

आँसुओं का आवेग फिर बढ़ चला था। एलिजाबेथ ने चुप हो कर उसे फिर सम्हाला। बोली, "मैं अपनी मा से भी न कह सकी। उसने मुझे धमकी दी कि अगर मैंने मा से कहा तो वह उसे तलाक़ दे देगा। मेरी मा

गरीब है उसके पास पैसा नहीं। मैं जो कमाती हूँ उसी पर गुजर करनी पड़ती थी! वह पैसे वाला है। मा सुखी हैं। मैं उसका सुख नहीं छीनना चाहती। मैं तय ही नहीं कर पाई कि मा को बता कर उसका सुख छीन लूं, या समुद्र में डूब कर खुद मर जाऊं, या अपनी मा की बुरी बन कर उससे अलग रहने लगूँ। मैं बालिग हूँ। मुझे अपनी जिन्दगी को अपने ढंग से चलाने का हक है। पर मैं कुछ भी तो नहीं कर पाई इसका अफसोस है।"

जीवन खुद भी न सोच पा रहा था कि ऐसी हालत में कोई कर भी क्या सकता है। एलिजाबेथ भावावेश में भरकर कह रही थी, "औरत दूसरा ब्याह करके छोटी हो जाती है। अगर वह गुज़र के लिये करती है तो वह नौकरानी से अधिक हैसियत नहीं रखती। अगर वह तन के लिये करती है तो भी वह सच्ची इज्ज़त नहीं पाती। कोई औरत कैसे बार-बार शादी कर सकती है और नया प्यार पा सकती है, मेरी समझ में नहीं आता। तुम लोग खुशकिस्मत हो जीवन। तुम्हारी औरतें सचमुच ही खुश किस्मत हैं। वे एक ही पति की होती हैं। उसकी दी हुई सब यातनाएँ सहती हैं, पर दूसरे के दिये हुए सुख भी नहीं भोगतीं। इसके लिये उनकी इज्ज़त होती हैं। काश मेरी मा हिन्दू होती और मैं खुद हिन्दू पत्नी हो सकती।

जीवन को उसके अन्तिम उदगार ने असीम सुख दिया। उसने चाहा कि एलिजाबेथ का काँपता हुआ हाथ अपने हाथों में ले ले और कहे कि मैं तैयार हूँ। पर कह न सका। उसका धर्म कितना संकीर्ण है। वह उसे ऐसी कोई इजाज़त नहीं दे सकता। दूसरे ही क्षण सरिता उसकी आँखों में लहरा उठी। काश बग़ल में बैठी हुई यह लड़की सरिता होती। उसका काँपता हुआ हाथ उसकी कामना करता। जीवन सोच गया और सोच कर दुर्लभ इच्छा की पीड़ा से भर उठा। फिर बोला, "तुम ग़लत समझती हो। एक व्यक्ति के आचरण से कोई जाति दूषित नहीं हो जाती। किसी भी जाति धर्म की व्यवस्था निर्दोष नहीं। हिन्दुओं में अपनी बुराइयाँ है। हिन्दू होकर तुम अपने मन का साथी न पा सकती थीं। वहाँ तुम पर दूसरे बन्धन होते। तुम्हारी आत्मा को फाँसी लगा दी जाती!"

जीवन की कल्पना में सरिता की फाँसी लगी आत्मा तड़पती हुई

दिखाई दी। एलिजाबेथ और जीवन दोनों ने एक दूसरे को देखा और फिर वे गर्दन घुमाकर समुद्र की लहरों को देखने लगे जो धरती की हो कर आसमान की छाया को छाती से चिपटाए हुए थीं।

इसके कुछ देर बाद दोनों एक दूसरे से कुछ कहे बिना ही उठ खड़े हुए और चर्च गेट स्टेशन की तरफ चल दिये। वह एलिजाबेथ को उसकी पीड़ा का कोई समाधान न दे सका था। एलिजाबेथ अभिव्यक्त हो कर भी हल्की न हो पाई थी! उसकी घुटन आँसुओं में गल कर भी कम न हुई। वह फिर उसी घर की तरफ जा रही थी जहाँ उसके प्राण घुटते हैं। जहाँ वह अपने आपको हर वक्त अरक्षित पाती है। जहाँ उसे ऐसे पुरुष की व्यभिचारी दृष्टि का सामना करना पड़ता है जो उसका पिता तो नहीं पर उसकी मा का पति अवश्य है।

एलिजाबेथ को चर्च गेट पहुँचा कर जीवन ने लौट कर बोरीबन्दर के रिफ्यूजी स्टालों पर से कुछ खाया और स्लो-ट्रेन में बैठ कर परेल चल दिया। गाड़ी हर स्टेशन पर रुकती, कुछ लोग उतरते, कुछ लोग चढ़ते। फिर वह चल देती। कुछ लोग दौड़ कर पकड़ते नजर आते। जीवन कभी उन आने-जाने वाले लोगों के बारे में सोचता, कभी अपने बारे में। कभी सरिता याद आती तो कभी एलिजा। कभी राजन दिनेश याद आने लगते तो कभी रामदुलारे। उसे अन्धेरी कोठरी भी याद आयी और परेल की चाल भी। कनखल का घर भी याद आया और इलाहाबाद का होस्टल भी। रमाकान्त, उसकी पत्नी और बच्ची मधु भी याद आई। गाड़ी रुकती, याद में व्याघात पड़ता। गाड़ी चलती याद भी नये स्टेशन की ओर दौड़ने लगती। गाड़ी की खड़खड़, रुकने पर प्लेटफार्म का शोर, साथ के पैसेंजरों की अजब-अजब बातें। जीवन उन्हीं के बारे में सोचने लगता। इस तरह याद करते और सोचते-सोचते वह परेशान हो उठा। क्या बिना सोचे, बिना किसी को याद किये नहीं रहा जा सकता। राजन को सजा हो गई थी। वह जेल काट रहा है। जेल का जीवन कैसा होता है, जीवन यही सोचने लगा। फिर दिनेश, उसके गीत। डायरेक्टर प्रोड्यूसर फिल्मी लेखक। प्रियदर्शन।

उसका माथा भन्नाने लगा। भला जिनसे कोई वास्ता नहीं वे भी क्यों याद आते हैं। उसने दौड़ती हुई ट्रेन से डिब्बे के बाहर दृष्टि डाली। कभी दूरस्थ बिजली की बत्तियाँ दिखाई दे जातीं, कभी अन्धकार की रखवाली करते हुए पेड़। फिर वह अन्धकार के ही बारे में सोचने लगता। पेड़ों के बारे में ही सोचने लगता। पेड़ों के साथ चिड़िया याद आती। घोंसले याद आते। एलिजाबेथ याद आ जाती। वह भी तो चिड़िया है। सुन्दर। पर घोंसला अभी नहीं बना पाई। एलिजाबेथ सुन्दर है यह बार-बार उसका मन कहता। तभी सरिता तुलना में आ खड़ी होती। नहीं सरिता अधिक सुन्दर है। पर सरिता अब कहानी है। एलिजाबेथ वास्तविकता है। जीवन को वह अच्छी लगती है। उसके सम्पर्क में समय पता ही नहीं चलता। जब वह चली जाती है तो खालीपन महसूस होने लगता है। उसका जाना अच्छा नहीं लगता। दो ही दिन में वह उसे अच्छी लगने लगी थी। वह अच्छी है। और यह रेल का बाबू भी अच्छा हैं। किसी से टिकट या पास माँग ही नहीं रहा। बहुत अच्छा है। जीवन फिर बाबू के बारे में ही सोचता रहा।

इस तरह असंबद्ध चिन्तन में उसका छोटा-सा रास्ता अनन्त हो कर भी कट गया। वह परेल स्टेशन पर उतर कर धीरे-धीरे घर की तरफ चला। वह परेल प्लेट फार्म, स्टेशन के बाहर के पुल, दोनों ओर की पटरियों, दुकानों, ठेलों के बारे में ही सोचने लगा। नित्य दिखाई देने वाली चीजें नित्य की ही जगह थीं। यह ठेले वाला हरीछाल के केले लाद कर सदा इसी जगह नजर आता है। यह कोढ़ी भिखारी कभी यहाँ से नहीं टलता। आजतक इसके बारे में कोई निश्चय ही नहीं कर पाया कि यह असली कोढ़ी है या नकली कोढ़ी। यह बिजली का खम्भा भी रोज़ इसी जगह खड़ा रहता है। क्यों खड़ा रहता है।

थोड़ी देर में जीवन को अपने इस विचार पर हँसी आयी वह सोचने लगा कि अगर बिजली के खम्भे भी चला करते तो। उसे यह विचार बड़ा अच्छा लगा। रात का वक्त है, सुनसान है पर बिजली के खम्भे चल रहे हैं। उन पर टंगे जलते हुए बल्ब कैसे अच्छे लग रहे हैं। उसकी नज़र से परेल की सारी भीड़ होहल्ला गायब हो गया। सिर्फ बल्बों की आँखें झपक कर

चलते हुए खम्भे ही खम्भे दिखाई देने लगे। वह उन्हीं खम्भों को मन ही मन गिनता हुआ बढ़ने लगा। पर गिन न पा रहा था। खम्भे थे बेहिसाब। अचानक वह किसी से टकराया। उसके मन में ख्याल आया कि वह किसी खम्भे से टकरा गया और उस खम्भे के आँखें नहीं थीं। खम्भे की आँखें? यह सोच कर फिर मुसकुराया। तभी उसके कानों में शब्द पड़े,......"आप भी अन्धे हो कर चल रहे हैं। मेरा सारे का सारा दूध गिरा दिया। ऊपर से मुसकुरा रहे हैं।"

जीवन ने कल्पना लोक से बाहर आ कर देखा, वह खम्भा नहीं था। मिल का कोई मज़दूर था। कैसी भद्दी शक्ल थी। कैसे भद्दे कपड़े थे। खम्भा तो उससे कहीं अच्छा होता है। यह सोचते-सोचते भी उसने कह दिया, "मैं तो मुसकुराया नहीं।"

"झूठ बोलते हैं," वह अधेड़ मज़दूर बिगड़ कर बोला, "नुकसान करते हैं, हँसते हैं और मानते नहीं।"

जाने जीवन कैसे कह बैठा, "मैं तो बिजली के खम्भे पर हँस रहा था। खम्भे चलते हैं न!

उस मज़दूर का गुस्सा काफूर हो गया। वह हँस पड़ा। हंसते-हँसते चल पड़ा। चलते-चलते कहता गया, "क्या कुसूर इसका। पागल है! बिजली के खम्भे चलते हैं। पागल कहीं का।"

"पागल," जीवन ने सुना उसी के लिए तो कहा गया था। उसने खुद भी अपने आपको कहा, "पागल। भला खम्भे भी चलते हैं। पर नहीं, मैं तो सोच रहा था अगर खम्भे चलते। अगर मैं खम्भे से टकराता। तो दूध थोड़े ही गिरता। खम्भे का नुकसान थोड़े ही होता। नुकसान आदमी का होता है। खम्भा नुकसान से परे है। अब उसे नुकसान की ही बातें सूझने लगीं। वह झल्ला उठा। मन ही मन अपने ऊपर बिगड़ा, "भला मुझे क्या गरज़ पड़ी कि मैं दुनिया भर के नुकसान के बारे में सोचूँ"

चाल आ गयी थी। बड़े फाटक से हो कर वह भीतर घुसा। चाल में बड़ी हलचल मची थी। दूकान पर किरपा बैठा था। रामदुलारे रात की पाली में मिल गया हुआ था। उसे किरपा ने बताया कि आज खोली

नम्बर पाँच सौ तेरह में खून हो गया है। पुलिस उसी की छानबीन कर रही है। पास पड़ोसियों को तंग कर रही है जब कि कुसूर किसी का नहीं।

कुसूर किसी का कभी नहीं होता। उसका दूध गिर गया, इसमें क्या मेरा कुसुर था। उसने मन ही मन सोचा और अधिक सुनने की जिज्ञासा से किरपा की ओर देखा।

किरपा कहता गया, "अब सालों को शराब तो मिलती नहीं। स्पिरिट पी कर कलेजा फूंकते हैं। बीबी ने मना किया। ताव आ गया। पास ही में लोटा रखा था। सिर पर दे मारा। कपाल क्रिया हो गयी। वह मर गयी। लोग कहते हैं उसे मरना था। लोटा ही बहाना हो गया। नहीं तो बचने वाले लोग पहाड़ पर से भी गिर कर बच आते हैं। वह आदमी खुद बिजली घर में नौकर है। बिजली के करेंट से एक बार सारा जल गया था। खाल रूई-सी उड़ गई थी। फिर भी बच गया। बीबी लोटे से ही मर गयी। मरने का भी कोई ठिकाना। अब वह सिर धुन रहा है। रो-रो कर कह रहा है, मेरा कोई कुसूर नहीं। पुलिस कुसूर साबित करने में लगी है।

पुलिस के उसे गिरफ्तार करके और चाल से सारी पूछताछ करके जाने के बाद भी लोग उसी किस्से को दोहराते रहे। एक पत्नी ने अपने पति से कहा, "देखो जी तुम्हारा गुस्सा भी बड़ा तेज़ है। मैं कहती हूँ गुस्सा आदमी को हैवान बना देता है। जरा ठंडे मिजाज़ से काम लिया करो।"

पति को गंवारा नहीं हुआ। भला उसे बीबी हो कर क्या हक कि उसे उपदेश दे। उसका काम तो उसकी काम पूर्ति करना, बच्चे जनना और रोटी बना कर खिलाना है। ताव खा कर बोला, "बको मत, नहीं तो मैं लोटे के बजाय तवा ही तुम्हारे सिर पर दे मारूँगा।"

पत्नी डर गयी। आदमी को हैवान होते देर नहीं लगती, यह वह देख चुकी थी। दूसरी खोली में एक स्नेही पति अपनी रूठने वाली बीबी से कह रहा था, "आदमी नहीं राक्षस था। हाय हाय कैसे उसका हाथ अपनी बीबी पर उठ गया। ऐसे आदमी को तो फाँसी नहीं जिन्दा जला देना चाहिए।

"बस रहने दो," पत्नी ने तुनक कर कहा, "सब पुरुष तुम्हारे जैसे हो जाएँ तो दुनिया का काम चल लिया। हर वक्त तुम मेरे पैर चूमते रहते हो,

मुझे पसन्द नहीं। मैं कहती हूँ कि तुम दस रुपये महीना ज्यादा कमा कर देते तो मुझे अधिक खुशी होती। चिकनी-चुपड़ी बातें मुझे पसन्द नहीं आतीं।

एक और जगह चर्चा चल रही थी। उस आदमी का कुसूर नहीं। उसके सिर तो भूत आता है। भूत कर गया गजब। नशे की बात झूठी है। साहब लोग क्या नशा नहीं करते। पर कभी किसी ने न सुना होगा कि किसी साहब ने अपनी मेम के सिर पर पत्थर दे मारा। साहबों ने शराब पी पीकर हिन्दुस्तान पर इतने दिन हुकूमत की है। सुनते हैं इधर उन्होंने शराब पीनी छोड़ दी थी तभी गांधी को राज सौंप कर अपने मुल्क वापस चले गये।

चाल के दरवाजे पर अपने साथियों के बीच ऐंठता हुआ बंबइया दादा कह रहा था, "साला शराब पीने का नाम करता है। बीबी को मार कर रोने लगा। मैं होता उसकी जगह तो उस सार्जेन्ट के बच्चे की भी खबर लेता। बड़ा बदमाश है। मुझे यही हरामजादा कई बार जेल करवा चुका है। मैं भी मौके की तलाश में हूँ। मैं तो इसके कलेजे में बालिश्त भर चाकू उतार कर ही चैन लूँगा।"

छुट दादा बड़ दादा की वीरता की तारीफ करने लगे। जीवन फाटक में अपनी खाट डाल कर सोने की कोशिश करने लगा। पर नींद नहीं आ रही थी। खून हत्या की ही बातें उसके दिमाग में घूम रही थीं। वह सोच रहा था कि क्या वह भी अपनी बीबी का खून कर सकता है। बीबी शब्द के साथ ही सरिता याद आयी। पर उसने उसे अपने ख्याल से निकाल दिया। वह दूर की चीज़ है। एलिजाबेथ याद आई। ऊँह, वह कैसे बीबी हो सकती है। पर उसका दूसरा मन कह रहा था हर्ज क्या। वह एलिजावेथ के बारे में अजीब ढंग से सोचने लगा। जैसे फ्राक पहने एलिजाबेथ उसके सामने खड़ी थी। कमर कितनी पतली है उसकी। फ्राक में उसका वक्ष और नितम्ब कितने सुन्दर लगते हैं। पिंडलियाँ उसकी कैसी तराशी हुई सी हैं। उसके बाल बार-बार जो उसके मुँह पर आ जाते हैं उनके हटाने के प्रयास में वह कितनी सुन्दर लगने लगती है। एलिजावेथ अगर उसे मिल जाये।

जीवन ने कुछ परेशानी अनुभव की। उसके कमजोर बदन में भी एक

भूख जागी। उसने बेचैनी के साथ करवट बदली। खून में गरमी आ गयी थी और हाथ-पाँव की नसें कुछ तन रही थीं। अजीब भूख है। अजीब परेशानी है। जीवन ने फिर करवट ली। तकिया सिर के नीचे से निकाल कर मुँह के ऊपर रख लिया। पर इससे क्या? नींद तो दूर थी! एलिजावेथ का ख्याल पास था। अब वह सो रही होगी। उसने अपनी फ्राक उतार दी होगी। फ्राक उतारने पर भला वह कैसी लगती होगी। तभी उसे म्यूजियम में देखा एक यूरोपीय महिला का नग्न चित्र याद आया। उसके मन में लालसा जगी। हाथ-पाँव झनझना उठे। तन-मन कुछ माँगने लगे। फ्राक उतार कर बिस्तर पर लेटी हुई एलिजावेथ याद आने लगी। वह चित्र उसकी आँखों के आगे से नहीं हटता। क्यों नहीं दूर हो जाती वह एलिजाबेथ। बेबसी से वह गुस्से में भर उठा। इच्छा हुई कि भारी शिला उठा कर इस याद की छाती पर पटक दे जिससे वह मर जाये। उसके सिर पर खून का भूत सवार हुआ। तभी उसके मन में सवाल उठा क्या वह एलिजाबेथ का खून कर सकेगा।

फ्राक उतार कर सामने खड़ी हुई एलिजाबेथ मुसकुरा रही थी। जीवन उन्मत्त हो उठा। चिल्ला पड़ा, "एलिजा, एलिजा हट जाओ नहीं तो मैं खून कर दूँगा।"

दूकान पर बैठे किरपा ने आवाज सुनी। दौड़ कर पास आया। फाटक के बाहर बैठे दादा और छुट दादाओं ने भी सुनी। वे एक दूसरे को देख कर हँसे। हँसी का अर्थ था कि धोती पहनने वाला यह बाबू सिर्फ सपने में ही खून कर सकता है। हरि पूछ रहा था, "भैया सोते-सोते सपना देखा क्या?"

जीवन ने कहा, 'हाँ' और करवट बदल कर फिर लेट गया।

उस रात उसे ढंग की नींद आयी ही नहीं। सोचते-सोचते थक जाता? झपकी आ जाती तो सपनों में भी कोई माँसल गात उससे लिपटने लगता और वह अंगों में एक तनाव-सा अनुभव करके उठ बैठता। अपने पीले जर्द और दुबले मुँह पर हाथ फेरता। कई दिन की बेबनी दाढ़ी को सहलाता। माथे को हथेली से थपथपाता। रूखे बालों को जड़ों से पकड़ कर हिलाता। खाट से उठ कर पटरी पर आकर टहलने लगता। फिर जा लेटता, पर जिस विचार को वह मस्तिष्क से निकाल बाहर क़रना चाहता उसे न निकाल पाता।

सुबह जब वह उठा तो अंग-अंग दुख रहे थे। सिर भारी था। पेट भी ढंग से साफ न हुआ। मुँह दातून करने के बाद भी बक-बकाता रहा। जाड़े की रात में भी उसे गर्मी लगती रही थी। सुबह ठंडे जल से नहाने पर भी उसे ठंड न मालूम दी थी। रामदुलारे रात की पाली से सुबह घर आया। उसने जीवन से कुछ बातें करनी चाही। पर उसे विरक्त देखकर टाँड़ पर जाकर लेट गया। नींद पर उसका भरपूर काबू था। रात भर जाग सकता था और दिन भर सो सकता था।

फिर अपने समय से जीवन दफ्तर चला आया। दफ्तर पुराना ही था पर आज उसकी दृष्टि में नवीनता थी। वह दाढ़ी बना कर, धुले कपड़े पहन कर आया था। बालों में आज उसके तेल था। वह सोच रहा था कि उसे तो एलिजाबेथ इतनी अच्छी लगती है, पर क्या वह भी उसे अच्छा लगता होगा। उसे अपना दुबलापन बड़ा अखरता! पर कोई चारा भी न था। आज वह दफ्तर में एलिजाबेथ को अच्छा लगने की भावना लेकर आया था। उसने मुसकुरा कर उसका अभिवादन किया। जीवन को आज उसका स्वर अधिक मधुर लगा। उसकी दृष्टि उसके मुख पर से वक्ष पर उतर आयी। फिर सकुचा कर उसने उसे समेट लिया। पर दिन भर वह अपनी सीट पर से आँखें बचा-बचा कर उसे देखता रहा। बाथरूम भी उधर से ही जाना पड़ता था। अतएव कई बार आवश्यक न होने पर भी बाथरूम गया। वह एलिजाबेथ को हर तरफ से अच्छी तरह देखकर अपनी आँखों की भूख मिटा लेना चाहता था। पर वह बढ़ती गयी। चुस्त फ्राक में उसका सुडौल शरीर अधिक आकर्षक लगता रहा।

आज उससे काम न हो रहा था। अपनी सीट पर बैठे-बैठे ही उसने सोफिया और मेहरा को भी देखा। उन दोनों के कपूर जैसे रंग थे। केले की गोब-सी पतली छरहरी देह थी। पर अंगों में वैसा उभार, वैसी चारुता न थी जो आँखों की भूख जगा दे। वे चपल भी थीं। मीठी-मीठी मुस्कान हर वक्त उनके होंठों पर रहती थी। होठ भी कितने पतले और वक्र थे। पर उनमें वैसा रस न जान पड़ता था जैसा एलिजाबेथ के अधरों में था।

अचानक जीवन को झुंझलाहट आयी। वह क्यों यह सब सोच रहा है।

उसने उधर से ध्यान हटा कर दफ्तर के काम में मन लगाना चाहा। उसके सामने जो काग़ज पड़ा था उस पर वह अनजाने ही 'एलिजा' ये तीन अक्षर कितनी ही बार लिख चुका था। उसे बड़ा बुरा-सा लगा। उसने उस काग़ज को टुकड़े-टुकड़े करके रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। पर फिर भी उसकी निगाह एलिजा पर जा जमी। एलिजा को ताकते हुए रमणीक ने भाँप लिया। वह होंठों ही होंठों में मुसकुराया। काग़ज की एक चिट पर उसने कुछ लिखा और वह चिट जीवन की तरफ बढ़ा दी! जीवन ने एलिजाबेथ की ओर से अपनी दृष्टि समेटते हुए उस चिट की तरफ देखा। उस पर लिखा था 'छुपा रुस्तम' जीवन चिट पढ़कर झेंप गया। उसने चिट को मसोस कर रद्दी की टोकरी में डाल दिया। रमणीक अनजान बना-सा अपना काम करता रहा। थोड़ी देर में वह अंगड़ाई लेता हुआ अपनी कुर्सी पर से उठा। जीवन के पास आ कर बोला, "बड़ा काम है यार, मार डाला। तुम्हारा चार्ट बना। याद है बॉस ने इस हफ्ते में आने वाले जहाजों का चार्ट माँगा है। चार्ट में दिखाना है कि किस जहाज से कौन-सा आर्डर आ रहा है और कब तक उसकी डिलीवरी लेनी है। यार मैं तो डिमरेज और कार्टेज का हिसाब लगाता-लगाता आज परेशान हो गया!"

जीवन ने चार्ट अभी शुरू भी नहीं किया था। बोला, "अभी बनाए लेता हूँ।"

"क्या बनाओगे तुम। अब तो तुम भी लगता है बेगाने हो गये हो। आपा-आप से दगा कर रहा है।" कह कर रमणीक कुटिलता पूर्वक मुसकुराया।

जीवन ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह चार्ट बनाने में लग गया। रूल और पेन्सिल से खाने बनाये। पर रूल फिसल जाता और लकीरें तिरछी हो जातीं। बीच-बीच में वह एलिजाबेथ को देखने का लोभ भी संवरण नहीं कर पाता। किसी तरह लकीरें खींच, खाने बना उसने विवरण भरने शुरू किये। तभी नीली एलिजाबेथ के पास एक हाथ में कोई काग़ज लेकर पहुँची। गोआ की औरतों की खूबसूरती बम्बई में प्रसिद्ध है। जीवन भी इस प्रसिद्धि से अनवगत न था! नीली भी इस प्रसिद्धि का

अपवाद न थी। उसके रंग में सोने की काँति थी। उतने लम्बे चिकने-चमकीले बाल जीवन ने देखे ही न थे। नीली को देखकर उसे एक लोकप्रिय अभिनेत्री की याद आ जाती थी। मुखाकृति उसकी बिल्कुल उससे मिलती थी। नीली साड़ी पहनती थी उत्तर भारत के ढंग से जो उसे फबती भी खूब थी। जब वह एलिजाबेथ के पास जा खड़ी हुई तो एलिजाबेथ ने कंधों पर पड़े बालों को हिलाते हुए गर्दन घुमाकर नीली की तरफ देखा। उसके गर्दन घुमाते ही जीवन से उसकी आँखें टकरा गयी। आँखों ही आँखों में मधुर प्रकाश फैलाती हुई वह नीली से बातें करने लगी। नीली को बैठे-बैठे देखने में उसकी आँखें ऊपर को उठी। बड़ी-बड़ी काली आँखें और भी फैल गयी। नीली की आँखें भूरी थीं। बनावट में भी उतनी सुन्दर नहीं। जीवन मन ही मन दोनों की तुलना करने लगा। साँवली एलिजाबेथ उसे सोने से दमकते रंग वाली नीली से कहीं रुचिकर लगी। नीली के अंगों में वह सुडौलता न थी। दृष्टि को बाँध ले उनमें ऐसा कुछ न था। नीली की बात सुनकर एलिजाबेथ उठी। उठने में उसका वक्ष हिला और उभरा। फिर फ्राक के घेरे को लहराती-सी वह नीली के साथ-साथ बॉस के कमरे में चली गयी। दोनों की पीठ उसने देखी। एलिजा की चाल में उसे एक निराली अदा मालूम पड़ी। नितंबों की चारु गुरुता से गति में गरिमा थी। उसे संस्कृत कवियों के ऐसे ही वर्णन याद आये। हंसगामिनी, गजगामिनी। वह सोचने लगा कि उपमा भी क्या पुरानी पड़ती है। जब तक उसमें सौन्दर्य के वहन की क्षमता है क्यों न उसे अपनाया जाय। जीवन संस्कृत कवियों की उपमा में खो गया। हर याद आने वाली उपमा को वह एलिजाबेथ पर घटाता। रमणीक ने इस बीच में फिर टोका, "कहाँ हो भाई। चार्ट बना।"

जीवन ने उसकी बात का जवाब न दिया और नीरस चार्ट में विवश मन से लग गया।

उस दिन लंच टाइम में एलिजाबेथ ने जीवन को अपनी सीट पर बुलाया। आज वह अपना लंचपैकेट लाई थी। बोली, "लो खाओ।"

जीवन कुछ झिझक के साथ बोला, "क्या है।"

एलिजाबेथ ने सरल हास के साथ कहा, "खाने को कहा तो खाना ही होगा।"

"नहीं मेरा मतलब था कि कहीं"···जीवन हिचकिचा कर रह गया।

एलिजाबेथ ने उसके मुँह की बात पूरी की, "कहीं, गोश्त-वोश्त न हो। खाओ भी। तुम्हें उसकी सब से ज्यादा जरूरत है। खाली खाल बेचारी कब तक हड्डियों को ढँक पायगी।"

इतना कह कर उसने जीवन पर कुछ इस तरह खाने को दबाव डाला और साथ ही आँखों ही आँखों से कुछ ऐसा कहा जिससे जीवन ने मान लिया कि वह उसके लिये वैसी चीज़ क्यों लाने लगी। खाते-खाते एलिजाबेथ कह रही थी, "अब मैं अपना लंच साथ लाया करूँगी। तुम मेरे साथ खाया करना। मुझे लगता है तुम्हें यहाँ ठीक खाना नहीं मिलता। ऐसा ही रहा तो बीमार पड़ जाओगे।"

जीवन उपकृत-सा खाता रहा। दफ्तर में रमणीक भाई और दूसरी लड़कियाँ अचरज के साथ एक दूसरे को देखते रहे। इनकी दोस्ती जिस तेजी से बढ़ रही थी वह सब को अचरज में डाल रही थी। रमणीक ने नीली से कहा, "तुम ने तो मुझे चार साल में एक बार भी लंच नहीं कराया।"

नीली जरा मुँह फट थी, "मेरा नहीं तुम्हारी सूरत का कसूर है।"

रमणीक बेशर्म था, "उस सूरत पर तो कहने वाली ही लट्टू रही।"

नीली तेज हो पड़ी, "मिस्टर रमणीक, ज़रा कायदे से बोला करो।"

रमणीक ने कुटिलता से कहा, "हाय-हाय रे जमाने, अब तू कायदा भी सिखायगा। अच्छा अपनी तक़दीर ही ऐसी, किसी का क्या कसूर।"

नीली की फटकार खाकर रमणीक का मन कुछ कटु हो उठा था। पर उस कटुता ने उसके मन में ईर्ष्या पैदा की जीवन के प्रति। उसे लगा कि जो नीली उसके पैसों से कई बार सिनेमा देख चुकी है वह अब जो उससे नफरत करती है क्या इसीलिये नहीं कि वह भी जीवन को चाहने लगी है। उसकी समझ में नहीं आया कि इस दुबले-पतले बेवकूफ से जीवन में क्या है जो एलिजाबेथ उस पर मरने लगी। नीली उसके लिए तरसने लगी।

शाम का पाँच बजा! दफ्तर खत्म हुआ। सोफिया और मेहरा साथ--साथ चलीं। रमणीक ने नीली के साथ चलना चाहा, पर वह उपेक्षा भाव से अकेली बढ़ चली! रमणीक जीवन और साफिया को अपनी-अपनी

सीटों में छोड़ कर ही मन मारा-सा दफ्तर की सीढ़ियाँ उतरने लगा। एलिजाबेथ अपना पर्स सम्हाल कर जीवन के पास आयी। बोली, "चलो। मुझे चर्च गेट छोड़ आओ। आज मुझे जल्दी ही जाना है।"

"खैरियत तो है," जीवन से पूछा।

एलिजाबेथ बोली, "कल शाम से मैं जाने क्यों खुश हूँ। तुम से सब कुछ बता कर मेरा मन हल्का हो गया है। अब तक मैं अकेली मन ही मन घुलती थी। अब मुझे लगता है कि किसी को मैं अपना समझ कर दुख बाँट सकती हूँ। इस विश्वास ने मुझे हिम्मत दी है। कल रात मुझे अपने घर में उतना डर न लगा। मैंने हिम्मत से अपने मा के पति से बातें की।

'मा के पति से' कहते-कहते फिर वेदना उभर आयी। जैसे वास्तविकता फिर कटु हो चली। उसे अपने पिता की याद आयी! बोली, "फिर भी मैं उस घर में नहीं रहना चाहती। जीवन मुझे जल्दी ही दूसरी जगह ढूंढ लेनी चाहिए। मैं अब ऐसी जगह रहना चाहती हूँ जहाँ मैं अपनी इच्छा की स्वामिनी आप होऊँ।"

बातें करते-करते दोनों सीढ़ियों से साथ-साथ उतर रहे थे। सीढ़ियाँ काफी चौड़ी थीं फिर भी दोनों एक दूसरे से अनायास ही सट जाते। जीवन को उस स्पर्श में अपूर्व सुख मिलता है। बोला, "इतनी जल्दी क्यों जा रही हो।"

वह बोली, "आज डैडी के कुछ पुराने दोस्त आने वाले हैं। ममी चाहती हैं कि मैं भी उस वक्त रहूँ।"

तो ठीक है, "जीवन ने कुछ ऐसे ढंग से कहा जिसका अर्थ यही था कि नहीं यह कतई ठीक नहीं।"

एलिजाबेथ भी उस अर्थ को समझी। बोली, "कहो तो मैं रुक जाऊँ। ममी थोड़ा नाराज ही तो हो जायँगी। हो तो हों। मैं किस-किस कि नाराजगी की परवाह करूँ।"

इस पर जीवन उदार हो गया। बोला, "नहीं तुम्हें जाना चाहिए।"

दोनों फिर अपने ही मनों में डूबे हुए चुपचाप चलने लगे। सड़क की उस भीड़ में भी वे दोनों एकान्त अनुभव कर रहे थे। दोनों को आश्चर्य था कि

किस वस्तु ने उन्हें इतना घनिष्ठ कर दिया है। और क्यों वे इतने आत्मीय हो उठे हैं।"

कुछ और आगे चल कर एलिजाबेथ बोली, "कहो तो मैं यहीं से बस ले लूं। स्टेशन जल्दी पहुंच गयी तो अच्छा ही होगा।"

जीवन ने फीके मन से स्वीकार कर लिया। बस जल्दी ही मिल गयी और एलिजाबेथ अपने बाल और फ्राक का निचला घेरा लहराती हुई बस में चढ़ गई! जीवन निरर्थक-सा खड़ा रह गया! बस छूट भी गयी।

अब जीवन की समझ में न आ रहा था कि आज की शाम क्या करे। ऐसी शामें तो नित्य आती थीं। पर पिछली दो शामों ने फर्क पैदा कर दिया था। पहले वह बोरीबन्दर स्टेशन की ओर बढ़ा पर यह सोच कर कि इतनी जल्दी चाल पहुँच कर करेगा भी क्या, वह गेट वे आफ इण्डिया की तरफ मुड़ चला। कल वह जिस जगह एलिजाबेथ के साथ बैठा था आज भी वह जगह खाली थी। उसमें उसे कुछ आकर्षक लगा और वहीं बैठ गया।

एलिजाबेथ के बारे में सोचता हुआ समुद्र की लहरों को देखता रहा। धीरे-धीरे साँझ काली हो रही थी। सींगदाना वाला आया। कल वाला ही था। बोला, "सेठ सींगदाना।"

जीवन ने चार पैसे का ले लिया। सींगदाना वाला बोला, "अकेले हो सेठ।"

जीवन ने उसे चार पैसे दे दिये और चुप ही रहा। वह पुड़िया खोल कर सींगदाना खाने लगा। बेचने वाला, 'सींगदाना' की आवाज़ लगाता हुआ आगे बढ़ गया। जीवन तेजी से खाता गया। अचानक उसे एलिजाबेथ याद आयी। उसने उसे कल्पना से अपने पार्श्व में चित्रित किया। पर कल्पना में वास्तविकता का सुख न पाकर वह पीड़ित ही हुआ। फिर सींगदाना धीरे-धीरे खाने लगा। कभी सड़क पर चलते हुए लोगों को देखता, कभी समुद्र की लहरों को। कभी विशाल गेट को देखता, कभी जगमगा उठी बिजली की बत्तियों को! धरती से आसमान तक उसकी दृष्टि घूम आयी। जल-थल, हवा सर्वत्र घूम फिर कर वह थकी-सी ज़मीन पर ही जम गयी। जीवन एलिजाबेथ के बारे में सोचता रहा। रात करीब आती गयी। जीवन के मन की चंचलता बढ़ती गयी। मन को एलिजाबेथ नाम की किसी चीज़ से

आग्रह न था। वह तो किसी माँसल कमनीय देह को चाहता था। गुजराती, पारसी, मराठी लड़कियाँ सामने से सैर करतीं गुजर रही थीं। जीवन हर किसी को देखता और देख कर एक तीव्र अभाव अनुभव करता। उसने बैठे-बैठे अंगड़ाई ली। जड़ अंग कुछ माँग रहे थे। फिर कल रात जैसी स्थिति हुई। खून में गर्मी। नसों में तनाव। मन में भूख। आँखों में प्यास। जीवन बहुत अधिक स्थूल हो उठा। धीरे-धीरे एलिजाबेथ की कामना मर गयी और जो कामना रह गई वह केवल शरीर की थी। किसी का भी क्यों न हो शरीर। एलिजाबेथ याद आ कर केवल उस कामना को उत्तेजित कर जाती। उसके बाल, उसके कपोल, उसका रस भरा अधर, उसका वक्ष, उसकी नंगी पिंडलियाँ जिस जगह एलिजाबेथ बैठी थी वह हाथ फेरने लगा। वह शिला थी। जीवन मांसलता की अनुभूति कैसे कर पाता। उसने मुट्ठी भींच ली। उसकी माथे की नसें तन चलीं। उसकी इच्छा हुई कि चिल्ला पड़े। आखिर उसे यह हो क्या रहा है। यह कौन-सी नयी भूख पैदा हो गयी है। यह कैसी बेबसी है। जीवन ने खुद को धिक्कारा। पर तन की उस भूख की प्रबलता में समस्त धिक्कार क्षुद्र जान पड़े। माथे की नसें तनतीं गयीं। अंग टूटते गये। बेचैनी बढ़ती गयी। भूख जोर पकड़ती गयी। उसका मुँह तमतमा उठा। जैसे ज्वर ही हो आया हो। उसने अपने होंठों पर जीभ फेरी। वे जल रहे थे। एलिजाबेथ का निचला होंठ जीवन की आँखों में तैरने लगा। वह होंठ उसकी आँखों के बजाए उसके होंठों को ही क्यों नहीं छू जाता। उसकी समझ में नहीं आया। कभी वह होंठ फूल-सा लगता, कभी आग की लपट-सा। जीवन उस लपट पर अपने तप्त होंठ रख देना चाहता। समुद्री हवा मस्ती के साथ बह रही थी। जीवन से लिपट कर वह खुद भूख से भर उठती और फिर जिसे भी छूती उसी में भूख पैदा करने लगती। जीवन को अपनी भूख विराट दीखने लगी। दूर क्षितिज में भी जहाँ अंधकार की यवनिका पड़ चुकी थी, जिसमें विरल तारों के फूल खचित थे, नभ धारा का अधर मिलन हो रहा था। लहरों के तरल होंठ किनारे के सूखे होंठों को कैसे उन्माद से तृप्ति दे रहे थे। जीवन के होंठ भी तो सूखे हैं। पर उसे तृप्ति कौन दे? तृप्ति कौन दे? जीवन मन की नहीं, तन की तृप्ति के लिए विकल हो उठा।

जीवन को बैठे-बैठे काफी देर हो गयी थी। उसके चारों ओर एकान्त सिमट आया था। तभी उसके पास एक आदमी आया। उसने निर्लज्जता से कहा, "सेठ छोकरी चाहिये।"

जीवन ने उस आदमी को देखा। मराठा लग रहा था। छोटी कद की किश्ती नुमा काली टोपी सिर पर थी। शेष पोशाक में पतलून और कमीज। पैरों में चप्पल। उम्र का अधेड़। जीवन उसकी सूरत ही देखता रह गया। उसकी समझ में वह प्रश्न ही नहीं आया।

उस आदमी ने फिर कहा, "सेठ माल अच्छा है।"

जीवन को उसके कहने का ढंग बुरा लगा। झिड़क कर बोला, "आदमी देखकर बात किया करो। भाग जाओ।"

उस आदमी ने धीरे से कहा "डरता है सेठ।"

वह चला गया! जीवन बैठा रहा। 'छोकरी' और 'माल' ये दो शब्द उसके कानों में गूँजते रहे। उस आदमी के चले जाने पर उसे थोड़ा अफसोस भी हुआ। वह तो उसकी आवश्यकता की ही बात कर रहा था। 'छोकरी' जीवन की बेचैनी और बढ़ी। 'माल' जीवन की नसें और तनी। उसे एलिजाबेथ याद आयी। फ्राक में वह कितनी सुन्दर लगती है। उसका वक्ष, उसके वर्तुल स्कन्ध, उसके नितम्ब, उसकी सुडौल पिंडलियाँ। और फिर एलिजाबेथ हट गयी। सिर्फ वक्ष रह गया, नितम्ब रह गए, पिंडलियाँ रह गयी, माँस रह गया। भूख बढ़ गयी।

जीवन को पता न था कि गेट वे आफ इण्डिया पर रात्रि में यह व्यवसाय खूब होता है। अकेले गुमसुम बैठे व्यक्ति से दलाल अक्सर यह प्रश्न करता है। दलाल यहाँ लोगों के मन को भाँपते हुए घूमते फिरते रहते हैं। भले कहे जाने वाले लोग सीधे अड्डों तक नहीं पहुँच पाते। दलाल नाम का व्यक्ति उनकी मदद करता है।

कुछ देर और बीती। जीवन ने कई बार उठने की चेष्टा की। फिर यह सोच कर कि शायद वह व्यक्ति फिर आ जाये, बैठा ही रहा। मन का आवेग और तन की भूख बढ़ती गयी। इतने में एक और व्यक्ति आया। गुजराती था। युवक ही! वह जीवन की बगल में आ कर बैठ गया। थोड़ी देर चुपचाप बैठा रहा। फिर बोला, "सेठ चलोगे।"

जीवन को इस बार उसका आशय समझते देर नहीं लगी। फिर भी पूछा, "कहाँ।"

"जहाँ जाना चाहो," उसने कहा, "सिंधी भी है, गुजराती भी। मराठी, मद्रासी, पारसी जो चाहिए। फ्रेंच भी।"

बोलचाल से वह पढ़ा-लिखा लग रहा था। रमणीक जैसी ही उसकी छब-ढ़ब थी। जीवन मन ही मन उलझता हुआ कुछ कह न पाया। युवक ने सोचा, पसन्द नहीं कर पा रहा। बोला, "मैं बताऊँ। सिंधी छोकरी अच्छी है। उम्र सोलह साल। चलो। डर की बात नहीं है।"

जीवन को सामने ही माँस दिखाई दिया। भूख बढ़ी। मुँह खोला, "दाम।"

उसे ठीक शब्द नहीं मिल रहा था। जैसे दुकान पर चीज के दाम दिये जाते हैं, वैसे ही वह भी कह गया। युवक को समझते देर न लगी कि अनाड़ी है। बोला, "रेट पूछते हो। "एक रात का पचास रुपया।"

पचास रुपया। जीवन को सौदा ऐसा लगा जो उसके बूते के बाहर था। अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कह दिया, "नहीं चाहिए।"

युवक तब भी बाज न आया। बोला, "रात भर न रहना हो तो घंटों का हिसाब कर लो सेठ। एक घंटे का पन्द्रह रेट होगा। मैं कहता हूँ सेठ छोकरी ऐसी है कि पन्द्रह तो उसके देखने की ही फीस।"

पन्द्रह रुपए, छोकरी। जीवन के सामने एलिजाबेथ आ कर खड़ी हो गयी फ्राक में। जीवन ने उसकी फ्राक उतार डाली। सामने माँस रह गया। सिर्फ माँस। एलिजाबेथ मिट गयी। माँस उभर आया। भूख जाग पड़ी। पन्द्रह रुपये। एक घंटा। एक घंटा यानी साठ मिनट। साठ मिनट यानी एक घंटा। यानी पन्द्रह रुपए। यानी माँस। जीवन कुछ निश्चय कर ही नहीं पा रहा था। माथे पर पसीने की बूंदे चुहचुहा आयी। भूख बेबस कर रही थी। पर पन्द्रह रुपए और सिर्फ साठ मिनट। सिर्फ एक घंटा। सुख की अवधि कितनी छोटी थी। पन्द्रह रुपए अर्थात् पन्द्रह रोज का गुजारा। पन्द्रह रोज की रोटी। अपनी भाभी की, घर की बहुत सी जरूरतों का समाधान।

आज ही तनख्वाह मिली थी। दस-दस के दस नोट जेब में पड़े थे। वह पन्द्रह रुपये खर्च कर सकता था। उसने सोचा, "मैं कमाता हूँ। मुझे हक है अपनी कमाई अपने ऊपर खर्चने का। माँस सामने था। भूख थी। पर साठ मिनट। सिर्फ एक घंटा। उसके बाद ? ओ: नहीं। पन्द्रह दिन का गुज़ारा। आधे महीने की रोटी। बहुत है। बहुत है।"

"नहीं।" जीवन ने उलझते-उलझते कह दिया।

"पारसी पसन्द है," युवक ने फिर पूछा।

पारसी ? उसे सोफिया याद आयी। मेहरा याद आयी। पर फ्राक उतार देने पर तो सोफिया सोफिया नहीं रह जाती। साठ मिनट। पन्द्रह रुपए। जीवन की दूसरी जरूरतें ? नहीं। नहीं। उसने जोर से कहा, "नहीं।"

युवक आगे कुछ न कह सका। दो मिनट चुपचाप बैठ कर चल दिया। वह दस कदम चला होगा कि जीवन की इच्छा हुई कि उसे आवाज़ देकर बुला ले। पर बुला न सका। वह कुछ कदम और बढ़ा फिर लौटा। जीवन ने देखा वह लौट रहा है। उसी की ओर लौट रहा है। उसे लौटते देख उसकी घबड़ाहट बढ़ी। वह सचमुच ही लौट आया। उसके मुँह से 'हाँ' निकल गयी तो ? जीवन अपने अधिकार के बाहर था। एक ओर मांस की स्थूल भूख थी। दूसरी ओर जिन्दगी की दूसरी जरूरतें थी। दोनों के बीच में पन्द्रह रुपये थे। साठ मिनट थी। इन साठ मिनट के लिये वह घर को भूल सकता है। इन पन्द्रह रुपयों को वह केवल अपना समझ कर अपने ऊपर खर्च कर सकता है। युवक पास आ गया। जीवन डरने लगा कि इस बार वह अवश्य ही हाँ कह देगा। छाती की जेब में पूरे सौ थे! पन्द्रह वह खर्च कर सकता है। एक 'हाँ'। पन्द्रह रुपए। साठ मिनट। वह हाँ कहने ही वाला था कि युवक बोला, "सेठ सोच लो। मैं आध घण्टे में फिर आऊँगा। तब तक सोच लो। सिंधी छोकरी दस में मिल जायेगी। सोच लो।"

युवक चला गया। दस रुपए। पर दस भी तो बड़ी रकम है। दस दिन की जिन्दगी है। दो महीने से ज्यादा का रेल का पास है। दो कुर्त्ते, दो पजामों का कपड़ा खरीदा जा सकता है। उसका जूता टूट गया है। बढ़िया चप्पल खरीदी जा सकती है। और वह आध घंटे में वापस आयगा।

आध घंटे बाद अगर 'हाँ' निकल ही गयी मुँह से ! नहीं, नहीं। दस रुपये भी बहुत होते हैं। उसने नंगे मांस पर कपड़ा डाल दिया। फ्राक पहने हुए एलिजाबेथ मुसकुरा रही थी। उसकी मुस्कान में पवित्रता थी। नहीं, यह मुस्कान तो सरिता की थी। सरिता, पवित्रता की जैसे जीवित प्रतिमा हो।

'पवित्रता' जीवन को लगा कि उसके हाथ-पैर मुख, सब कुछ काले पड़ गये हैं। पाप की छाया ने उसे ग्रस लिया है। जहाँ वह बैठा है वह जगह ही पाप की भूमि है। वह उठ खड़ा हुआ। आध घंटा बीत गया तो···, ओः नहीं। दस रुपये बहुत होते हैं। दस रुपए !

जीवन ने रुपयों वाली जेब को कस कर दाहिने हाथ से पकड़ा और वहाँ से ऐसे भागा जैसे कोई उन्हें उस से छीनने आ रहा है।

वह कैसे परेल पहुँचा उसे पता नहीं ! रामदुलारे ने उसकी खाट फाटक में बिछा दी थी। जीवन ने किसी से बात नहीं की। कपड़े तक नहीं उतारे। खाट पर जा कर लेट गया। रामदुलारे ने पूछा, "भैया थक गये।"

"हाँ," जीवन ने कहा।

"नींद आ रही है," उसने फिर पूछा।

"हाँ," जीवन ने फिर कहा।

"तबीयत ठीक नहीं ?" उसने नया प्रश्न किया।

जीवन ने इस बार भी कह दिया, "हाँ"

"दूध पी लो" उसने थोड़ी हिचक के साथ कहा।

"हाँ" जीवन ने उसकी बात ठीक से सुने बिना कह दिया।

वह खुशी-खुशी एक गिलास दूध खूब सारी मलाई डाल कर ले आया। आज जीवन दूध पीने को पहली बार तैयार हुआ था। उसने बड़े प्यार से गरम दूध का गिलास बढ़ाते हुए कहा, "भैया, उठो। दूध पीलो।"

"दूध," जीवन ने चौंकते से पूछा और कह दिया, "नहीं। मुझे सोने दो रामदुलारे।"

रामदुलारे की समझ में कुछ नहीं आया। वह दुखी-सा दूध ले कर लौट आया। जीवन दूर खड़ी नींद से लिपटने को विकल हो उठा। नींद कभी एलिजाबेथ बन जाती। कभी सिंधी छोकरी जिसे उसने देखा भी न था। वह तड़प उठा।

अवसान

अगले दिन जब जीवन ने तनख्वाह में से ७५ रुपये घर भेज दिये तो उसे कुछ तसल्ली हुई। इस महीने रेडियो से कोई आमदनी न हुई थी। किसी पत्र-पत्रिका में भी कुछ लिख न सका था। आगे का महीना भी कुछ वैसी ही संभावनाएँ दिखा रहा था। अधपेट रहते और पोषक तत्वों से हीन खटाई मिर्च का खाना खाते-खाते जीवन का पेट खराब हो चला था। पेट कभी साफ न रहता। कभी एक गड़बड़ी तो कभी दूसरी गड़बड़ी। दोपहर में जो एलिजाबेथ के साथ खाना शुरू किया उसका दो एक दिन में असर भी क्या होने वाला था। दूसरे वह एलिजाबेथ का ख्याल कर के थोड़ा ही खाता। वह जोर देती फिर भी वह संकोच बरतता। इसी तरह दिन बीतते गये। एलिजाबेथ को उसने धीरे-धीरे अपने घर आदि के बारे में बहुत कुछ बता दिया था। उससे बहुत-सी बातें दूसरे लोगों तक भी पहुँची। अभी तक कोई नहीं जानता था कि वह एम. ए. है। लेखक है। रेडियो से भी बोलता है। उस दफ्तर में काम करने वालों में से कोई भी एफ. ए. से ज्यादा न पढ़ा था। रमणीक तो सिर्फ मैट्रिक ही था। नीली ने जब उससे जीवन का बखान किया तो वह बोला, "झूठ बोलता है। सूरत से ही उसकी जाहिर है कि वह कैसा एम. ए. है। अंग्रेजी का एक सेन्टेन्स तो ठीक बोल नहीं सकता।"

"यह तुम्हारी ज्यादती है," नीली ने कहा, "ऐसा ही बेवकूफ होता तो अखबारों में उसकी चीजें न छपतीं। रेडियो के लोग उसे न बुलाते।"

"भली कही अखबारों की और वह भी···भाषा के" रमणीक बोला, "कुछ भी मिल जाए छाप देते हैं। रेडियो भी कोई काबलियत की निशानी नहीं। मेरे मकान के सामने जो पान वाला है वह गाने जाता है। उसका लड़का ड्रामों में बोलता है। ये भी ऐसे ही कुछ करते होंगे।"

नीली बोली, "तुम तो जलते हो। वह रेडियो पर टाक देता है।"

"तुमने सुनी कोई" रमणीक ने पूछा।

"एलिजा कहती है"···वह बोली।

"भली कही" रमणीक ने व्यंग्य पूर्वक कहा, "दुल्हे का बखान कौन करे, दुल्हे की मा। वह न कहेगी तो कौन कहेगा।"

"असलियत जानने वाला हर कोई कहेगा," नीली बोली, "मैंने खुद कल उससे थोड़ी-सी बातें की थीं। मुझे तो काबिल जान पड़ा।"

रमणीक कुछ कटु हो कर बोला, "तुम्हें कौन नौजवान नाकाबिल लगता है।"

नीली रमणीक की कमजोरी थी। वह उसका जीवन की ओर झुकाव चाहे कैसा भी हो बर्दाश्त नहीं कर सकता था। नीली को उसकी बात बेहद बुरी लगी। उसने भी टकासा जवाब दे दिया, "नाकाबिल सिर्फ एक तुम लगते हो।"

"नीली" रमणीक कुछ उत्तेजित हो उठा था।

नीली ने भी उत्तेजना का उत्तेजना से उत्तर दिया, "रमणीक।"

दफ्तर के दूसरे लोग चौंक पड़े। उनके लिए यह अभूतपूर्व दृश्य था। हतप्रभ से हो कर दोनों अपनी-अपनी जगहों पर जा बैठे। दफ्तर का काम चलता रहा। रमणीक जीवन के प्रति जलन से भर कर उसके बारे में भला-बुरा सोचता रहा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि कोई भी लड़की उसकी ओर क्यों आकृष्ट हो सकती है और मेरी ओर क्यों नहीं ?

इन्हीं दिनों जीवन को खारिश की बीमारी हो गयी। सारे बदन में छोटे-छोटे दाने निकल आये। डाक्टर ने बताया कि तेल की चीजें खाने का यह फल है। विटामिन की और कैलशियम की कमी है। डाईजेशन भी उसका ठीक नहीं। लीवर एक्सट्रैक्ट के इंजेक्शन लेने चाहिएँ खुजली ठीक होने पर। नहीं तो जॉन्डिस से बच नहीं पायगा। डाक्टर ने खटाई मिर्च यहाँ तक की नमक तक की मुमानियत की। गन्ने का रस और फल खाने को बताया। जीवन डाक्टर की बातों और बताये हुए इलाज से बीमारी से भी अधिक डर गया। उसके पास इतने पैसे ही न थे कि इलाज करा सकता। उसने डाक्टर से भी कह दिया, "मैं बीमार रह सकता हूँ, पर इलाज नहीं करा सकता।"

उपेक्षा से खुजली तेजी से बढ़ी। दाने ज्यादा बढ़ गये और पकते से

दिखाई देने लगे। दफ्तर में वह अब किसी दूसरे की कोई चीज नहीं छूता। एलिजाबेथ के पास भी उठना-बैठना छोड़ दिया। वह खुद उसके पास आती तो कहता, "यह ठीक नहीं है एलिजा। तुम्हें मुझ से अलग रहना चाहिए।"

"तुम इलाज क्यों नहीं कराते," एक दिन एलिजाबेथ ने दुखी होकर पूछा।

"करतो रहा हूँ" जीवन ने झूठ कहा।

"किस डाक्टर का ?" उसने पूछा।

जीवन को डाक्टर का नाम बताने में कुछ देर लगी जिससे उसका झूठ एलिजाबेथ पर प्रकट हो गया। वह दुखी हो कर बोली, "तुम मुझ से भी झूठ बोलते हो।"

जीवन ने सिर झुका कर कह दिया, "मेरे पास इलाज के लिए पैसे नहीं हैं।"

इस पर एलिजाबेथ ने उस दिन कुछ नहीं कहा। रमणीक और नीली में फिर बोलचाल शुरू हो गयी थी। पहले रमणीक ही बोला। वह नीली को सिनेमा ले गया। मुफ्त की पिक्चर नीली को ज्यादा पसन्द आती थी। रमणीक को जब खुजली हुई तो रमणीक ने नीली से कहा, "जानती हो यह सब क्या हुआ।"

"क्या होता। खुजली हो गयी। बम्बई की तो यह खास बीमारी है।" नीली बोली।

"बेबकूफ हो," रमणीक ने दोस्ती भरे स्वर में कहा, "तुम्हारे जैसी सीधी लड़की मैंने देखी नहीं।"

चालाक नीली को भी यह तारीफ पसन्द आयी। पूछा, "क्या बात है ?"

वह बोली, "अच्छी बीमारी नहीं है समझीं।"

नीली को यकीन न हुआ, "भला ऐसा कैसे हो सकता है। वह तो बड़ा सीधा लड़का है।"

रमणीक को एलिजाबेथ से चिढ़ थी। बोला, "सीधा है तभी तो फंस गया। इस ईसाई लकड़ी की देन है। देखती नहीं हो आजकल वह उससे कैसे अलग-अलग रहता है।"

नीली को कुछ-कुछ प्रत्यय हुआ। एलिजाबेथ को वह खुद भी ज्यादा

पसन्द नहीं करती थी। फिर भी पूछा, "पर तुम यह कैसे कह सकते हो ?"

रमणीक ने कुटिलता पूर्वक कहा, "मैं क्या इस एलिजा को जानता नहीं। इसके चंगुल में फँसते-फँसते बचा हूँ। तभी से यह मुझ से चिढ़ती है।"

नीली ने कहा, "जाने भी दो। तुम तो दुनिया भर को चंगुल में फाँसने वाले हो। तुम्हें फाँसने की कोशिश करे वह भी एक लड़की।"

"तुम नहीं जानती। लड़कियाँ कम खतरनाक नहीं होतीं," रमणीक ने अनायास कह दिया। वह भूल गया कि जिससे वह कह रहा है वह भी एक लड़की ही है।"

नीली बोली, "तुम लड़कियों के बिना रह भी नहीं सकते और फिर भी उनकी बुराई करते हो।"

"सच बात कहता हूँ," कह कर रमणीक अपने काम में लग गया।

नीली ने जीवन की बीमारी के बारे में वह प्रवाद मेहरा और सोफिया तक भी पहुँचा दिया। अब सब की सब एलिजाबेथ को बड़ी नफरत के साथ देखतीं और उसकी हर बात के अजीब मायने लगातीं। इसी तरह दो एक दिन और बीते। रमणीक अब नीली और सोफिया-मेहरा से यह सलाह करने लगा कि बॉस से कह कर जीवन को दफ्तर से छुट्टी दिलानी चाहिए। रमणीक का इरादा तो था कि उसे नौकरी से ही अलग करा दिया जाये। पर दूसरे उसके इस इरादे में शामिल नहीं हो सके। बस वह बॉस से यह कहने को तैयार हो गया कि बीमारी अच्छी नहीं। दफ्तर के दूसरे लोग भी चपेट में आ सकते हैं। बॉस की समझ में बात आ गयी। उसने जीवन को बुलाकर छुट्टी लेने को कहा। जीवन को इसमें कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती थी। पर छुट्टी का मतलब यह होता कि वह एलिजाबेथ को देख भी न सकेगा। इससे उसे अवश्य ही पीड़ा हुई।

उसी दिन शाम को जीवन एलिजाबेथ से बातें करने को रुका रह गया। लगा कि जैसे वह भी उससे कुछ कहना चाहती है और दूसरे लोगों के जाने की प्रतीक्षा कर रही है। दोनों ने पाँच बज जाने पर बहाने से अपने आप को व्यस्त रखा। जब सब चले गये और सिर्फ दफ्तर के कमरे बन्द करने वाला

चपरासी रह गया तो जीवन ने एलिजाबेथ से कहा, "मुझे बॉस ने एक हफ्ते की छुट्टी दे दी है। कहा है ठीक से इलाज कराओ। ठीक न होओ एक हफ्ते में तो छुट्टी बढ़ा लेना।"

एलिजाबेथ बोली, "मैं भी चाहती थी कि तुम छुट्टी लेकर इलाज करो। मुझे खुशी हुई।"

जीवन को पीड़ा हुई। वह चाहता था कि एलिजा उससे कहती कि तुम्हें न देख पाकर मुझे तकलीफ होगी। जब वह इसी तरह उसके बारे में सोच रहा था तो उसने एलिजाबेथ का बढ़ा हुआ हाथ देखा, जिसमें एक सफेद लिफाफा था। उसने पूछा, "क्या है।"

बोली, "कुछ भी है ले लो।"

जीवन ने लिया और खोल कर देखने ही वाला था कि एलिजबेथ ने उसका हाथ पकड़ कर रोक लिया। उसके खारिश भरे हाथ को पकड़ने में भी उसने कोई हिचक नहीं दिखाई। बोली, "अभी मत देखो। घर जाकर देखना। सम्हाल कर रख लो।"

जीवन ने अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा, "एलिजा तुम बहुत खराब हो। मुझे छुओ मत। जाओ पहले अपने हाथ धोओ। साबुन बॉस के बाथ रूम में रहता है।"

"क्यों ?" उसने मुसकुरा कर कहा।

"दिल न जलाओ एलिजा," जीवन ने प्यार से कहा, "मैं समझ रहा हूँ कि इस लिफाफे में क्या हो सकता है। मैं इसे नहीं लूँगा अगर तुम हाथ न धोओगी।"

एलिजा बाथ रूम में चली गयी। जीवन ने लिफाफा खोल कर देखा। पचास रुपये थे। इतने रुपये होंगे उसने न सोचा था। साथ ही एक चिट था जिस पर अंगरेजी में लिखा था, "तुम्हें अपना इलाज करने का चाहे हक न हो पर मुझे है।"

जीवन उन रुपयों को लेकर भाव विह्वल-सा खड़ा रहा। उसने बार-बार उस चिट को पढ़ा। एलिजाबेथ बाथ रूम से हँसती-हंसती लौट आयी थी। उसे हाथ में रुपए और चिट लिए देख कर वह लजा-सी गयी। बोली "बड़े बेसब्र हो। घर जाने का भी इन्तजार न कर सके।"

वह बोला, "यह तो बहुत हैं।"

"बचें तो वापस कर देना," उसने कहा।

जीवन बोला, "एलिजा मैं भला किस मुँह से यह सब तुम से स्वीकार करूँ। यह तुम्हारा कर्ज है। मैं इसी रूप में इसे ले सकता हूँ। जल्दी ही लौटा दूँगा।"

एलिजाबेथ का दिल कचोट उठा। बोली, "मेरी वह चिट पढ़ कर भी तुम यह कहते हो।"

जीवन कृतज्ञ स्वर में बोला, "बुरा न मानो एलिजा। एक मामले में मैं बड़ा अभागा हूँ। सदा दूसरों से उपकृत होता आया हूँ। अपने प्रियजनों के काम खुद कभी नहीं आया। उनके एहसान मेरे ऊपर हजारों हैं। अब और बर्दाश्त नहीं होंगे।"

एलिजा ने उसकी तरल आँखों को देख कर कहा, "तुम चाहे एहसान कहो चाहे कर्ज। पर मैंने इसे अपना हक समझा है, फर्ज समझा है। तुम मेरे हक से इन्कार क्यों करते हो।"

"एलिजा," जीवन ने विह्वल स्वर में कहा।

एलिजा की अंगयष्टि काँपी और वह बिना कुछ कहे सीढ़ियों की ओर चल दी। फिर दो-चार कदम बढ़ कर रुक कर बोली, "तुम रोज शाम को मिला करोगे। वहीं गेट वे आफ इंडिया। दफ्तर के ठीक बाद।"

इतना कह कर वह सीढ़ियों से उतरने लगी। जीवन पीछे-पीछे हो लिया। वह चर्च गेट की तरफ चली। जीवन भी साथ बढ़ा। थोड़ी दूर चल कर वह बोली आज मैं तुम्हारा वक्त न लूँगी। तुम पहले डाक्टर के पास जाओ। मुझे छोड़ दो। फौरन डाक्टर को दिखाओ। मेरा बस स्टैंड भी आ गया।"

जीवन उसे क्यू में छोड़ कर बोरीबन्दर स्टेशन पर आया। जिस डाक्टर को उसने शुरू में दिखाया था वह घाटकोपर में रहता था। गाड़ी में बैठ कर भी वह एलिजाबेथ के ही बारे में सोच रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्यों लोग उसके प्रति उदार हो जाते हैं। ऐसी उसमें कौन-सी अच्छाई है। फिर उसने आप ही मान लिया कि यह उनकी अपनी अच्छाई है। उसमें अच्छाई होती तो रमणीक भी क्या उसे अच्छा न समझता।

रमणीक के याद आते ही उस दिन वाला दलाल भी याद आ गया। दोनों की शक्ल में बड़ा साम्य था। वह उन सूरतों को भूलने की कोशिश करने लगा।

जीवन अपना इलाज कराने लगा। नित्य शाम को एलिजाबेथ से गेटवे आफ इंडिया पर मिलता। उसे अपने स्वास्थ की रिपोर्ट देता। थोड़ी बहुत दफ्तर की बातें होतीं। फिर दोनों अपने-अपने विगत जीवन की गाथा सुनाने लगते तो कभी भविष्यत् की कल्पनाओं में विभोर हो जाते। कभी वर्तमान की कटुताएँ, अतीत की स्मृतियों और अनागत की कल्पना तक को रुला डालतीं। फिर वे एक दूसरे को देख कर मुसकुरा उठते। उन्हें एक दूसरे को देख कर लगता कि उनके पास कहने को अनन्त है। कई बार कही हुई बातें फिर-फिर कही जातीं। पर कहने वाला भी नया रस लेता और सुनने वाला भी। शाम से रात हो जाती। फिर दोनों चर्च गेट पहुँच कर अलग हो जाते। जीवन बोरीबन्दर लौट जाता।

इसी तरह छुट्टी के पाँच-छः दिन बीत गये। जीवन स्वस्थ हो चुका था। त्वचा साफ हो गयी थी। डाक्टर ने उसे अच्छा होने के बाद भी टानिक्स लेने की हिदायत की। उसकी राय में जीवन की अंतड़ियाँ बहुत कमजोर हो चुकी थीं और कभी भी उसे आँतों की टी. बी. हो सकती थी। जीवन सुन लेता। चुप रहता। आँतों की टी. बी. वह भोग सकता था पर अच्छा खाना खाने में समर्थ न था। पर सुधरते हुए स्वास्थ्य और एलिजाबेथ के सम्पर्क में वह सब भूला रहता। तभी एलिजाबेथ ने शाम को मिलने पर उसे एक सूचना दी। कहा, "शायद मैं जल्दी ही नौकरी छोड़ दूँ।"

जीवन को लगा कि शायद उसकी शादी होने जा रही है। अब उसे आवश्यकता ही नहीं रहेगी कि नौकरी करे। उसने उदासी से कह दिया, "ठीक है।"

इस पर एलिजाबेथ को हँसी आ गयी। हँसी की लहर पर शब्दों की तरी छोड़ती हुई बोली, "क्यों ठीक क्यों ?"

इसका जवाब जीवन क्या दे। एलिजाबेथ बोली, "तुम्हें अच्छा नहीं लगा। पर मेरे लिए अच्छा ही होगा। मैं अपने सौतेले बाप से अलग रह सकूँगी।"

जीवन का पूर्व विश्वास पक्का हो गया। पूछा, "वह कौन भाग्यशाली है।"

एलिजाबेथ उसका इंगित समझ कर भी अनजान बनी रही। बोली, "तुम्हें भी दूसरों के भाग्य से जलन होती है।"

"नहीं तो," जीवन ने कहा और समुद्र में तैरते हुए एक स्टीमर को देखने लगा। एलिजाबेथ ने शरारत के साथ उसके कान के पास मुँह लगा कर कहा, "बात गुप्त है। किसी से कहना मत। मुझे एक दूसरी अच्छी नौकरी मिल गयी है।"

कनबात के पूरी होते न होते दोनों मुक्त भाव से अनायास ही हँस पड़े। जीवन ने हँसते-हँसते कहा, "तुम फिल्म में जातीं तो बड़ी सफल रहतीं। नाटक बड़ा अच्छा करती हो।"

उसने जवाब दिया, "नाटक में हर औरत कुशल होती है। न हो तो पुरुष उसे गन्दगी की तरह घड़ी भर में त्याग दे।"

जीवन अचानक गम्भीर हो गया। मन ही मन सोचने लगा कि एलिजा का समस्त व्यवहार नाटक है। वह सोच रहा था और एलिजाबेथ बता रही थी, "वे यहाँ के एक बड़े भारी जवेरी हैं। उनके सिर्फ दो लड़के हैं। बड़े लड़के की शादी हुए कई बरस हुए। उसके दो छोटे-छोटे बच्चे भी हैं। एक पाँच बरस का लड़का और एक तीन बरस की लड़की। मुझे उन बच्चों की देखभाल, पढ़ाने आदि की नौकरी मिल गयी है। बस गार्जियन ट्यूटर समझो। उनके घर ही रहना होगा। दो सौ रुपये महीना पगार मिलेगी।"

जीवन को इस समाचार से प्रसन्नता हुई। बोला, "यह तो अच्छी खबर है। मै खुश हूँ।"

एलिजाबेथ ने उसे तंग करने के ख्याल से कहा, "पर उसका जो छोटा लड़का है वह इंग्लैंड रिटर्न है। साल भर ही हुआ विलायत पास कर के लौटा है।"

"क्वारा है ?" जीवन ने पूछा। वह भी उसकी शरारत समझ गया था।

"अगर हो तो," एलिजाबेथ ने कहा।

"तो मैं तुम्हें वहाँ नौकरी करने न दूंगा," जीवन जाने कैसे कह गया। दोनों पुलक उठे। दोनों एक दूसरे के जैसे और समीप हो गये। दोनों के

हाथ एक दूसरे को छू गये। दोनों की निगाहें झुक गयीं। दोनों गूंगे हो गये। क्षण भर का मौन दीर्घ जान पड़ने लगा।

एलिजाबेथ ने गालों की ललाई के कपोल कूपों में डूब जाने पर कहा, "तुम मुझे इतनी अच्छी समझते हो। वह इंग्लैंड से पढ़ कर लौटे हैं। जवेरी का बेटा है। खूबसूरत है। मैं एक गरीब ईसाई की लड़की आज दफ्तर में काम करती हूँ। कल उसकी नौकर हो जाऊँगी। न सुन्दर, न उतनी पढ़ी-लिखी।"

जीवन भावुकता से भर उठा, "तुम खुद को मेरी आँखों से देखो एलिजा। तुम क्या हो यह मेरी सांसों से पूछो। तुम्हारी खूबसूरती मेरे सपने जानते हैं। वह जवेरी है। पर तुम हीरा हो। कोहेनूर।"

"जीवन," एलिजा जीवन की कविता से पुलक उठी थी।

"एलिजा," जीवन कवि की कल्पना से भर उठा था।

दोनों ने अनुभव किया कि वे एक दूसरे के इतने करीब आ गये हैं कि अब उनके बीच में अन्य कोई नहीं आ सकता। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों में से कोई भी एक दूसरे के बिना रह नहीं सकता। मन ही मन दोनों ने एक दूसरे को अपना लिया। जीवन को उस सरिता की भी याद नहीं आयी जो उसके यौवन के मध्याह्न में रूप की ज्योति-सी खिल उठी थी। जीवन के लिये जो सुन्दरता पवित्रता और गुणों की सीमा थी। आज तो सामने बैठी हुई एलिजाबेथ ही उसे उर्वशी, सरस्वती और लक्ष्मी एक साथ लग रही थी। उसके कन्धों तक झूलते हुए रूखे-रूखे बाल। उसके पुष्ट वक्ष और सूक्ष्म कटि को उभार कर दिखाने वाली फ्राँक। उससे अधिक सुन्दर कुछ नहीं हो सकता। आत्मविस्मृत जीवन ने सोचा।

एलिजाबेथ अपने मन के अनुराग को गूढ़ रख कर कह रही थी, "छोटे लड़के की भी शादी हो चुकी है। अभी दो महीने हुए हैं। मैं उसकी बीबी से भी मिल आयी हूँ। उतनी सुन्दर स्त्री मैंने नहीं देखी। एम. ए. पास है। इलाहाबाद की है। तुम भी तो वहाँ पढ़े हो न।"

एम. ए. पास; इलाहाबाद की, असीम सुन्दरी। जीवन के सामने सरिता आ कर खड़ी हो गयी। एलिजाबेथ रूप के सागर-सी उसके सामने लहरा

रही थी। सरिता की स्मृति में सागर डूब गया। जीवन ने सामने बैठी हुई एलिजा को देखा। कहाँ है वह इतनी सुन्दर ? कहाँ है वह इतनी अच्छी। कहाँ है उसे उससे प्यार। सरिता जो दूर रह कर भी वेदना दे सकती है। पास रह कर सुख तो हर स्त्री दे सकती है। पर दूर रह कर जो वेदना देने में समर्थ हो प्यारी वही। सरिता उसकी प्यारी है। जीवन एलिजाबेथ से कहीं दूर चला गया।

"क्या सोचने लगे," सरिता ने पूछा, "तुम उसे जानते हो।"

"नहीं," जीवन ने सम्हल कर कह दिया। पूछा, "उसका नाम क्या है ?"

"नाम तो मुझे मालूम नहीं। घर में उसे छोटी रानी कहते हैं।" एलिजाबेथ ने बताया।

जीवन सरिता को स्मृति से दूर करने की हठात् चेष्टा करने लगा। वह नहीं हो सकती। हो भी तो उससे क्या ? विवाह तो उसका होना ही था। जीवन में और सरिता में जो अन्तर था वह मिट नहीं सकता था। एलिथाबेथ उसे खिन्न देख कर सोच रही थी, "अवश्य ही यह उसे जानता है। क्या दोनों ने प्यार किया है। पूछा, "तुम्हें कोई याद आ गया।"

"हां," जीवन ने कहा, "मेरा भी एक दोस्त बिलायत पढ़ने गया था। इग्लैंड से जब वह हवाई जहाज से लौट रहा था तो हवाई जहाज में आग लग जाने से दूसरे पैसेन्जरों के साथ-साथ वह भी जल मरा था। मुझे याद आ गया। वह इलाहाबाद में ही रहता था।"

जीवन ने इस झूठ को इतने सहज भाव से कह दिया था और एलिजाबेथ ने उसे वैसे ही सत्य भाव से स्वीकार कर लिया था कि स्वयं जीवन को अचरज होता रहा।

उसके बाद दोनों का बातों में मन न लगा। लौटने का समय भी हो गया था। दोनों उठ खड़े हुए। चर्च गेट की तरफ चले। जीवन ने चलते-चलते कहा, "शायद मैं दफ्तर कल ही आ जाऊँ।"

"क्यों ?" एलिजाबेथ बोली, "अभी तो दो रोज की छुट्टी बाकी है।"

"मैं अब ठीक जो हो गया हूँ।" उसने कहा।

"नहीं, अभी आराम की जरूरत है। छुट्टी के बाद ही आना," एलिजाबेथ ने अधिकार के साथ कहा।

जीवन बोला, "मेरी ऐसी बीमारी तो नहीं जिसके अच्छा होने पर आराम की भी जरूरत पड़े।"

उसने फिर कहा, "तुम्हारी आँते भी तो कमजोर हैं।"

जीवन को मान लेना पड़ा। एलिजाबेथ ने उसे बताया कि वह किसी भी हालत में चार-पाँच रोज से पहले नयी नौकरी पर नहीं जा सकेगी। बॉस जब तक कोई आ न जायेगा उसे रिलीव न करेगा। वैसे तो नोटिस देना चाहिए महीने भर का। पर वह अच्छा आदमी है। मान जाएगा।

उस रात को जीवन बड़ा दुखी रहा। उसे सतत सरिता की ही याद आती रही। एलिजाबेथ दूर जा पड़ी थी। वह बार-बार प्रयत्न करता कि सरिता को भुला दे। उसे कल्पना मान कर वास्तविकता से अलग कर के देखे। पर भुलाने के प्रयत्नों में वह और याद आती रही।

अगले दिन भाभी की चिट्ठी मिली। मकान की एक तरफ की छत ढह गयी है। स्वयं भाभी के पैर में जो चोट कुछ दिन पहले लग गयी थी उसमें अब जहरबाद हो गया है। डाक्टर पाँव काटने की सलाह दे रहे हैं। पर जब तक जीवन न आए कुछ नहीं किया जा सकता। और जीवन का जाना व्यर्थ यदि रुपया न हो। जीवन सोच में पड़ गया। उसने चिट्ठी पढ़ कर सूने आसमान को निहारा। उसकी आँखों की वेदना मुखरित हो कर कहना चाहती थी कि ओरे अगोचर तेरी वह अनन्त करुणा भी क्या मेरे लिए अगोचर ही बनी रहेगी।

एलिजाबेथ से वह मिला, पर इस बारे में उससे उसने कुछ नहीं कहा। एलिजाबेथ ने उसे सूचना दी कि बॉस इस बात पर तैयार हो गया है कि जिस दिन जीवन अच्छा हो कर काम पर आ जायेगा उसे छुट्टी दे दी जायगी। फिर वे दोनों रोज न मिल सकेंगे। पर हफ्ते में इतवार की छुट्टी उसे मिलेगी। उस छुट्टी को वे दोनों साथ बिताया करेंगे। उसने जीवन से यह भी कहा कि उसके न मिलने पर वह अपनी तन्दुरुस्ती का ज्यादा ख्याल रखेगा। ढंग से खाना खायगा। पहले अपनी फिक्र करेगा फिर दुनिया की।

पर जीवन की तकदीर में जैसे फिक्र ही फिक्र थी। एलिज़ाबेथ के नौकरी छोड़ते ही जीवन के लिए दफ्तर सूना हो गया। वह पूर्ववत चुपचाप अपना

काम करता। रमणीक उसकी उदासी पर छींटे कसता रहता। सोफिया और मेहरा चुप रह कर इन छींटों का रस लेती रहतीं। वे आपस में ही अधिक घुलीमिली रहती थी। नीली जीवन के प्रति उदार होती जा रही थी। पर जीवन उससे बचता ही रहता था। फिर भी नीली उससे बातें करने के अधिक से अधिक अवसर निकालती। रमणीक किसी न किसी बहाने नीली को सुना कर चिढ़ से कह देता कि औरत कभी एक की हो कर नहीं रह सकती। उसे पर्दे में और घर की चहारदीवारी के भीतर रख कर ही पवित्र रखा जा सकता है। नीली उसका व्यंग्य समझती पर कह कुछ न पाती।

जीवन अब शाम को दिनेश से मिलने का अवसर यत्न करता। एलिजाबेथ सचमुच ही उसे एक भारी अभाव दे गई थी। थोड़े ही दिनों में वह उसकी आवश्यकता बन गयीं थी। दिनेश को उसने अपने घर की समस्या बतायी। कैसे जल्दी से इतना रुपया कमाया जाये ? रेस, लाटरी और पहेलियों तक के बारे में दोनों ने सोचा। दिनेश की आय गुजारे भर की थी। जीवन की नौकरी नाम की थी। दोनों अतिरिक्त काम की खोज में लगे रहे। दिनेश का उद्यम फिर सार्थक हुआ। एक हिन्दी अखबार में जीवन को सह-सम्पादक की नौकरी मिल गयी। अखबार रात में छपता था। रात के ९ बजे से सुबह ४-५ बजे तक का काम था। जीवन ने स्वीकार कर लिया। उसकी दोनों नौकरियाँ साथ-साथ चलने लगीं। अब दो-तीन घंटे का ही समय मुश्किल से सोने को मिलता। फिर सोने की ठीक जगह न होने से और गड़बड़ी रहती। वह खाट पर बिस्तर बिछा कर कोई ५-६ बजे लेट जाता। फिर ८-९ बजे तक उठने की नौबत आ जाती। खटमल अलग परेशान करते। खाने-पीने का क्रम पूर्ववत चलता रहा। वह अधिक से अधिक रुपया जोड़ने और बचाने की फिक्र में रहता। रेडियो के भी प्रोग्राम मिले। उनका पैसा भी उसने जमा ही किया।

एलिजाबेथ की दो चिट्ठियाँ हर हफ्ते में आतीं। हर एक में खाने के बारे में हिदायतें होती। फिर इतवार को वह चिट्ठी में दिये गये समय से किसी खास जगह मिलती। जीवन को पहले से भी अधिक दुर्बल देख कर झींकतीं। कसमें खिलाती। समझाती। रुपये तक देने को तैयार रहती।

जीवन उससे बहुत कुछ झूठ बोलता। झूठी 'हाँ' कह कर 'ना' पर ही अमल करता।

जीवन अपने पहनने के कपड़ों तक का ठीक-ठीक ख्याल न रखता। दाढ़ी जरूरत से ज्यादा बढ़ जाती। रमणीक ने उसके खिलाफ बॉस से बहुत कुछ कहा। दफ्तर में ऐसे व्यक्ति का रहना दफ्तर के लिये शोभाजनक नहीं। आखिर बॉस ने जीवन को बुलाकर कुछ समझाया, कुछ डाँटा और कह दिया कि आइन्दा से कपड़े साफ होने चाहिएँ, और दाढ़ी बनी हुई।

जीवन ने उस डाँट को भी सह लिया। उसने कपड़ों की सफाई और दाढ़ी पर जो खर्च बढ़ाया खाने में उसे कम कर दिया। कमजोरी बढ़ती गयी! पाँडुरोग के रोगी-सी उसकी आकृति हो गयी। फिर भी नीली उसकी ओर बढ़ती गयी। रमणीक की जलन भी उसके अनुपात में बढ़ती गयी। एक दिन वह जीवन से बोली, "मिस्टर जीवन तुम मालूम पड़ता है अपने खाने के बारे में लापरवाह हो। अगर मैं अपने लंच के साथ कोई इन्तजाम कर लूँ तो तुम्हें एतराज तो न होगा।

नीली को मालूम था कि एलिजाबेथ के साथ वह खाया करता था। उसने सोचा कि उसके साथ खाने को भी वह राजी हो जायगा। पर जीवन ने कह दिया, "थैंक्स। कोई जरूरत नहीं है।"

नीली को इसमें सरासर अपना अपमान लगा। वह स्वभाव से ही असहिष्णु थी। कह दिया, "मिस्टर जीवन तुम बड़े भारी मुग़ालते में हो। तुम इस काबिल भी नहीं कि कोई तुम से बातें करे। एलिजाबेथ ने तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है। तुम किसी लड़की के नेक इरादे की भी कद्र करना भूल गये।"

"मैं माफी चाहता हूँ," कह कर जीवन अपने काम में लग गया। उसकी समझ में नीली का आरोप आया ही नहीं। वह क्यों उसे परेशान करती है। उसकी अपनी बहुत-सी चिन्ताएँ हैं। नीली क्यों उन्हें बढ़ाना चाहती है। नीली के लिए उसके पास भी कुछ है यह वह समझ ही नहीं पाता था।

उसकी समस्त वासनाएँ इस समय रुपए में केन्द्रित हो गयी थीं। वह रुपए को ही एक मात्र आवश्यकता मानता था। जो वासना कुछ ही दिन पूर्व

उसके अंग-अंग को दर्द से भर चुकी थी वही अब रोगी के पुरुषार्थ-सी थक कर कहीं सो गयी थी।

एलिजाबेथ से भी वह जब मिलता तो पहले जैसी उमंगें उसमें न रहतीं। एलिजाबेथ उसे अब भी अच्छी लगती, प्रिय लगती, पर उसकी कामना में कोई आवेग शेष न रह गया था। वह अब भी उसके सुडौल शरीर को देख कर मुग्ध होता, पर शब्दों में कभी अपनी प्रशंसा व्यक्त न कर पाता। अतृप्त की तरह एलिजाबेथ को देखा करता पर प्यार से एलिजा, एलिजा करके कभी पुकार न पाता।

टूटा मकान और लंगड़ी भाभी हर समय उसकी आँखों में अड़े रहते। टाँग कट जाने पर भाभी चिड़ियाओं का सहारा ले कर चलती हुई कैसी लगेंगी यह कल्पना उसे अधीर कर देती।

एलिजाबेथ ने जिस जवेरी के यहाँ नौकरी की थी उसकी कोठी बर्ली में थी। एलिजाबेथ इतवार को किसी खास वक्त से बर्ली स्टेशन पर ही जीवन को मिल जाया करती। उस दिन जीवन सम्पूर्णतः एलिजाबेथ के अधीन रहता। जैसे-जैसे वह कहती उसे करना पड़ता। जो-जो खिलाती खाना पड़ता। सिनेमा भी जाना पड़ता और पिकनिक पर भी जाते। यह एक दिन ही सात दिनों में सुख और मस्ती का दिन होता। पर जीवन उस दिन भी अपनी चिन्ताएँ न छोड़ पाता। एलिजाबेथ को यह बुरा लगता। उसके पास हो कर भी जब वह दूसरी चिन्ताओं में ग्रस्त रहता तो वह अपने प्यार को अपमानित-सा अनुभव करती। पर कह कुछ न पाती। हर इतवार को वह जीवन का वजन भी लेती। अगले इतवार को वह वजन बढ़ा कर मिले इसकी कसमें भी देती। पर मिलने पर उसे पहले से कुछ कम ही पा कर दुखी हो उठती। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आखिर जीवन का ह्रास क्यों हो रहा है। वह सोचती, खूब सोचती, पर समझ कुछ न पाती। जीवन से पूछती तो वह टाल देता। झूठ बोल देता। जाने एलिजाबेथ से झूठ बोलने में अब उसे ग्लानि क्यों न होती थी।

जीवन का स्वास्थ्य गिरता गया। शक्ति और स्फूर्ति घटती रही। भूखे रहते-रहते अब उसे भूख लगना ही बन्द हो गया। इतवार के दिन एलिजाबेथ की

इच्छा के अधीन होने के कारण उसे बहुत कुछ खाना पड़ता। उसका फल भी अच्छा नहीं होता। अंतड़ियाँ अब गरिष्ट भोजन को पचाने योग्य न रह गयी थीं। पेट में हवा बनती। दर्द होता। कभी कब्ज, तो कभी दस्त। धीरे-धीरे खून का बनना कम हो गया। चेहरा सफेद पड़ता चला गया। आँखें पीली पड़ती गयीं। ज्वर भी उसे मन्द-मन्द रहने लगा। पर उस ज्वर का ज्ञान उसे न हुआ। काम करने की शक्ति के साथ-साथ इच्छा भी कमज़ोर पड़ती गयी। फिर भी वह दिन में दफ्तर में और रात में अखबार में काम करता। भूलें उससे अक्सर हो जातीं। उनके लिए भली-बुरी बातें भी सुननी पड़तीं। फिर भी वह काम करता, भूलें करता। काम करते-करते जब शक्ति जवाब देने लगती तो दुखिया भाभी याद आ जाती। भाभी के आँसू दिखाई देने लगते। मकान की टूटी छत और भाभी की गलती हुई टाँग की याद चाबुक-सी लगती और वह शिथिल शरीर को किसी तरह सम्हाल कर काम में लग जाता।

सरिता भी उसे याद आती। पर उसकी स्मृति को प्रश्रय देते हुए वह घबड़ाता। उसे अपने आप से दूर रखने के लिए वह काम में लग जाता या एलिजाबेथ को पत्र लिखने बैठ जाता। सरिता को वह सोने के ऐसे दुर्ग में स्थापित कर देता जिसे वह मान लेता कि दुर्भेद्य है। एलिजाबेथ उसे सड़क के किनारे खड़ी अपने ही जैसी आत्मा दिखाई देती। उसे देखकर वह सोचता कि वही मेरा सहारा बन सकती है। वह कल्पना में उसके साथ-साथ चलने लगता। पर जब एलिजाबेथ से साक्षात्कार होता तो उसे लगता कि उसके पैर कमजोर हैं। कदम लड़खड़ा रहे हैं। एलिजाबेथ धीर गति से बढ़ रही है। उसका साथ देने की ताकत उसमें नहीं। उसे पिछड़ता देख एलिजाबेथ रो पड़ती। पर वह उसके आँसू पोंछने के लिए कुछ नहीं कर पाता।

एक इतवार को दोनों जुहू गये। एलिजाबेथ का इरादा था कि आज ज्वार के वक्त नहाया जाये। सुबह का वक्त था। ज्वार आने में अभी देर थी। दोनों किनारे पर बैठ गये। इधर-उधर की बातें होती रहीं। फिर एलिजाबेथ उठी। उसने तट पर से बहुत-सी सीपियाँ और छोटे-छोटे शंख बटोरने शुरू कर दिये। खूबसूरत सीपियों और शंखों का ढेर जीवन के आगे लगा कर वह

बच्चों की-सी प्रस..... ....् उठी। जैसे वरुण कन्या ने धरती के पुत्र को समुद्र के अनन्त रत्न भेंट किये हों। जीवन रेत का एक महल बनाने की चेष्टा में था। पर बार-बार उसकी दीवाल ढह जाती। एलिजाबेथ ने हँसकर कहा, "तुम सूखे रेत की दीवाल खड़ी करना चाहते हो।"

जीवन ने कोई जवाब नहीं दिया। जैसे एलिजाबेथ के कथन के सत्य को उसने स्वीकार कर लिया था। वह सीपी, घोंघों को समुद्र की रेती पर सजाने लगता। उसने बड़े प्यार के साथ उन सीपियों से कुछ अक्षर बनाये। प्रत्येक अक्षर के साथ एलिजाबेथ का चेहरा खुशी से दमकता गया। जीवन ने सीपी के अक्षरों में लिखा 'एलिजा।' सूरज की तिरछी किरणें उन सीपियों पर पड़तीं और चमक उठतीं। उनकी चमक में एलिजाबेथ के दाँतों की आभा होंठों के हास के साथ मिल कर और भी चमक उठती। जीवन को अपने उस लघु कृतित्व से परमतोष हुआ। वह उस घड़ी अपने समस्त अभावों को भूल गया। उसने अपने हृदय के समस्त माधुर्य के साथ धीमे से पुकारा, "एलिजा।"

जैसे पुलकों से भरी छोटी-सी लहर तट को छू कर फिर लौटती नहीं वैसे ही एलिजा के शरीर में एक पुलक हुआ और मन में उत्कट इच्छा के रूप में यह भाव आया कि सामने बैठे हुए उस पुरुष से लिपट कर अपना अस्तित्व ही मिटा दे। उस समय उसे जीवन अनन्त शक्ति और सौन्दर्य से युक्त समर्थ पुरुष लग रहा। उसने मीठे स्वर में पुकारा, "जीवन !"

एलिजा, जीवन ये दो शब्द नारद की वीणा से निकली राग-रागनियों से हवा की लहरों पर तिरते हुए जाने शून्य में कहाँ शून्य हो गये। जीवन ने अपने जीवन के परम आनन्द की अनुभूति की। पर आनन्द कितना अचिर होता है यह अभागा जीवन खूब जानता था। तभी वह सोचने लगा, "यदि इस दुनिया में रुपये न होते सिर्फ सीपियाँ होतीं, तो दुनिया कितनी सुखी और सम्पन्न होती।"

मन की बात होंठों पर भी आयी और उसने एलिजाबेथ से भी यही कहा। वह भी जैसे इस वाक्य को सुनकर मधुमती भूमिका से वास्तविकता की भूमिका में आ गयी। उसने देखा कि उसके सामने बैठा हुआ पुरुष कितना दुर्बल,

कितना श्रीहीन और कितना थका हारा है। चाँदी को अर्जन करने में उसने अपना कंचन-सा शरीर ही मिट्टी कर दिया। वह दुख से भर कर बोली, "तब लोग सीपियाँ ही कमाने लगते। तब दुनिया के लेन-देन का माध्यम सीपियाँ ही बन जातीं। सीपियों के बैंक खुलते। इन्हीं के बल पर बड़े-बड़े कारखाने बनते। दुनिया का काम चलता। और तब इन्हें अर्जित करने में आदमी अपने आपको मिटाया करता।"

जीवन उसका अभिप्राय समझ कर भी चुप रहा। एलिजाबेथ आँखों में आँसू भर कर बोली, "जीवन मुझे रुलाते क्यों हो। तुम यह समझते क्यों नहीं कि दुनिया के सुख का आधार यह शरीर है। तुमने उस आधार को कितना जीर्ण कर डाला है। जीवन तुम बम्बई से चले जाओ। यह बम्बई तुम्हें खालेगी।" जीवन तुम्हें इस तरह छीजता देख कर मैं भी खुद को सम्हाल न सकूँगी।"

एलिजाबेथ हिचकियों, सुबकियों और आँसुओं की धाराओं के साथ रो पड़ी। समुद्र में ज्वार आने लगा था। थोड़ी ही देर में वे जिस स्थान पर बैठे थे उसे समुद्र की लहर आ कर भिगो गयी। दोनों के बदन के कपड़े कुछ-कुछ भीग गये। वहाँ से हट कर वे पीछे आये। ज्वार की सीमा रेखा से बाहर दोनों ने अपने कपड़े उतारे। नहाने के कपड़े पहने। एलिजाबेथ ने स्विमिंग कस्ट्यूम पहन ली थी और जीवन ने जाँघिया। दोनों एक दूसरे से बिना बोले साथ-साथ समुद्र की तरफ चल दिये। धीरे-धीरे उन्होंने जल में प्रवेश किया। घुटने-घुटने जल में पहुँचे और आगे बढ़े। कटि तक जल आ गया। दोनों बेखबर थे। तभी जोरों की लहर आयी। वे लहर की ओर पीठ करना भूल गये। लहर उनके सिर पर से उतरती हुई आगे बढ़ गयी। आँख-नाक में खारा पानी भर गया। जीवन के मुँह में भी कुछ पानी चला गया, जिससे मुँह खारा हो उठा। अनायास ही दोनों एक दूसरे के इतने पास चले आये कि उनके बदन सट गये। उस स्पर्श में दोनों ने सुख का अनुभव किया। उनकी उदासी जैसे उस ज्वार में ही बह गयी थी। जीवन का दाहिना हाथ एलिजाबेथ की कटि में चला गया। एलिजाबेथ का बाँया हाथ जीवन के कन्धे का आधार ले झूलने लगा। दोनों कुछ कदम और बढ़े और

जल लगभग छाती तक आ गया। दोनों प्रसन्न थे। एलिजाबेथ ने जीवन से अपनी कटि छुड़ा कर उसके मुँह पर पानी के छपके मारे। जीवन उसे पकड़ने दौड़ा। पर एलिजा तैर कर दूर चली गयी। जीवन को तैरना तो खूब आता था पर समुद्र में तैरने का अभ्यास न था। एलिजा उसके हाथ नहीं आयी। वह गहरे पानी की ओर चली गयी। जीवन की उधर जाने की हिम्मत नहीं पड़ी। वह चिल्ला कर बोला, "इतना आगे मत जाओ एलिजा। ज्वार जोरों पर है।"

एलिजा ने निर्भीक स्वर में कहा, "तुम्हें क्या। डूब जाने दो।"

जीवन प्यार से भर कर चिल्लाया. "तुम्हें मेरी कसम प्यारी एली। एली, एलिजा।"

आज प्रथम बार उसने एलिजा के प्रति अपने प्यार की इतनी स्पष्ट और मधुर अभिव्यक्ति की थी। एलिजा प्यार के मंत्र से मुग्ध-सी जीवन के पास चली आयी। उसने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। वक्ष तक जल में खड़ी-खड़ी मुसकुराने लगी। ज्वार की लहरें खूब उठ रही थीं। दोनों हाथ बाँधे-बाँधे उन लहरों के ऊपर उठ जाते। लहर निकल जाती तो फिर आवक्ष जल में खड़े रह जाते। जब उस स्थान पर अधिक जल हो गया तो दोनों तट की ओर चले आये। एलिजा का आधा वक्ष जलमग्न था। उसका सुडौल शरीर भीगी हुई कस्ट्यूम में और भी मनोहर हो उठा था। जीवन का मन कामनामय हो उठा। वह स्वयं में पौरुष का अनुभव करने लगा। उसने एलिजा को अपनी ओर खींचा। वह लहर-सी बढ़ आयी और उसके वक्ष पर वैसे ही विश्राम करने लगी जैसे लहर तट पर। जीवन को नशा हो गया। एलिजाबेथ की आँखें आधी मुँद गयी। उसने शराब से मादक स्वर में कहा, "जीवन, मेरे जीवन, तुम कितने अच्छे हो। तुम्हारा स्पर्श कितना सुखद है। तुम मुझ से कभी दूर न जाना। तुम मुझ से कभी अलग न होना। मुझे वचन दो। दो मुझे वचन, नहीं तो मैं आज इसी सागर में डूब मरूँगी।"

जीवन ने आत्म-विभोर हो कर कहा, "एली, तुम्हें यह सागर मुझ से छीनने की हिम्मत करेगा तो मैं इसे सुखा डालूँगा। इसका सारा जल बादल बन कर पी जाऊँगा। मेरी एली। मैं तुम से कभी अलग नहीं होने का, कभी अलग नहीं होने का। एली, एली, एली।"

दोनों के भुजबंधन कस गये। दोनों सुख के एकान्त लोक में पहुँच गये। अब दोनों मूक थे। केवल होंठ-होंठों से बात कर रहे थे। जुहूका मुक्त तट, अथाह सागर, अनन्त आकाश, नारियल के पेड़, जल के जीव, तट पर पड़ी सीपियाँ, पानी में मग्नरत और ज्वार की लहरें उनका सुख विलास देखती रहीं। समय सुख के साथ बीतता गया। सूरज आसमान की चोटी भी पार कर गया दोनों को यह अति-काल पता भी न चला। ज्वार थक कर लौटने लगा। भाटा शुरू हो गया। धीरे-धीरे जल कम हुआ। जो जल दोनों के कंठ तक पहुँच चुका था अब घटते-घटते वक्ष तक आया। और घटा, कटि तक आया। दोनों उस जल क्रीड़ा से विरत हुए। दोनों ने एक दूसरे को देखा। पानी में जो अंग सम्पर्क में सुख मान रहे थे वे सकुचा गये। जीवन विस्तृत नीली जल-राशि को देखने लगा। एलिजाबेथ बोली, "क्या देख रहे हो उधर। क्या सारी सुन्दरता सिर्फ उधर ही है।"

जीवन ने उधर से दृष्टि हटा कर एलिजाबेथ की ओर देखा और अनुभव किया कि सारी सुन्दरता केवल यहाँ ही है। बोला, "एली। तुम सुन्दरता की चोर हो। तुम इतनी खूबसूरत क्यों हुई। देखो तुमने चाँद सूरज को भी कुरूप कर दिया।"

रूप की प्रशंसा का नशा नारी पर शराब से भी तेज होता है। उसका वक्ष फूल उठा। वह और सुन्दर हो उठी। उसने इठला कर चारों तरफ देखा। चारों तरफ से उसकी दृष्टि सिमट कर जीवन पर आ कर रुक गयी। तभी जैसे माथे पर प्रहार हुआ। हाँ, वह जीवन के कंकालप्राय शरीर को देख कर सन्न रह गयी। उसके गले की हड्डियाँ छाती की हड्डियाँ, पसलियाँ सब अलग-अलग दिखाई दे रही थीं। पीली आँखें, पीला मुख। सिकुड़ा हुआ पेट। उसकी दृष्टि अपने माँसल गात पर भी पड़ी। कितना अन्तर था। वह जाने कैसे सब कुछ भूल कर उस कंकाल के सम्पर्क में सुख मान रही थी। आः उसके प्यार का सहारा इतना जीर्ण क्यों है ? एलिजा जितनी सुखी थी उससे अधिक पीड़ित हो उठी। उसका चेहरा उतर गया। आँखों में विषाद छा गया। जीवन उस आकस्मिक परिवर्तन को देखकर चकित भाव से पूछ बैठा, "एली ! यह क्या हुआ मेरी एली।"

"कुछ नहीं," उसने कहा, "जल्दी चल कर कपड़े पहनो।"

"क्या जाड़ा लगने लगा," जीवन ने पूछा।

उसने कहना चाहा कि तुम इतने अंधे क्यों हो ? जब मुझ में इतनी सुन्दरता देख सकते हो तो अपने तन की कुरूपता क्यों नहीं देख सकते ? हट जाओ। मेरे आगे से हट जाओ। मैं तुम्हारे इस कंकाल को नहीं देख सकती। तुम······

पर वह कह न सकी उसका उत्तर था सिर्फ 'हाँ' जिसमें उसने झूठ कह कर अपने मन के सत्य को छिपा लिया था।

तट पर आ कर दोनों ने कपड़े पहने। खाने के लिए वे साथ ही कुछ ले आये थे। थर्मस में जल भी था। कपड़े बदल कर वहीं रेत पर बैठ कर खाने का उपक्रम करने लगे। एलिजाबेथ ने एक सूखे तौलिये पर खाना लगाया। जीवन की प्रिय मिठाइयों और साग-पूरी की व्यवस्था थी। पर एलिजाबेथ की उदासी में उसे कुछ भी अच्छा न लगा। दूसरे उसका शरीर आज आवश्यकता से अधिक थक कर विश्राम की कामना करने लगा था। मन्द ज्वर शरीर तोड़ने लगा था। तिसपर एलिजा की चुप्पी और भी अखर रही थी। आखिर उसने पूछा, "तुम चुप क्यों हो गयी एली।"

एली ने उसकी ओर देखे बिना प्रश्न किया, "तुम मुझ से प्यार करते हो जीवन।"

"हाँ," जीवन का उत्तर था।

"मैं तुम्हें अच्छी लगती हूँ जीवन ?" एलिजाबेथ ने पूछा।

"चाँद की चाँदनी से भी मधुर," जीवन ने प्रणयी की भाँति कहा।

एलिजाबेथ विदग्ध स्वर में बोली, "पर अगर मेरी आँखें बुझी-बुझी हों, मुँह मेरा पीला-पीला हो, बदन की मेरी एक-एक हड्डी चमकती हो, छाती पर माँस न हो, हाथ पैर सूखे-सूखे हों, बोलो तब भी करोगे प्यार मुझे ? तब भी चाहोगे मुझे अपने अन्तर में समा लेना ?······"

जीवन न तो उसका आशय समझा और न ठीक उत्तर ही सोच सका। उसने पीड़ित स्वर में पुकारा, "एलिजा।"

वह बोली, "मत करो मुझे प्यार। तुम्हारे प्यार से मुझे डर लतगा है। तुम धोखा देने वालों में से हो। तुम मुझे बर्बाद करना चाहते हो।"

"एली," जीवन को व्यथा ने झकझोर डाला था। "ऐसा तुम क्यों कहती हो ? कैसे कहती हो ? मैं तुम्हारी इच्छा के लिए मर सकता हूँ। बोलो कैसे तुमने मान लिया कि मैं धोखा दूँगा।"

एलिजाबेथ ने कहा, "तुम खुद क्यों नहीं सोच सकते। तुम अवश्य ही मेरे लिए मर सकते हो। पर मैं चाहती हूँ कि तुम जीओ। जीवन मुझे तुम्हारी जिन्दगी चाहिए अपनी जिन्दगी के सुख के लिए। पर तुम जीना नहीं चाहते। बोलो तुम्हारे इस कंकाल को देख कर कैसे उम्मीद करूँ कि तुम मजबूत सहारा हो। तुम्हें पा कर मैं धोखा न खाऊँगी।"

जीवन के पास इसका उत्तर न था। उससे बैठा न रहा गया। वह रेत पर लेट गया। धूप तेज लग रही थी। रेत भी गर्म होने के कारण अधिक सुखद न था। उसने अनुभव किया कि एलिजाबेथ की बात में सच्चाई है। एक दूसरे के इतने करीब आ कर आखिर कहीं रुकेंगे तो। कोई सम्बन्ध तो चाहिए ही। पर क्या यह शरीर इस योग्य है कि…जीवन की आँखों के सामने सुगठित बदन की एलिजाबेथ बैठी थी और उसका अपना दाहिना हाथ गले की मोटी हड्डी को रगड़ रहा था। थोड़ी देर चुप रह कर उसने धीमें स्वर में कहा, "मुझे खुद को तुम से दूर रखना चाहिए एलिजा। तुम सच कहती हो।"

एलिजाबेथ पीड़ा से हार कर आँखों में आँसू भर कर बोली, "बस यही है एक तुम्हारे पास समाधान। तुम सिर्फ मर सकते हो। सिर्फ दूर रह सकते हो। पर स्वस्थ हो कर मुझे अपने सम्पर्क का सुख नहीं दे सकते। जीवन, तुम जीने की बात क्यों नहीं करते। बोलो, तुम इतने पत्थर क्यों हो ?"

उसके बाद एलिजा खूब रोई। जीवन ने स्वस्थ रहने का बार-बार वचन दिया। इलाज कराने की प्रतिज्ञा की। अगर इलाज के लिए वह अपनी कमाई में से नहीं बचा पायगा तो एलिजाबेथ से बेहिचक रुपया लेगा। जो जो एलिजा ने कहा वह वह उसने स्वीकार किया। तब जा कर एलिजाबेथ को तसल्ली हुई। विश्वास का आधार पा कर मन की खुशी लौट आयी। वह बोली, "जीवन तुम मुझे जिन्दगी का सब से बड़ा सुख दे सकते हो। अब मैं तुम से अलग अपने बारे में कुछ नहीं सोचती। पर तुम ? तुम सिर्फ अपने प्यार के

बारे में सोचते हो। पर खुद को मिटा कर तुम किसी का भी तो भला न कर पाओगे।"

उस दिन रात को जीवन अनेक दृढ़ संकल्पों के साथ सुखी-सुखी एलिजाबेथ से अलग हो कर घर लौटा। उसने स्वीकार कर लिया कि एलिजाबेथ उसके जीवन की बहुत बड़ी सार्थकता हो सकती है अगर वह खुद अपनी शरीर-रक्षा कर सके। रोना, हँसना, मिलना, मान करना सभी कुछ तो दिन में हुआ था। पर इस सब कुछ का समग्र प्रभाव बड़ा ही सुखद था। उसी सुख की कल्पना में मगन वह चाल पर आया। दुकान पर गल्ले वाली चौकी पर उदास किरपा बैठा था। रामदुलारे पटरी पर खाट डाल कर हाथों में सिर थामे बैठा था। उसने जीवन को देखा तक नहीं। उन सब को उदास देख कर जीवन ने पूछा, "क्या बात है किरपा।"

किरपा चुप रहा। रामदुलारे जीवन की आवाज़ सुन कर उठ खड़ा हुआ। जीवन के पास आ कर बोला, "क्या बताएँ भैया, हमारी तक़दीर ही उलट गयी।"

"कुछ बात तो बताओ," जीवन ने चिन्तित हो कर पूछा।"

वह बोला, "गाँव में ज़मीन को ले कर पट्टीदारों से एक मुकदमा चल रखा था। उसी मुकदमें के लिए यह दुकान गिरवीं रखकर कर्ज़ा लिया था। मुकदमा तो हम पाँच-छ: महीने पहले ही हार चुके थे। कर्ज़ देने वाला अब मानता नहीं। उसने कह दिया है कि तीन दिन में रुपये का इन्तजाम कर दो नहीं तो मैं दुकान पर कब्जा कर लूँगा।"

"कितना रुपया है ?" जीवन ने पूछा।

"पाँच सौ रुपया," उसने बताया।

जीवन के पास इस समय तीन सौ रुपये थे। पर वह उसमें से एक भी पैसा किसी को देने की सोच भी न सका था। रामदुलारे का एहसान उस पर थोड़ा न था। पर उसके ऊपर एक और बड़ी जिम्मेदारी थी। रामदुलारे कहता गया, "दुकान चली गयी तो बम्बई में हमारा कोई ठौर न रह जायगा।"

सचमुच चिन्ता की बात थी। न केवल रामदुलारे के लिए बल्कि जीवन के

लिए भी। पर वह उस समय उसे आश्वासन भी न दे सकता था। रात भर चिन्ता के मारे नींद ढंग से न आयी। दिन में समुद्र स्नान भी उसके लिए कुछ अधिक हितकर न हुआ था। ज्वर रात भर अपेक्षाकृत अधिक रहा। सुबह उठा तो उसका मुँह बकबका रहा था। मुँह में छाले पड़ गये थे और पेट अफरा हुआ था। नित्य की तरह उसने अपनी चर्या पूरी की। दफ्तर में पहुँचा। शरीर उसका साथ न दे रहा था। फिर भी गया। दफ्तर पहुँच कर हारा थका-सा अपनी कुर्सी पर बैठ गया। काम करने की प्रवृत्ति ही न हो रही थी जब कि काम काफी पड़ा था।

रमणीक उसे देख कर कुटिलता पूर्वक मुसकुराता हुआ बोला, "तुम्हारी तन्दुरुस्ती बेहद् बिगड़ चली है। सलाह मानो तो जुहू जा कर समुद्र में नहाया करो।"

जीवन उसका व्यंग्य समझ गया। पर उसकी समझ में नहीं आया कि रमणीक ने कैसे जान लिया। वह चुप रहा। रमणीक फिर बोला, खुश-किस्मत हो प्यारे। मौत भी मिलेगी तो हसीन की दी हुई।"

जीवन को बुरा लगा। फिर भी कड़ुवा घूँट पी कर रह गया। रमणीक अपनी कुर्सी उसके पास खींच लाया। हितैषिता दिखाता हुआ बोला, "बुरा मत मानो जीवन, मैं तुम्हारे भले की कहता हूँ। वह लड़की भली नहीं है।"

जीवन ने कुछ-कुछ गुस्से से पूछा, "किस लड़की की बात करते हो।"

"तुम से लड़की की बात करने को दो-चार थोड़े ही हैं," उसने सहज दुष्टता से कहा, "पर कहता हूँ भले की ही। तुम्हें चूँस कर गुठली की तरह फेंक देगी। देख लो न अभी से अपनी हालत। तुम्हारे जैसे जाने कितनों को उसने टी. बी. के अस्पताल में पहुँचा दिया है।"

जीवन गुस्से से भर उठा। उसने तीव्र स्वर में कहा, "बको मत रमणीक। मैं ऐसी बेहूदी बातें सुनने को तैयार नहीं।"

पर रमणीक तब भी नहीं डिगा। बिना उत्तेजित हुए बोला, "मैं कहता हूँ तुम्हें भी टी. बी. हो गयी है। तुम्हारा दफ्तर आना हम में से किसी के लिए अच्छा नहीं। मैं आज बॉस से कह भी दूँगा।"

"जरूर कहना," जीवन ने बिना घबड़ाये कहा।

रमणीक ने जैसा कहा वैसा ही किया। नीली भी जीवन से चिढ़ने लगी थी। उसने भी बॉस से भली-बुरी शिकायत की। सोफिया मेहरा को इससे जैसे कोई वास्ता न था वे अलग ही रहीं। बॉस ने जीवन को बुला कर कहा, "तुम्हारे खिलाफ बहुत-सी शिकायतें हैं, पर मुझे उन सबसे कुछ नहीं लेना-देना। अपने सुख-दुख के जिम्मेदार तुम खुद हो। फिर भी एक बात पर मुझे गौर करना ही होगा। रमणीक कहता है कि तुम्हें टी. बी. है। मैं ऐसी हालत में तुम्हारा यहाँ काम करना ठीक नहीं समझता।"

जीवन ने दृढ़ स्वर में कहा, "वह झूठा है।"

"तुम्हें देखता हूँ तो वह मुझे सच्चा जान पड़ता है।" बॉस ने गम्भीर स्वर में कहा, "तुम्हारी सच्चाई तुम्हारे चेहरे से जाहिर नहीं होती। तुम अभी दफ्तर से जाओ। मैं तुम्हें परेल के बड़े अस्पताल के डाक्टर के नाम एक खत देता हूँ। वह मेरा दोस्त है। उसे जा कर तुम दिखा दो। वह तुम्हारा एक्सरे आज ही कर लेगा। अगर वह तुम्हें इस बात का सर्टीफिकेट दे दे कि तुम्हें वैसी कोई बीमारी नहीं तो मुझे तुम्हें रखने में कोई एतराज़ न होगा।"

जीवन ने स्वयं को अपमानित अनुभव किया। बोला, "मैं तैयार नहीं। आप मुझे निकालना ही चाहते हैं तो निकाल दीजिए।"

बॉस ने उत्तेजना का निग्रह करके कहा, "बचपना मत करो। मेरा कहा करने में तुम्हारा कोई नुकसान नहीं। बीमार तुम हो ही। डाक्टर को दिखाना किसी भी तरह बुरा नहीं है।"

आखिर जीवन उसका परिचय लेकर परेल के बड़े अस्पताल के डाक्टर बाटलीवाला से मिला। वह श्वेत केश पारसी डाक्टर था। उसने खत पढ़ते ही जीवन को अपने कमरे के भीतर बुलाया। जीवन की उसने पहले शक्ल सूरत देखी। फिर वह उसे डायग्नोसिस रूम में ले गया। उसे टेबुल पर लिटा कर उसने उसकी नाड़ी देखी। स्टेथेस्कोप से फेफड़ों की जाँच की। टेम्परेचर लिया। जाँच करते-करते डाक्टर चिन्ता में पड़ गया। बोला, "तुम्हारा एक्सरे जरूरी है। यह बुखार तुम्हें कब से रहता है।"

जीवन ने बताया, "कुछ पता नहीं। मेरा तो कभी इस ओर ध्यान ही नहीं गिया।"

डाक्टर ने गम्भीरता पूर्वक 'हूँ' किया। अपने एसिस्टेंट को बुला कर उसे स्क्रीनिंग करने को कहा। उसने जीवन से और भी बहुत से सवाल किये। फिर एक्सरे मशीन के सामने ले जा कर उसकी छाती, पीठ, पेट वगैरा की स्क्रीनिंग की। स्क्रीनिंग के बाद डाक्टर ने जीवन को बाहर भेज दिया, अपने एसिस्टेंट से कुछ बातें की। अन्त में निराशा के साथ बोला, "टी. बी. हो गया है। बचेगा नहीं। हमारे मुलुक के नौजवानों को यह टी. बी. खत्म कर देगा। कुछ होना चाहिये। कुछ होना चाहिये।"

वृद्ध डाक्टर बड़बड़ाता बाहर आया और एक चिट पर कुछ लिख कर जीवन को दे कर कहा, "यह मिस्टर अग्रवाल को दे देना। तुम्हें अच्छे इलाज की जरूरत है। तुम्हें पहाड़ पर जाने से फायदा होगा! फिकर मत करना। पर इलाज जल्दी होना माँगता है। जाओ।"

जीवन ने काँपते हुए हाथों से वह चिट ली। डगमगाते पैरों से बाहर आया। चिट को बार-बार पढ़ा। उसमें भी वही लिखा था। उसकी आँखों तले अंधेरा छा गया। 'टी. बी.' उसे लगा कि मौत अब हरदम उसके साथ रहती है।"

एक बार तो मन में आया कि दफ्तर न जाये। जा कर क्या करेगा? पर आधे महीने की तनख्वाह बाकी थी। उसी लोभ में वह दफ्तर आया। बॉस ने चिट पढ़ कर खेद के साथ कहा, "आई एम एक्स्ट्रीमली सॉरी। मिस्टर जीवन मुझे बेहद तकलीफ हुई यह जानकर। मैं सोचता हूँ अब तुम्हें आराम और इलाज की जरूरत है।"

उसने जीवन का हिसाब कर दिया। जीवन ने जेब में पन्द्रह दिन की तनख्वाह रख कर दफ्तर से बिदा ली। सोफिया मेहरा ने हमदर्दी जाहिर की। नीली चुप रही। रमणीक की आँखों में वैसी ही दुष्टता झलकती रही। उसने भी जीवन से कुछ कहा, पर जीवन ने ठीक से सुना नहीं। वह सीढ़ियों से उतर कर पटरी पर आया। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें। उसे बेहद कमजोरी महसूस हो रही थी! जब से उसे टी. बी. का पता चला वह अधिक हार-सा गया था। वह आराम की जरूरत महसूस कर रहा था। ऐसी हालत में वह अखबार के दफ्तर में भी क्या काम कर सकेगा, उसकी

समझ में नहीं आ रहा था। उसे अपने चारों ओर अन्धेरा ही अन्धेरा दिखाई दे रहा था। अभाव अन्धेरे में भी आँखें फाड़-फाड़ कर उसे घूर रहा था। उसके सिर में चक्कर-सा आया। वह पटरी पर ही माथा थाम कर बैठ गया। आने जाने वालों ने उसकी कोई चिन्ता नहीं की। शाम का चार बज चुका था। वह फिर उठा। यह निश्चय ही नहीं कर पाया कि किधर जाय। चाल···चाल भी अब कितने दिन की। उसके बाद··· उसके बाद···जीवन घबड़ा उठा। टी. बी. के मरीज़ तो आरामदेह अस्पतालों में रहते हैं। पहाड़ों पर रहते हैं। फलों का रस पीते हैं। पर मैं···

जीवन को एलिजाबेथ याद आयी ! इतनी बड़ी बम्बई में वही उसे सहारा दिखाई दे रही थी। पर उसे इस समाचार से कितना सदमा होगा ! नहीं उसे भी नहीं बताना चाहिए। क्या फायदा। पर, पर···फिर क्या करे। किसे बताये। किसका सहारा ले। दिनेश। नहीं दिनेश नहीं। वह अपनी मुसीबतों में फँसा है। दिनेश नहीं। पर एलिजा भी क्यों ? क्यों उसे अपनी मुसीबतें दे।

इसी तरह सोचते-सोचते वह चर्च गेट स्टेशन पर आया। लोअर परेल स्टेशन का टिकट लिया। वहाँ पहुँच कर वर्ली जाने वाली बस में बैठा और एलिजाबेथ से मिलने चल दिया। बस से एक जगह उतरा। पूछते-पूछते पैदल जवेरी की कोठी तक आया। इससे पहले वह कभी इस कोठी पर न आया था। हिचकिचाता हुआ फाटक पर पहुँचा। दरबान से पूछा। वह उसकी मनहूस-सी सूरत को घूरने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसे किसी आदमी से भी उस मेम का कोई सम्बन्ध हो सकता है। तभी कमरे की खिड़की से एलिजाबेथ की निगाह जीवन पर पड़ गयी। वह दौड़ी-दौड़ी बाहर आयी। जीवन को अचानक देख कर उसे खुशी ही हुई। मुसकुराती हुई बोली, "खूब आये। मैं तुम्हें याद कर ही रही थी ! जाने क्यों ? चलो, भीतर चलो।"

इतना कह कर एलिजाबेथ उसे अपने कमरे में ले आयी ! कमरा बहुत सादा था और बहुत थोड़ा सामान उसमें था। एक लोहे की खाट, एक छोटी मेज, तीन कुर्सियाँ और खाट के नीचे रखे सन्दूक के अलावा वहाँ थोड़ी-सी

किताबें थीं जो शेल्फ पर रखी थीं और कुछ कपड़े थे जो खूँटियों पर टंगे थे। कमरे में घुसते हुए उसने कहा, "तुम सोचते होगे कि इतनी बड़ी कोठी है और मैं जाने किस ऐस आराम से रहती होऊँगी। पर मेरा कमरा सिर्फ यह है। दूसरे की कोठियों में मैं सपने नहीं संजोती! मेरे सपनों की कोठी तुम बनाओगे।"

पर उस समय जीवन को उसका सपना पीड़क ही लगा। वह तो उसे स्वप्न-भंग की बात सुनाने आया था। पर कैसे कहे। चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया। एलिजाबेथ ने उसके आने की वजह भी नहीं पूछी। वह अपनी खुशी का ही इजहार करती रही। कल की मधुर स्मृतियों को दोहराया। जवेरी की बातें की। उसके बड़े लड़के की, बड़ी बहू की! छोटे लड़के की, उसकी बहू की। छोटी बहू की बहुत-सी तारीफ कर डाली। बताया कि उसमें नाम को अभिमान नहीं। बड़ी मिलन सार है। मुझ से बहन-सा व्यवहार करती है। जरूरत पड़ती है तो मेरे कमरे में ही चली आती है। मैं बहुतेरा कहती हूँ कि यह मुझे अच्छा नहीं लगता। नौकर भेज कर मुझे बुला लिया करो। पर वह नहीं मानती। वह कोठी के ऊपर वाले हिस्से में रहती है।

तभी कमरे की ओर आती हुई एक मीठी आवाज सुनाई पड़ी, "मिस एलिजाबेथ।"

जीवन का चिरपरिचित स्वर था! एलिजाबेथ बोली, "अरे लो वे आ ही गयीं।"

इतने में पैरों की आहट भी स्पष्ट हो गयी और दूसरे ही क्षण दरवाजे में एक खूबसूरत युवती दिखायी दी। चेहरा उसका कमल-सा खिला था। जीवन ने देखा। प्रत्यय न हुआ। क्या सरिता? उसने चट से अपना मुँह फेर लिया। खिड़की से बाहर गेट पर खड़े चौकीदार को देखने लगा। एलिजाबेथ को उसके संकोच से खुशी हुई। सरिता जीवन को पहचान न सकी थी। वह कुछ और कहना चाहती थी पर जीवन को देख कर पूछ बैठी, "ये कौन हैं।"

एलिजाबेथ ने प्रफुल्ल हो कर कहा, "मिस्टर जीवन। मेरे दोस्त।"

फिर जीवन को सम्बोधित करती हुई बोली, "मिस्टर जीवन इनसे मिलो। ये छोटी रानी हैं। मेरी मालकिन।"

जीवन को विवश हो कर सरिता की ओर घूमना पड़ा। सरिता की दृष्टि उसके मुख पर पड़ी। वह अवाक् रह गयी। जीवन की आँखें जमीन में धँस जाना चाहती थीं। हृदय जाने कैसी वेदना अनुभव कर रहा था। सरिता भी हठात् कह उठी : "जीवन तुम !"

एलिजाबेथ ने सुना, वह चकित रह गयी। उसने सरिता के मुख की ओर देखा। वह वेदना से क्षण भर में झुलस-सा गया था। उसकी समझ में कुछ न आया। वह कभी सरिता को देखती, तो कभी जीवन को। और फिर जाने क्या सोचकर वह कमरे के बाहर चली गयी।

जीवन बेहद कमजोरी अनुभव कर रहा था। वह कुर्सी पर बैठ गया। सरिता ने स्नेह भीने स्वर में पूछा, "तुम बीमार थे जीवन।"

जीवन ने अपनी बीमारी के बारे में कुछ न कह कर पूछा, आप तो प्रसन्न हैं। स्वस्थ हैं।"

सरिता को यह 'आप' खला। बोली, "मैं स्वस्थ हूँ। हँसती बोलती हूँ। इसलिए मुझे प्रसन्न ही कहा जा सकता है।"

"आपने शादी कर ली ?" जीवन फिर एक व्यर्थ-सा प्रश्न कर गया।

सरिता ने हँसने का विफल प्रयास करते हुए कहा, "यदि मैं कहूँ कि 'नहीं' तो क्या तुम्हें खुशी होगी ?"

जीवन बोला, "मुझे सच जान कर खुशी होगी। आपके पति अच्छे तो हैं। प्यार तो खूब करते हैं।"

सरिता ने कुछ तिक्त स्वर में कहा, "तुम मुझ से पहले की तरह क्यों नहीं व्यवहार कर सकते। यह आपकी दीवर मुझे नापसन्द है।"

जीवन ने उसी तरह कहा, "अब आप एक भले आदमी की पत्नी हैं।"

"भूलते हो जीवन," सरिता ने दर्द के साथ कहा, "मैं पत्नी, अच्छी पत्नी कभी नहीं हो सकती। तुम जानते हो। मैंने तुम से कभी कुछ नहीं छिपाया।"

"फिर भी तुमने शादी कर ली।" जीवन ने व्यंग्य किया।

वह बोली, "इस से इन्कार नहीं कर सकती। शायद यह शादी करके मैंने उस पुरुष से बदला लिया है जो मेरी उपेक्षा करता रहा है। शायद यह शादी करके मैं उन सभी पुरुषों से बदला ले सकूँगी जो स्त्री की विडम्बना को

नहीं समझते। तुमने मुझ से यह तो पूछा कि क्या मेरे पति अच्छे हैं। प्यार करते हैं। पर यह नहीं पूछा कि मैं भी क्या उन्हें प्यार करती हूँ। प्यार के लिए मन देना पड़ता है। तन देना आसान है। तन दिया जा सकता है। एक को नहीं अनेक को दिया जा सकता है। मैंने तन ही दिया। और पुरुष इससे अधिक चाहता भी क्या है। जब तक स्त्री उसे तन देती रहती है वह समझता है कि वह उसे प्यार कर रही है। वह खुद उसके तन को, उसकी खूबसूरती को, अपनी वासना को प्यार करता है। पर स्त्री तन दे कर भी नफरत कर सकती है। जीवन मुझे अपने पति से प्यार नहीं है। मैं उन्हें नफरत करती हूँ। आज नफरत तुम से भी करना चाहती हूँ। तुम भी मुझे नहीं समझ रहे हो।"

जीवन ने धीरज के साथ उसके उद्‌गार सुने। फिर अविचलित भाव से बोला, "तुम्हारी बातों में सचाई कम है सरिता। तुम उन बातों के प्रति सच्ची हो सकती हो। पर सचाई जो तुम्हारे सोचने के ढंग से विलक्षण है, उनमें मुझे नहीं दिखाई दी। तुम या तो झूठ बोल रही हो, या खुद को धोखा दे रही हो।"

सरिता बोली, "तुम इल्जाम लगा सकते हो। मैं जबाब नहीं दे सकती। किसी स्त्री के पास पुरुष के लगाये इल्जाम की सफाई नहीं होती।"

जीवन ने उसकी उस बात का उत्तर देना जैसे अनावश्यक समझा। बोला, "एलिजाबेथ नहीं दिखाई देती कहाँ चली गयी ?"

"तुम्हारा उससे परिचय कैसे हुआ।" सरिता ने पूछा।

"यह तो पूछने की बात नहीं।" जीवन बोला, "परिचय जब होना होता है तो हो ही जाता है। तुम से ही देखो हो गया था। कभी कल्पना भी न की थी! उसे बुलाओ तो, मुझे जाना है।"

सरिता कुछ कोमल हो कर बोली, "वह आती ही होगी। पर तुमने अपने बारे में कुछ नहीं बताया। बस लड़ते ही रहे। तुम तो ऐसे न थे। तुमने यह हालत क्या कर डाली। तुम्हें देख कर रोना आता है। तुम ऐसे कितने दिन जिओगे। घर पर तो सब ठीक हैं।"

जीवन ने निराशा भरी आँखों को ऊपर उठाया। फिर सरिता को देखता

हुआ बोला, "अपने बारे में बताने को मेरे पास कुछ नहीं। अभावों की लड़ाई में मैं हार गया हूँ, बस यही कह सकता हूँ। जब ज्यादा अच्छे की सम्भावना ही नहीं तो जो कुछ है उसी को अच्छा कह सकता हूँ। मैं अच्छा हूँ। मेरे घर वाले अच्छे हैं। सभी कुछ अच्छा है।"

सरिता के मुँह से एक सर्द आह निकल गयी। तभी एलिजाबेथ कमरे के भीतर चली आयी। उसने दरवाजे के पास खड़ी हो कर इन दोनों की बातें सुनी थीं। जीवन उसे देख कर बोला, "एली, तुमने नहीं पूछा कि मैं क्यों आया हूँ? मैं तुमसे विदा लेने आया हूँ।"

सरिता और एलिजाबेथ दोनों को दर्द हुआ। सरिता को इसलिए कि जीवन उसे आप कहता है और उस अनजानी ईसाई लड़की को 'एली'। एलिजाबेथ को इसलिए दर्द हुआ कि शायद जीवन सरिता की वजह से अब उससे दूर जा रहा है। उसने पूछा, "मैं समझी नहीं, कल तक तो ऐसी कोई बात न थी।"

"बात होते भी भला देर लगती है," जीवन ने ये शब्द तो एलिजाबेथ से कहे पर आँखें उसकी हठात सरिता की ओर उठ गयी। सरिता अब तक एलिजाबेथ के पलंग पर बैठ चुकी थी। एलिजाबेथ एक कुर्सी की पीठ पकड़े जीवन के सामने खड़ी थी।

सरिता के मन में आया कि उठ कर चली जाये। पर जीवन के पास कोई रहस्य है, जिसे वह अभी-अभी उद्घाटित करेगा, इस लोभ में वह रुकी रह गयी। एलिजाबेथ चुप ही थी। जीवन ने गले को खंखार कर कहा, "एली मैं बम्बई से जा रहा हूँ। बम्बई में आज मेरे पास छत नहीं रही। मेरे पास नौकरी भी नहीं रही। अखबार की जो नौकरी है उसे अब शायद निभा न पाऊंगा। इसी से सोचा कि बम्बई छोड़ दूँ।"

एलिजाबेथ उसकी अखबार की नौकरी से परिचित न थी। बोली, "अखबार की कैसी नौकरी।"

जीवन ने अपराधी की तरह कहा, "मैंने तुम्हें उसके बारे में नहीं बताया था। एक अखबार में रात को काम करता था।"

एलिजाबेथ ने चकित हो कर पूछा, "रात में भी तुम नौकरी करते रहे। दिन और रात की नौकरियाँ साथ-साथ।"

"क्या करता," वह बोला, "मुझे रुपए की जरूरत थी। बिना काम लिये कोई देने को तैयार न था।"

एलिजाबेथ ने दर्द के साथ कहा, "तुमने आत्महत्या की है।"

जीवन ने हँसने की कोशिश की पर तभी उसकी दृष्टि सरिता की दृष्टि से टकरा गयी। उसकी आँखों से आँसू गिर रहे थे। जीवन को उन आँसुओं से सुख मिला। वे धाराओं में फूट पड़ते तो और भी सुख मिलता। उसकी ओर से दृष्टि हटा कर एलिजाबेथ से बोला, "जब आत्महत्या ही जरूरत हो जाए तो क्या ? खैर अब तो मेरी एक नौकरी जाती ही रही दूसरी भी न कर पाऊँगा।"

एलिजाबेथ ने कुतूहल के साथ पूछा, "पर अग्रवाल इम्पोर्टर्स से तुम कैसे अलग हो गये।"

"अलग कर दिया गया।" जीवन ने फीकी हँसी के साथ कहा।

"क्यों ?" उसने पूछा, मन में जाने कैसी आशंकाएं घुमड़ रही थीं।

जीवन ने फिर सरिता की ओर देखा और उसकी ओर से आँखें हटाये बिना कहा, "वे टी. बी. के रोगी को अपने यहाँ रखने को तैयार नहीं।"

एलिजाबेथ पागल-सी बोल उठी, "कौन कहता है कि तुम्हें टी. बी. है। तुम सिर्फ कमजोर हो। ढंग का खाना नहीं मिलता। मन को शान्ति नहीं। तुम्हें टी. बी. कहने वाला झूठा है।"

जीवन ने सहज स्वर में कहा, "नहीं एली। इसमें झूठ कुछ नहीं। डाक्टर बाटलीवाला ने डायग्नोसिस करके बताया है।"

सरिता और एली के चेहरे जर्द पड़ गये। जीवन ने कहा, "बस मैं आज ही चला जाऊँगा। अखबार से कुछ रुपया लेना है। आज न भी मिला तो बाद में आता रहेगा। जब से मुझे टी. बी. का पता चला जाने क्यों मुझे घर याद आ रहा है। लोग कहते हैं 'मरना भला बिदेश को' पर मैं घर से दूर नहीं मरना चाहता। मेरी भाभी के पास मेरे इलाज को पैसा न होगा। पर प्यार और इज्जत के साथ वे मुझे जला तो सकेंगी।"

सरिता को लगा कि उसका दिल टुकड़े-टुकड़े हो जायगा। उसने कहना चाहा कि जीवन मैं तुम्हे जाने न दूंगी। तुम्हें मैं अपने साथ पहाड़ ले जाऊँगी। मैं तुम्हारा इलाज करूँगी। पर कह न सकी। एम. ए. में पढ़ने वाली सरिता

और विवाहित सरिता में एक भारी अन्तर आ गया था। पर एलिजाबेथ वही थी। वही जो जीवन को अपने लंच में हिस्सा देती आयी थी। वही जो जीवन के इलाज के लिए अपनी आधी तनख्वाह भी एक बार दे चुकी थी। और वही आज बोली, आसुओं से भर कर बोली, "नहीं जीवन, मैं तुम्हें अपने पास रखूँगी। मैं तुम्हारा इलाज करूँगी। पहाड़ ले जाऊँगी। मेरे पास रुपया नहीं, पर मैं वहाँ भी तुम्हारे लिए नौकरी करूँगी।"

जीवन ने कृतज्ञ हो कर कहा, "एली, तुम्हारे एहसान मैं कभी न भूलूँगा। तुम दुख न मानो।"

"जीवन," वह हिचकियाँ लेती हुई बोली, "तुम यह क्यों भूल जाते हो कि इतनी बड़ी धरती पर आत्मीयता का नाता मैंने सिर्फ तुम से जोड़ा है। तुम उसे आज तोड़ने चले हो।"

जीवन के हृदय में एक आवेग उठा जो आँसुओं में बहने को पिघलने लगा। पर उसने किसी तरह खुद को सम्हाला। कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ। बोला, "अब मुझे इजाजत दो। आज मुझे चले ही जाना चाहिए। एली, मुझे बाँधो मत। मौत जिन्दगी से कभी नहीं बँध सकी। मुझे जाने दो। एहसान मन्द की तरह जाने दो।"

इतना कह कर उसने सरिता की ओर देखा और हाथ जोड़ कर कहा आप भी मुझे आज्ञा दें। मैं आपके सुख की कामनाओं के साथ जा रहा हूँ।"

इसके बाद जीवन वहाँ न रुका। उसने नहीं देखा कि सरिता पर कैसी बिजली गिरायी है। उसने नहीं देखा कि कि उसने एली को कैसे तोड़ दिया है। वह तेजी से फाटक से बाहर आया। उसी तेजी से सड़क पर चलता रहा। कुछ ही दूर जाने पर तेज चलने के कारण कलेजे में दर्द उठने लगा। उसकी चाल धीमी पड़ गयी'''दर्द बढ़ा। उसने कलेजे पर हाथ रखा। दर्द कुछ और तीव्र जान पड़ा। फिर जब दर्द अपने आप मन्द पड़ा तो वह उठा और धीरे-धीरे बस स्टैंड की तरफ चल दिया।

उसके जाने के बाद न एलिजाबेथ ने सरिता की ओर देखा और न सरिता ने एलिजाबेथ की ओर। एलिजाबेथ खिड़की से फाटक की तरफ देखती रही और सरिता धीमे से उठ कर अपने कमरे में चली आयी।

रात को जीवन एक्सप्रेस छूटने से काफी पहले स्टेशन पहुँच कर तीसरे दर्जे के एक डिब्बे में बैठा था। उसके पास वही बिस्तर और वही बक्सा था जो उसे भाभी ने बम्बई आते हुए दिया था। उन्हीं को ले कर वह लौट रहा था। छाती की जेब में तीन सौ से कुछ अधिक रुपए थे। वह बार-बार उन रुपयों को सम्हाल लेता। बिस्तर उसने सीट पर खोल लिया था और बक्सा सिरहाने की तरफ लगा लिया था। निगाह उसकी ज्यादातर खिड़की से बाहर प्लैटफार्म पर घूमती रही। जैसे किसी की प्रतीक्षा हो। धीरे-धीरे गाड़ी छूटने का वक्त हो आया। निगाहें थक कर प्लैटफार्म से डब्बे में चली आयी। फिर थोड़ी देर बाद गाड़ी ने सीटी दी। अंजन की सूँ-सूँ की आवाज़ तेज हुई। डिब्बों में एक धक्का-सा लगा। अंजन छुक-छुक करता हुआ चल पड़ा। गाड़ी प्लैटफार्म पर से सरकने लगी। जीवन की दृष्टि फिर प्लैटफार्म के बाहर जा पड़ी। उसने देखा एलिजाबेथ प्लैटफार्म पर दौड़ी-दौड़ी आ रही थी। जीवन ने खिड़की के बाहर गर्दन निकाल कर हाथ दिखाया। पर एलिजाबेथ उस हाथ को देख ही न सकी। दौड़ती हुई गाड़ी की बहुत-सी खिड़कियों से बीसों हाथ निकले हुए थे। जीवन ने पुकारना चाहा, 'एली।' पर पुकार छाती में ही बन्द रह गयी। एलिजाबेथ जीवन को देख ही न सकी। गाड़ी आँखों से ओझल हो गयी। उसके हाथों में टिफन का छोटा-सा डिब्बा था। वह शिथिल हाथों से छूटने की चेष्टा करने लगा।

जीवन हारा-सा सीट पर लेट गया। एलिजाबेथ दौड़ते हुए कितनी सुन्दर लग रही थी। बाल उड़ रहे थे। स्कर्ट फड़फड़ा रहा था। वक्ष मनोहर ढंग से उठ गिर रहा था। और इस समय दौड़ती हुई गाड़ी में उसका रूप जीवन को दर्द ही दे रहा था। उसने उसकी ओर से अपनी चेतना को समेटा। घर की याद की। थेगली लगी हुई मैली धोती में भाभी दिखाई दीं। मैले उलझे हुए बालों की लट अंगुली में लपेटती हुई लकड़ी की चिड़ियाओं के सहारे चलती हुई। दुमकटे कुत्ते में व्यस्त। उसे अपनी बीमारी का ख्याल आया। साथ ही हाथ छाती की जेब पर पहुँच कर रुपयों की सुरक्षा के लिए विकल हो उठा। कहीं खिड़की से झाँकते गिर न गए हों। रुपयों को यथा स्थान पा कर तसल्ली हुई। जीवन को इस समय सब से प्यारे और अपने वे रुपये

ही लगे। 'तीन सौ बत्तीस रुपए' उसने होंठों ही होंठों में कहा। यह उसके जीवन की कीमत थी। तीन सौ बत्तीस रुपए, यह तमाम दौलत उसने बम्बई से बटोरी थी। तीन सौ बत्तीस रुपए, इनसे वह अपना घर भरने वालाथा। तीन सौ बत्तीस रुपए, इन्हें भाभी को दे कर वह मर जाना चाहता था। तीन सौ बत्तीस रुपए······

सोचते-सोचते तीन सौ बत्तीस के अंक ही उसके मस्तिष्क में रह गये। गाड़ी गरजती हुई दौड़ रही थी।